ॐ

स्वामी रामतीर्थ ग्रंथावली–भाग १३

शान्ति का उपाय

लेख व उपदेश

१३ वां भाग

स्वामी रामतीर्थ

रामतीर्थ प्रतिष्ठान

१४, मारवाड़ी गली, अमीनाबाद

लखनऊ—२२६०१८

स्वामी रामतीर्थ ग्रंथावली–भाग १३

शान्ति का उपाय

लेख व उपदेश

स्वामी रामतीर्थ

१३ वां भाग

प्रकाशक

रामतीर्थ प्रतिष्ठान

१४—मारवाड़ी गली, (अमीनाबाद)

लखनऊ–२२६०१८

१९८६

प्रकाशक :—

रामतीर्थ प्रतिष्ठान
१४ मारवाड़ी गली,
अमीनाबाद—लखनऊ

संशोधित मूल्य रु Rs.25/-.

मुद्रण-प्रक्रियायें मंहगी होने के कारण विवश होकर मूल्यों को संशोधित करना पड़ा है। कृपालु संरक्षक पूर्ववत अपना संरक्षण देते रहेंगे। —मंत्री

मुद्रक :
लखनऊ पब्लिशिंग हाउस
लखनऊ

विषय सूची

ॐ

भूमिका

हमें अपार हर्ष हो रहा है कि हम आज स्वामी रामतीर्थ जी महाराज के लेखों व उपदेशों का तेरहवाँ पुष्प हिन्दी में जनता के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं।

जो राम प्रेमी स्वामी राम की ज्ञानपूर्ण आध्यात्मिक कृतियों का ध्यानपूर्वक अध्ययन पहले भी कर चुके हैं वह तो राम के ही होकर रह गये और राम में ही रम गए, इसमें कोई अतिशयोक्ति या संदेह नहीं है। "हाथ कंगन को आरसी क्या", आप भी राम की कविताओं लेखों व व्याख्यानों को पढ़ कर उस आनन्द का स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

यहां राम के जीवन चरित्र पर कुछ लिखना कदाचित अनुचित न होगा। स्वामी रामतीर्थ जी २२ अक्तूबर सन् १८७३ में मुरालीवाला गाँव, जिला गुजरानवाला में (जो अब पाकिस्तान में है) इस पृथ्वी पर अवतरित हुए। इनके पिता का नाम गोसाई हीरानन्द जी था और उनकी माता का नाम निहालदेवी। स्वामी जी का घर का नाम तीर्थराम था जो सन्यासी हो जाने पर रामतीर्थ हो गया था।

तीर्थराम के पिता गोसाईं हीरानन्द जी एक प्राचीन घराने के परम्परागत पुरोहित थे। उनके पूर्वजों में एक बहुत बड़े

महात्मा तुलसीदास जी हुए हैं जिनकी गद्दी गढ़ी कपूरा, जिला मर्दान में थी। इस गद्दी को माथा टेकने के लिए उनके शिष्य हज़ारों की संख्या में मालकुण्ड, स्वात, चकदरा, पेशावर, और काबुल के आस-पास के क्षेत्रों से आया करते थे। लगभग २०० वर्ष पूर्व किसी कारण से गोसाईं जी के पूर्वज, गढ़ी कपूरा से उठकर मुरालीवाला गांव में आकर बस गए। तब से यह लोग मुरालीवाला में ही रहते चले आये थे। आसपास के क्षेत्र में गोसाईं हीरानन्द का बड़ा आदर व सम्मान था। यह साल में एक या दो बार भारत के उत्तर पश्चिमी प्रान्त में अपनी प्राचीन गद्दी के शिष्यों के घराने के लोगों को अपने दर्शन देने जाते रहते थे। और उन लोगों की भेंट व चढ़ावे की आमदनी से अपने परिवार का निर्वाह करते थे। देश के बंटवारे के पश्चात् इनके परिवार के लोग इधर-उधर पृथक्-पृथक् राज्यों में बिखर गए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोसाईं तीर्थ राम एक बहुत बड़े धार्मिक घराने में पैदा हुए थे इसीलिए वे अपने शैशवकाल से ही अत्यधिक ईश्वर भक्त व धर्म परायण प्रवृत्ति के थे। वे पढ़ने लिखने में बहुत परिश्रमी, प्रखर और मेघावी बालक थे। गांव की पाठशाला, ज़िला स्कूल तथा कालेज की प्रत्येक परीक्षा में वे सदा प्रथम आते रहे। अत्यन्त ग़रीबी में छात्रवृत्ति द्वारा और ट्यूशन इत्यादि करते रहने पर भी उन्होंने लाहौर के ओरिएन्टल कालेज से गणित में सन् १८९५ में एम० ए० पास कर लिया और उसमें भी वे प्रथम ही रहे।

जब वह गुजरानवाला हाईस्कूल में पढ़ने के लिए गए तो

उनको भक्त धन्नाराम जी की संरक्षता में रहना पड़ा। ये भक्त

जी बड़े धर्म परायण संत थे। उनके सम्पर्क में रहने से तीर्थराम पर धन्नाराम जी की भक्ति का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वे श्रीकृष्ण जी की भक्ति में पग गए। तत्पश्चात लाहौर में जब वह कालेज में अध्ययन कर रहे थे उनको द्वारकामठ के श्री शंकराचार्य की सेवा करने का तथा उनके सत्संग का सुअवसर मिला। फलस्वरूप इनको उपनिषदों के अध्ययन का इतना शौक बढ़ गया कि रात-दिन उसी के आनन्द में डूबे रहने लगे और धर्म की सर्वोच्च सीढ़ी पर पहुंचकर अद्वैत वेदान्त की अनुभूति में खोए-खोए से हो गए। उन पर वेदान्त का ऐसा नशा चढ़ा कि जुलाई सन् १९०० में गणित की प्रोफ़ेसरी से त्यागपत्र के बाद माता-पिता घर-गृहस्थी को त्याग कर जनवरी सन् १९०१ में टिहरी के निकट सेठ मुरलीधर के बाग़ के नीचे गंगा में खड़े-खड़े अपना शिखासूत्र त्याग कर उन्होंने गेरूआ वस्त्र धारण करके सन्यास ले लिया और तीर्थराम से स्वामी रामतीर्थ बन गए।

ईश्वर की आश्चर्यजनक योजना के कारण १९०२ में धर्म प्रचार के लिए उनको भारत के बाहर भी जाना पड़ा। इस प्रकार वह चीन, जापान, अमरीका, जर्मनी, मिश्र इत्यादि देशों में गये जहाँ उन्होंने वेदान्त के अद्वैतवाद की उन्मुक्त गर्जना से ईसाइयों और अनेक कट्टर पन्थियों के दिलों को हिला दिया। इस प्रकार विदेशों में, विशेष कर अमरीका में, ढाई वर्ष सफलता-पूर्वक धर्मप्रचार के पश्चात दिसम्बर १९०४ में वह भारत वापस आये और उत्तर भारत के अनेक नगरों में धर्म प्रचार करते हुए वह १९०६ की गर्मियों में हिमालय की ओर एकान्त सेवन के लिए चले गए। सितम्बर के अन्तिम सप्ताह में वह टिहरी पहुंचे जहां १७ अक्तूबर १९०६ को उन्होंने महाराजा टिहरी

के सिम्लासू महल के नीचे भिलंग गंगा में दीपावली के दिन लगभग ग्यारह बजे जल समाधि लेकर केवल ३३ वर्ष की आयु में इस पार्थिव जीवन लीला को समाप्त कर दिया। इस संसार के माया मोह तथा धन दौलत और वैभव के मिथ्याभिमान में अंधे हुए तथा अज्ञान के अंधकार में भटकते हुये प्राणियों के विद्युत की नाईं भारत के क्षितिज पर छण भर को चमक कर, स्वामी राम तीर्थ केवल मार्ग प्रदर्शन करके इस ब्रह्माण्ड की असीमता में यकायक विलीन हो गये। उन्होंने तो अपना काम पूरा कर दिया किन्तु उनके बताये हुए मार्ग पर चलना हमारा सबका काम है।

स्वामी रामतीर्थ जहां कहीं ी गये वहाँ उनका मानो साक्षात ईश्वर की तरह का ही सम्मान हुआ। उनका तेजस्वी और सुन्दर चेहरा तथा उनकी भोली और मनमोहक मुस्कराहट और उनकी अनुपम तथा अपूर्व विद्वता और वेदान्त की जटिल गुत्थियों को सुलझाने की उदार और अनोखी युक्तियां सम्मोहन का सा प्रभाव डालकर सबको बर्बस अपनी ओर आकर्षित कर लेती थीं। अमरीका के ईसाई तो उनको साक्षात जिन्दा ईसा मसीह ही मानते थे और वैसा ही उनका आदर व सत्कार भी करते थे। मिश्र के मुसलमान उनकी सादगी और ईश्वर में अटलविश्वास देखकर उनमें हज़रत मुहम्मद साहब की रूह की अनुभूति करते थे। जापान के बौद्ध उनमें भगवान बुद्ध के त्याग और उनके सम्यक ज्ञान को देखकर फूले न समाते थे। हिन्दू तो आदि गुरू शंकराचार्य का अवतार ही मानते थे, जो धर्म संस्थापन के लिए पुनः भारत में अवतरित हुए थे।

स्वामी राम की वाणी में–मधुरता और ओज थी---उनका दृढ़ संकल्प, आत्म विश्वास, अटूट लगन तथा त्याग देखकर सब आश्चर्यचकित रह जाते थे। वह केवल शुद्ध धर्म प्रचारक ही न थे वरन् वह निर्भीक समाज सुधारक भी थे। वह समाज में छूत-अछूत, ऊंच नीच और सभी प्रकार के भेद भावना के विरोधी थे। स्त्रियों और दलित वर्ग के लोगों के कष्ट से वह दुखी हो जाते थे, वह सबको बराबर ही समझते थे---वह सबकी एकता का उपदेश देते थे।

वह आध्यात्मिक देशभक्त भी थे जिन्होंने ग़ुलामी को ललकारा भी था कि 'अपना लता पता, उठाकर मुक्त पुरुषों के देश, इस भारत से भाग'। उन्होंने १९०० में ही जब वह तप कर रहे थे और सन्यास ग्रहण नहीं किया था तभी उन्होंने अपने हुक्मे नातिक़ की घोषणा की थी कि अर्ध बीसवीं शताब्दी के बीतते-बीतते भारत अवश्य आज़ाद होगा और पहले से भी अधिक इसका विकास होगा। यह बात अब समस्त संसार को ज्ञात है कि प्रकृति को राम की इस आज्ञा के उल्लंघन करने का साहस नहीं हुआ और भारत सन १९४७ में स्वतंत्र हो गया तथा वह अब शनैः शनैः प्रगति के मार्ग पर अग्रसर है।

स्वामी राम की देशभक्ति केवल भारत तक ही सीमित न थी वरन उनको समस्त विश्व के लिए भक्ति व प्रेम थे। यद्यपि उन्होंने भारत में जन्म लिया था तथापि उनकी बाहें समस्त विश्व को आलिंगन करने के लिए फैली रहती थीं। उनके भाषणों में जादू का सा असर था, क्योंकि वह कभी कोई ऐसी बात कहते ही न थे जिसकी सच्चाई को उन्होंने पहले स्वयं अपने में अनुभव न

कर लिया हो--उनके विचार स्वतंत्र व उदार थे--उनमें कहीं भी कोई कट्टरता, साम्प्रदायिकता या संकीर्णता नहीं थी--यही कारण था कि उनके भाषण और विचार सुनने वालों के दिलों में सीधे उतर जाते थे। उनके शब्दों का एक-एक अक्षर सोने से लिखे जाने के योग्य है। उनके लेखों, कविताओं और भाषणों को पढ़कर लोग आज भी आत्मविभोर हो जाते हैं।

स्वामी राम का सारा जीवन ही वेदान्तमय था। यह ही नहीं, उनके जीवन का प्रत्येक कार्य स्वाभाविक रूप से वेदान्त के अनुसार ही, बिना किसी प्रयास के होता रहता था। वे सारे विश्व में अपने सहित सबको ब्रह्म ही समझते थे और सबसे अपना जैसा व्यवहार करते थे। किसी भी व्यक्ति का महान कार्य निःस्वार्थ प्रेम और असाधारण कर्तव्य परायणता, तपस्या इत्यादि देखकर प्रसन्नता से उनकी आंखों में आँसू छलक आते थे और वह कह उठते थे–"यही तो राम का व्यवहारिक वेदान्त है"। राम ने अपने पवित्र जीवन चरित्र से संसार के सामने एक अपूर्व उदाहरण प्रस्तुत कर दिया। भारत के एक साधारण से ग्राम के एक निर्धन परिवार में पैदा होकर यह सीधा सादा शर्मीला बालक अपने परिश्रम और लगन से अल्पायु में ही हर प्रकार के ऊंचे से ऊंचा लाभदायक ज्ञान प्राप्त करके आध्यात्मिकता में इतनी ख्याति प्राप्त कर ले कि संसार के सबसे धनाढ्य और शक्तिशाली अमरीका जैसे देश का राष्ट्रपति केवल उसके दर्शनों की लालसा से उसके पास शास्तास्प्रिंग के जंगलों में खिचा चला आए और उसे अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करे, क्या यह कोई साधारण चमत्कार है ? हम सब लोगों के लिए राम का निर्मल, स्वच्छ और सराहनीय कर्मठ जीवन अनुकरणीय है

जो किसी भी मनुष्य को विकास में ऊंचे से ऊंचा उठा सकता है ।

जिस ज़माने में स्वामी रामतीर्थ अपना भाषण देते थे तब हिन्दी या उर्दू की शार्ट हैंड (Short-hand) लिखने की विधि का आविष्कार नहीं हो पाया था अत: कहीं-कहीं कोई-कोई सज्जन राम के भाषणों के नोट्स (Notes) अपनी-अपनी रुचि के अनुसार अपने ढंग से ले लिया करते थे। स्वामी राम ने तो भारत में सैकड़ों ही भाषण दिये किन्तु इनसब भाषणों के नोट्स उपलब्ध नहीं हो पाए। जिन कुछ भाषणों के नोट्स हमें मिल पाए हैं, उनका सार तथा रूपरेखाओं को सावधानी से विस्तारित करके उनको तैयार किया गया है इस बात का यथाशक्ति ध्यान रखा गया है कि उनमें स्वामी राम के उपदेशों की आत्मा पूरी तरह विद्यमान रहे ।

वेदान्त के मतानुसार मनुष्य के जीवन का लक्ष्य परमानन्द और शाश्वत शांति है बिना आनन्द के शांति नहीं मिल सकती और बिना शांति के आनन्द की अनुभूति नहीं हो सकती। यह दोनों शान्ति और आनन्द एक दूसरे पर केवल निर्भर ही नहीं बल्कि दोनों एक ही है। किन्तु धन दौलत, मकान, सम्पत्ति, मिल्कियत को बढ़ाने में ही मनुष्य आनन्द व शांति ढूंढता है। बाल-बच्चों, स्त्री, घर परिवार, मित्रों व मेला तमाशों में वह भटकता है। पर इन विषयों में आनन्द कहाँ ? यह सब तो नाशवान और परिवर्तनशील वस्तुएं हैं। इन सबसे प्राप्त किया हुआ आनन्द क्षणिक होता है। इन सब में मनुष्य को धोखा ही मिलता है और सच्ची शान्ति और शाश्वत आनन्द के लिए वह

सदैव छटपटाता ही रहता है। किन्तु प्यारे तेल तो तिलों से ही निकलता है। पूर्ण आनन्द और शान्ति तो आनन्द और शांति के स्रोत, शांति व आनन्द स्वरूप भगवान की शरण में ही मिल सकते हैं जो अविनाशी है।

आराम की तलब है तो एक काम कर।
आ, राम की शरण में और राम-राम कर।।

इसीलिए बिना भगवान की अनुभूति के और बिना उसको आत्मसमर्पण किए हुए तुमको शांति मिल ही नहीं सकती। ईश्वर तो सत्य स्वरूप है। सत्य वह है जो कल, आज और सदा एक ही समान रहता है। ऐसा शाश्वत सत्य तो केवल एक ही है और वह है ब्रह्म जिसे लोग अलग-अलग नामों से पुकारते हैं। बिना इस शाश्वत सत्य को अपनाए हुए अर्थात बिना उसको अपने दैनिक जीवन के आचरण में लाए हुए तुमको शांति या आनन्द मिलना असम्भव है। याद रहे कि शांति या आनन्द द्वैत भाव में मिलना कठिन ही नहीं वरन असम्भव है, क्योंकि जहां द्वैत है वहां "तू-तू--मैं-मैं" या "यह और वह" का रगड़ा झगड़ा लगा ही रहता है। द्वैत में ईर्ष्या, द्वेष, पक्षपात, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि के कारण आसक्ति और भेद भावना बनी ही रहती है, ऐसी हालत मे शांति कहं ?

इसीलिए बहुत खोज और विचार के पश्चात हमारे आचार्यों और दार्शनिकों ने अद्वैत सिद्धांत को ही कसौटी पर खरा पाया है, जो हर प्रकार के प्रश्नों और शंकाओं के समाधान की एकमात्र अचूक कुंज़ी है। वास्तव में है भी यही एकमात्र सत्य जो न्याय से, तर्क से, विज्ञान से और गणित से भी प्रमाणित किया जा सकता है।

एक के सिवा तो और कुछ हो ही नहीं सकता—वेदांत उसको 'एकोब्रह्मदुतीयोनास्ति' कहता है-इस्लाम उसको 'लाइलाइल्लिलाह' कहता है—पारसी उसी को 'नेस्त अज़ जुज़ यज़दा' कहता है और ईसाई उसको 'ईश्वर सबमें ओत-प्रोत है' (God is all pervading and Omnipresent) अर्थात ईश्वर ही सबमें है । आजकल का विज्ञान उसको ऊर्जा की संज्ञा देता है जिसके बिना यह अनन्त विश्व ठहर ही नहीं सकता, वेदों ने इसी ऊर्जा को 'अग्नि' के नाम से पुकारा है—यही विश्व का सर्वाधार है । ऋगवेद का पहला मंत्र इसी सर्वव्यापी अग्नि के संबंध में है । यह ऊर्जा या अग्नि देवता ही सर्वव्यापी ब्रह्म का सुस्पष्ट और स्पर्श गोचर (palpable) स्वरूप कहा जा सकता है ! यह ब्रह्म तो अनन्त, असीम और सर्वव्यापी है । विश्व की कोई वस्तु इस असीम को सीमित नहीं कर सकती । इसीलिए शांति का सहज और सरल उपाय तो यह है कि ईश्वर की सर्वव्यापकता को कभी न भूलो । उससे अपने को कभी अलग न समझो । जब विश्व का एक-एक कण उसीसे अणुप्राणित हो रहा है तब हम या तुम या कोई वस्तु उससे अलग कैसे रह सकती है—वह तो उससे एक ही है अतः वह ही बरफ में जल की तरह सब में सब कुछ है । यह ही 'शाश्वत सत्य' है और इसी सत्य को अपने जीवन में व्यवहार रूप में अपनाना 'शान्ति का उपाय है' ।

इस पुस्तक में अपने इन दोनों भाषणों में, अपने निराले ढंग की विश्वासोत्पादक और वैज्ञानिक युक्तियों द्वारा स्वामी-राम ने इन पर बडी सुन्दरता से प्रकाश डाला है, जिसको पाठक स्वयं पढकर इसके सौरभमय आनन्द से लाभान्वित हो सकते हैं ।

इस पुस्तक में जल्वये कोहसार या पर्वतीय छटा का भी वर्णन है——इस संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि जब स्वामी राम गृहस्थाश्रम म थे तब कालेज की गर्मियों की छुट्टी मे वह हिमालय की ओर एकान्त सेवन के लिये चले जाया करते थे। यहाँ वह प्रकृति के सौंदर्य में ऐसा तल्लीन हो जाया करते थे मानो वह उसीसे एक होकर उसी में खो गये हों। इसी अनुपम सौन्दर्य का वर्णन उन्होंने स्वयं अपने कलम से अपने उर्दू लेखों में बड़े प्रभावशाली ढंग से किया है। इस पुस्तक में उसका हिन्दी रूपान्तर दिया गया है, उसको पढ़ते-पढ़त पाठक-गण स्वयं अनुभव करने लग जाते हैं कि वह भी प्रकृति के साथ एकता का आनन्द उठा रहे हैं——यही तो स्वामी राम के अभिव्यंजन के जादू का असर है।

घने जंगल में क्या राम अकेला है? कदापि नहीं। उसके चारों ओर पशु पक्षी सब के सब उसकी सेवा के लिए, उसका दिल बहलाने के लिए हाज़िर हैं——वर्षा में जल स्वरूप होकर पहाड़ी जंगलों को राम हरियाली और ताज़गी बख्श रहा है। धूप में धप बन कर पहाड़ी जीवधारियों को राम ही गरिमा की राहत प्रदान कर रहा है। शिला पर लेटे हुए, पत्थर बन कर राम सुषुप्ति अवस्था के आनन्द का अनुभव कर रहा है। बहती हुई नदियों में राम काल की गति से दौड़ रहा है और सरसराती वायु में राम प्राणियों में जीवन शक्ति संचार कर रहा है। बहते हुए जल की कल-कल में, झरनों की झर-झर में, वायु की पत्तियों की सर-सर में, राम का ही मधुर स्वर गूंज रहा है। बादल की गरज, बिजली की चमक तथा धूप की आंख स्वर गूंज मिचौली में, वातावरण

की क्षण-क्षण की मायावी परिवर्तन में केवल राम का ही प्रसाद है, वाह क्या नज़ारा है कि दिल बाग़-बाग़ हुआ जा रहा है।

राम अपनी महिमा में मस्त पड़ा हुआ है हाय ! उसके सौन्दर्य का कोई ग्राहक नहीं, इस अमूल्य हीरे को कौन खरीदे ? राम ख़ुद ही अपना आशिक है और ख़ुद ही अपना माशूक; अरे ! कौन किसका आशिक और किसका माशूक ? राम तो ख़ुद ही इश्क़मुजस्सिम (मूर्तिमान प्रेल) है।

अरे प्यारों अगर पर्वतीय छटा का आनन्द लेना चाहते हो तो राम के साथ जल्वएकुहसार की सैर करो। राम की प्रकृति के साथ एक होकर उसी में गुम हो जाओ। इस पुस्तक रूपी राम के ज्ञानवर्धक पुष्प की मधुर सुगन्ध का यही तात्पर्य है।

हमें खेद है कि आजकल की दिनों दिन बढ़ती मंहगाई के कारण, काग़ज-छपाई इत्यादि सबमें बढ़ोत्तरी होती जा रही है। अतः इस पुस्तक का मूल्य उसी के अनुसार रखना पड़ा है। आशा है कि हमारी कठिनाइयों को देखते हुए राम प्रेमी हमें क्षमा करेंगे। प्रतिष्ठान उन सज्जनों का आभारी है जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन तथा मुद्रण में सक्रिय योगदान दिया है। अन्त में भगवान राम से हमारी प्रार्थना है कि हम सब "शाश्वत सत्य" द्वारा "शांति के उपाय" को अपना कर, राम रस में पग जाएं, और कण-कण में रमते हुए राम की अनुभूति करें।

लखनऊ

१६-७-८६

अयोध्या नाथ
(अध्यक्ष)
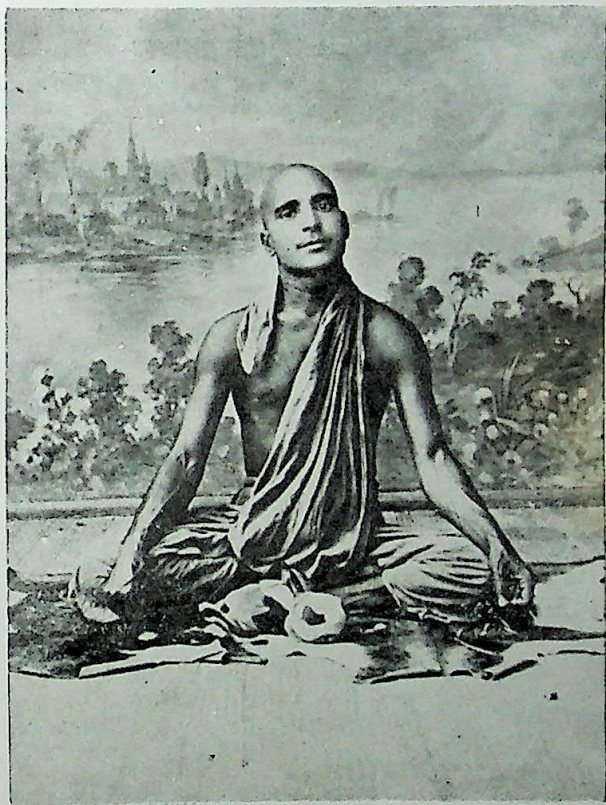
स्वामी रामतीर्थ

१८७३–१९०६

"शान्ति का उपाय"

(सितम्बर १९०५ में बाराबंकी में दिये गये
भाषण का सारांश)

राम अब अपने दिल के तार हिलाएगा, जिन
दिलों में वैसे ही तार होंगे, वे भी हिल उठेंगे। इसका
भाषण प्रारम्भ होने से पूर्व आप सब उपस्थित सज्जन भी
अपने मन की वृत्तियों को चारों ओर से हटाकर इस कविचित्त
पर एकाग्र कीजिये। यह कविता इस प्रकार है :—

"ठंडक भरी है दिल में, आनन्द बह रहा है।
अमृत बरस रहा है, झिम, झिम, रिम, झिम ॥
फैली है सुबह शादी, क्या चैन की घड़ी है।
सुख के छुटे फुवारे, फ़रहत चटक रही है ॥
क्या नूर की झड़ी है, झिम, झिम, रिम, झिम।
शबनम के दल ने चाहा, पामाल करदे गुल को ॥
सब फ़िक्रें मिल के गायीं कि निढाल कर दें दिल को।

आया सबा का झोंका, वह सबाये-रोशनी का ।
झरती है शबनमे ग़म, रिम झिम रिम झिम ।।

चारों तरफ़ ही देखो, फ़रहत चटक रही है ।
मेहरे ख़ुदाई हरदम, हर सू बरस रही है ।।

कल रात को यह निश्चय हुआ था कि आज का विषय "शान्ति का उपाय" होना चाहिये, सारा संसार चित्त की शान्ति [illegible]ने की इच्छा कर रहा है और समस्त जगत के लोग इस परम [illegible]क चित्त की शान्ति को प्राप्त करने का अपने-अपने ढंग [illegible] रहे हैं । दुनिया क्या है ? यह एक प्रकार [illegible] प्रयोगशाला है, जहाँ हमको यह प्रश्न हल करना [illegible]द्धान्त निश्चय करना है कि शान्ति प्राप्त कैसे हो [illegible] है । प्रायः लोग अपने इस प्रयास में पहले असफल हो [illegible] जब गणित का कोई प्रश्न हल किया जाय, तो पहले [illegible]ई बार ग़लतियां होती हैं, परन्तु बाद को सफलता हो ही [illegible]ती है ।

राम संसार के अनुभव से बताता है कि, इस आनन्द और शान्ति की प्राप्ति जगत के विषयों में सम्भव नहीं है । देखो, जगत की वस्तुएं और संसार के पदार्थ हमको चित्त की शान्ति नहीं दे सकते । जब हम किसी फूल को अपने हाथ में लेते हैं तो हमें कुछ

नोट : *उपरोक्त कविता 'राम' ही की रचना है इस सभा का संचालन नवाब मुहम्मद अज़ीम खां, डिप्टी कमिश्नर, बाराबंकी कर रहे थे—भाषण ६ बजे से ९ बजे शाम तक चलता रहा—सभास्थल नागेश्वर नाथ मन्दिर के प्रांगण में था—

देर के लिए खुशी मालूम होती है किन्तु उस फूल के मुरझाने पर जब उसकी सुगन्ध दूर हो जाती है, तब हमारी खुशी भी हमें छोड़ देती है। लोगों ने धन, दौलत, स्त्री और मदिरा आदि से शान्ति और आनन्द प्राप्त करने का प्रयास किया, किन्तु उन्हें निराशा ही हाथ लगी। आप लोग स्वयं अपने-अपने निजी अनुभवों से यह बात समझ सकेंगे कि राम जो कुछ कह रहा है वह शत प्रति शत सत्य हैं। राम कोई सुनी सुनाई बात नहीं कहता, राम अपने निजी अनुभवों के आधार पर कहता है कि आनन्द या शान्ति संसार की वस्तुओं में नहीं है। [illegible] इस प्रश्न को हल करने के लिये, अपने-अपने ढंग से [illegible] किए, किन्तु दुर्भाग्यवश वह केवल उसका आध[illegible] भाग हल कर सके, पूरा-पूरा नहीं। उन्होंने न [illegible] (morality) की ओर ध्यान-दिया, लेकिन यह पर्याप्त [illegible] इससे तो इतना लाभ अवश्य हुआ कि उन्होंने उसका [illegible] ठीक ही किया, किन्तु आगे चल कर भटक गये। "दिल्ली दूर रही।" अनैतिकता अथवा अस्वाभाविक जीवन हमारे चित्त [illegible] शान्ति को भंग कर देती है और हमें पाप के पथ पर चलाती है।

पाप से भय :-

जो मनुष्य पाप करता है, उसको शान्ति कदापि प्राप्त नहीं हो सकती। उसकी सफलता का द्वार बन्द हो जाता है और उसकी प्रगति अवरुद्ध हो जाती है। अगर तुम कोई सामाजिक पाप करो तो कदाचित तुम राजकीय दण्ड से बच भी जाओ, किन्तु प्राकृतिक नियमों को तोड़ने पर तुम ईश्वरीय प्रकोप से अपने को कभी भी नहीं बचा सकते। तुम को यह दण्ड

भोगना ही पड़ेगा । हृदय की पवित्रता और विचारों की शुद्धता मनुष्य की शान्ति के लिये परम आवश्यक है । राजकीय दण्ड इतना शीघ्र नहीं मिल पाता, जितना कि प्राकृतिक नियम-भंग से मिलता है ।

हृदय की पवित्रता :–

नेपोलियन एक बहुत बड़ा योद्धा और प्रसिद्ध नायक था । उससे अड़ोस-पड़ोस के तमाम देश भयभीत रहते थे । जब तक [illegible] चरित्र पवित्र रहा और जब तक उसके चरित्र में [illegible]म रही, वह बराबर विजय पर विजय प्राप्त करता [illegible]ड़ी भयानक से भयानक लड़ाइयों में वह सदैव [illegible] उसकी जीवनी से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि [illegible]" के युद्ध में जाने से एक रात पहले वह अपने आप [illegible]-वासना के कूप में गिरा चुका था। उसने अपनी [illegible]वन शक्ति को विषय वासना के गड्ढ़े में उण्डेल कर क्षीण [illegible]र दिया था । उसकी भीतरी पवित्रता भंग हो चुकी थी । [illegible]की शक्ति का ह्रास हो चुका था और वह अपना तेज एवं शौर्य चन्द्रमुखी सुन्दरी के प्रेम में गंवा चुका था । उसका फल यह हुआ कि जैसे कि इतिहास के विद्यार्थी जानते हैं, वह उस लड़ाई में हरा दिया गया और उसके पश्चात वह अपने पुराने वैभव को कभी भी प्राप्त नहीं कर सका । उसका सारा तेज और उसके चित्त की शान्ति सदा के लिये उस से किनारा कर गई ।

आपको पृथ्वीराज चौहान का इतिहास तो मालूम ही होगा, वह दिल्ली का एक महान सम्राट था । उसके समक्ष

अफ़ग़ानिस्तान के मोहम्मद ग़ौरी को युद्ध क्षेत्र में बहुत बड़ी हार का मुख देखना पड़ा था। दूसरे साल मोहम्मद ग़ौरी ने फिर पृथ्वीराज पर आक्रमण किया, किन्तु लड़ाई में जाने से पहले इस वर्ष पृथ्वीराज की कमर में तलवार एक सुन्दर स्त्री ने बांधकर अपने वासनापूर्ण चुम्बनों से विदा किया था। इस लड़ाई में पृथ्वीराज को हार देखनी पड़ी और वह बन्दी बना। उसको विजय कहां से होती, उसका अपवित्र चरित्र और विषय-वासना की लालसा उसके विजय प्राप्ति में बाधा बनकर खड़ी हो गई थी।

महाभारत के कुरूक्षेत्र के मैदान में [illegible] अभिमन्यु को भी मौत का मुंह देखना पड़ा था, [illegible] पहले उसने अपने सफ़ेद ख़ून को विषयवासना में [illegible] दिया था। खेद की बात है कि महाभारत के म[illegible] पश्चात सच्चे क्षत्रियों का जैसे लोप ही हो गया हो। यह [illegible] दुःख की बात है। अंग्रेज़ी का एक कवि लिखता है कि :—

"दस जवानों की मुझ में है हिम्मत,
क्योंकि दिल में है असमतो इफ़्फ़त

हृदय की पवित्रता ही मनुष्य में तेज, शौर्य, बल, साहस और विजय प्रदान करती है। जिनका हृदय अपवित्र होता है, उनको हार का मुख देखना पड़ता है। वह अपमानित किये जाते हैं, और उनको लज्जित होना पड़ता है। भला ऐसे मनुष्य को शान्ति कैसे प्राप्त हो सकती है ? आप स्वयं अपने अनुभवों से भी इस सत्य की पुष्टि कर सकते है, यह प्रकृति का अटूट नियम है।

हम महावीर हनुमान जी की क्यों पूजा करते हैं ? उनकी मूर्ति को देखने से हमें क्या प्रेरणा मिलती है ? आज भी हम महावीर हनुमान जी का सम्मान करते हैं, यहां तक कि उनकी मूर्ति की भी पूजा करते हैं, आखिर क्यों ? जो भी काम उन्हें सौंपा जाता था, उसको वह पूरी मेहनत, सच्चाई और भक्ति से पूरा करते थे और युद्ध में सदा विजयी रहते थे, क्योंकि उनका हृदय अश्लील भावनाओं से पवित्र था। वह सदैव सर्वशक्तिमान परमेश्वर को अपने हृदय में धारण किये रहते थे। ...र हृदय पवित्र होगा—उसी के हृदय में भगवान का वास ...है और उसी मनुष्य के हृदय में ईश्वर के प्रति अटूट ...वास उत्पन्न हो सकता है जिसके हृदय में ...ात श्रद्धा है। वह बड़ी सी बड़ी कठिनाइयों के ... भी ईश्वर के बल पर सुगमता से लांघ सकता है। ऐसे ...लिये असाध्य और असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते ...। इसके लिए मनुष्य के हृदय में ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा ...र विश्वास होना चाहिये, जो हृदय की पवित्रता के बिना ...भव नहीं है। जिसका हृदय पवित्र है, वही ईर्षा, द्वेष, पक्ष-...ात वासनाओं और मनोविकारों से ऊपर उठ सकता है। ऐसे ही मनुष्य को सच्ची शान्ति का आनन्द प्राप्त होता है।

जिनका हृदय पवित्र नहीं है, उसको शांति भी प्राप्त नहीं हो सकती, और जिनको शान्ति नहीं है, उनका चित्त एकाग्र नहीं हो सकता। जिनका मन विक्षिप्त है अर्थात जो अपने चित्त को एकाग्र नहीं कर सकते उनको किसी भी काम में सच्ची सफलता प्राप्त नहीं हो सकती, चाहे वह संसारी काम हो या अध्यात्मिक। सफलता के लिये चित्त की एकाग्रता की

आवश्यकता है, जो बिना शान्ति के सम्भव नहीं है और शान्ति भी उसी को मिल सकती है, जिसका मन पवित्र हो और दुर्वासनाओं से ऊपर हो । यही प्रकृति का नियम है, यही दैवी विधान है ।

अब राम आपको दूसरा उदाहरण मेघनाद का देता है । आप जानते ही हैं कि मेघनाद रामायण काल में लंका का एक अद्वितीय, बलवान और अजेय योद्धा था । उसको युद्ध क्षेत्र में कोई मार नहीं सकता था, यहां तक कि मर्यादा पुरुषो[illegible] रामचन्द्रजी भी उसको युद्ध में परास्त नहीं कर सक[illegible] उसको केवल वही हरा सकता था जिसने कम [illegible] (१२) वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन किया हो—ल[illegible] में भी रामचन्द्र जी के छोटे भाई लक्षमण ही इस [illegible] सफलतापूर्वक कर सके थे, क्योंकि वह अपने मन को नि[illegible] रखने में सफल थे और उन्होंने लगातार ब्रह्मचर्य का पा[illegible] किया था, जिसके कारण उनमें इतनी प्रबल संकल्प शक्ति औ[illegible] ओज विकसित हो गया था कि मेघनाद भी उनका मुक़ाबला न[illegible] कर सकता था, और अंत में लड़ते-लड़ते लक्षमण के समक्ष उसक[illegible] मौत का मुख देखना पड़ा । यह सब क्यों सम्भव हुआ ? महाबली मेघनाद जो अजेय था वह क्यों पराजित हुआ ? क्योंकि लक्षमण का हृदय अशलील वासनाओं से दूर था ।

कहा जाता है कि महाभारत के महा योद्धा वयोवृद्ध भीष्म पितामह जी की मृत्यु उनकी इच्छा पर निर्भर थी, क्यों ? क्योंकि उनके हृदय में पवित्रता वास करती थी, जिसके कारण उन्होंने अपने मन को वश में कर रखा था । संसार के

आकर्षण उन्हें लुभा नहीं सकते थे। यहां यह फिर दोहरा देना आवश्यक प्रतीत होता है कि मनुष्य को सच्ची शान्ति और शाश्वत सुख संसारी पदार्थों में कदापि प्राप्त नहीं हो सकता, उनमें तो धोका ही धोका है। सच्चा सुख और शान्ति तो तुम्हारे अन्दर है, जिसका आनन्द तुम उसी समय भोग सकते हो **जब तुम्हारा चंचल मन वश में हो** और तुम्हारे हृदय में किसी भी प्रकार की आसक्ति न हो। इसके बिना शान्ति प्राप्त करना संभव नहीं है।

[illegible] एक बार राम दार्जिलिंग के पहाड़ों पर था, उसने स्वयं [illegible] मनुष्य ने एक गुलाब के फूल को तोड़ा और उसे [illegible] पास ले गया। ज्यों ही वह उसे अपनी नाक के [illegible], उसमे से एक शहद की मक्खी ने निकल कर [illegible]ाक पर एक डंक मारा; जिसके कारण वह व्यक्ति पीड़ा [illegible] चिल्ला उठा। इसी प्रकार आप चाहे मानें या न [illegible]नें, यह प्रकृति का अटल नियम है कि जो व्यक्ति अपने [illegible] को संसारी आकर्षणों में फंसाएगा वह अवश्य नीचे [illegible]गा और शहद की मक्खी से काटे-जाने के समान वह सांसारिक कष्ट और दुख भोगने से कभी भी अपने आपको बचा नहीं सकता, न उसे कभी शांति मिल सकेगी।

संसारी सुखों में और उसके प्रलोभनों में शांति और आनन्द असम्भव है। संसारी शान शौकत, तड़क भड़क और दिखावे में अपने अन्तर के परम आनन्द और शान्ति को भंग मत होने दो। यह सब क्षणिक हैं। कहना मानो। मक्खन समझ कर इस चूने के गोले को मत खाओ, अन्यथा तुम्हें पछताना पड़ेगा।

जिसके मन में अपवित्रता है, अर्थात ईर्षा, द्वेष, पक्षपात, घृणा, काम, क्रोध, मोह और संसारी सुखों की लालसा बनी हुई है, उसको भला शांति कहां से प्राप्त हो सकती है ? असली शांति तो तुमको अपने अन्दर की पवित्रता में ही सम्भव है। हृदय की पवित्रता ही सुख शांति और आनन्द की तथा मनुष्य के उत्थान की कुंजी है। हृदय की पवित्रता का मनुष्य के जीवन में बहुत बड़ा महत्व है।

यहाँ यह भी बता देना अनुपयुक्त न होगा कि राम [illegible] कृष्ण, गौतम बुद्ध, जीसस क्राइस्ट और मोहम्मद इत्[illegible] महान आत्माएं, केवल पवित्र, विशुद्ध और सती [illegible] के गर्भ से ही जन्म लेना पसन्द करते हैं। ऐ ! [illegible] बहनों, यदि तुम इस बात की इच्छुक हो कि तुम्[illegible] घरों में महान आत्मायें अवतरित हों, तो सतीत्व [illegible] करो और अपने चरित्र को मन, वचन और कर्म स पा[illegible] निश्छल और सात्विक बनाओ। इसमें शक मत करो। [illegible] प्रकृति का अकाट्य नियम है।

वह व्यक्ति जिसको संसार के विषय और वासनाएं नहीं हिला सकतीं, वह निस्सन्देह सारे संसार को हिला सकेगा। पवित्र आचरण, जितेन्द्रिय और शुद्ध विचारों से भरे हुये सच्चे निश्चय वाले मनुष्य का शरीर और मन प्रकाश स्वरूप हो जाता है और ईश्वर का तेज और शान्ति - आभा उसके मुख मंडल पर साफ़ चमकने लगते हैं।

एक युवा साधु था। वह भीख मांगने जाया करता था। एक दिन वह किसी अमीर और धनी मनुष्य के महल की ओर

चला गया। उस व्यक्ति की स्त्री ने एक सुन्दर मुख वाले सन्यासी को अपने सदन की ओर आते देखा, तो उसका मन विचलित हो गया। वह नीचे उतर आई और उसे बड़े प्रेम से भिक्षा दी और भिक्षा देते समय वह अपनी जिह्वा से भी कुछ कह गयी। वह बोली कि तुम्हारे नेत्र बहुत मनमोहक हैं। साधू ने भीख तो ले ली, परन्तु उसे खाया नहीं। उसने उसे नदी में फेंक दिया। दूसरे दिन उस युवा सन्यासी ने एक चाक़ू से अपनी दोनों आंखें निकाल लीं और उनको एक रुमाल में रख [illegible] लकड़ी के सहारे टटोलते-टटोलते उस महिला के घर [illegible] महिला ने उसे अपने घर के अन्दर ले जाना चाहा [illegible] उसके पास गई तो साधू ने वह रुमाल उसे थमा [illegible] उसकी दोनों आँखें रक्खी थीं और कहा कि "हे [illegible]दि तुम मेरी आँखों पर मोहित हो, तो यह लो, वे [illegible] हैं। यदि मेरी आंखों की ज्योति जाय तो जाय, [illegible]तु मेरी आत्मा की ज्योति तो बनी रहे। मैं आप से यही [illegible]ना करता हूं कि मेरे मन और बुद्धि को मत कलुषित करो" [illegible] सुन कर वह महिला हक्की-बक्की सी रह गई और कुछ आगे बोल न पाई। उसके आगे क्या हुआ, राम को उसे कहने की कोई आवश्यकता नहीं है।

जिन्होंने संसार को हिला दिया है; वे उस साधू के समान हैं। एसे लोगों को संसार की चमक-दमक अपनी ओर नहीं खींच सकती। भगवान बुद्ध इसी प्रकार के दृढ़ निश्चयी और ऊंचे संकल्प वाले महापुरुष थे। उनकी पवित्रता और सच्चाई जगत-प्रसिद्ध थी। इसीलिए वे सर्वप्रिय थे। आपको मालूम ही है कि संसार की एक तिहाई जन-संख्या उनके अनुयाइयों की

ही है । हमारा अभिप्राय इससे केवल यही है कि जिसके चित्त में पवित्रता और शुद्धता भरी है, जिसका मन उसके वश में है, वह संसार को जीतता चला जायगा और वह संसार के किसी भी क्षेत्र में सफल हो सकेगा । केवल ऐसा ही मनुष्य शक्ति, सम्पन्नता और सच्ची शान्ति का आनन्द उठा सकता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है ।

राम इस बात पर फिर ज़ोर देगा कि जो मनुष्य अपने हृदय में ईर्ष्या, द्वेष, पक्षपात, घृणा रखता है और संसारी [illegible] भी फंसा हुआ है, उसको भला शान्ति कैसे प्राप्त हो सकती [illegible] कोई मनुष्य अपने आपको संसारी इच्छाओं के बन्ध[illegible] रखना चाहता है और अपनी वासनाओं का ग़ुलाम [illegible] चाहता है, तो उसका मन बराबर विक्षिप्त रहेगा । उस[illegible] शान्ति कहां मिल सकती है ? सच्ची शान्ति तो उस[illegible] मिल सकती है जब वह ऐसे तमाम कूड़े करकट को अपने [illegible] से बाहर निकाल फेंक दे । इस काम में सफलता के लि[illegible] मनुष्य को अपने मन को नियंत्रण में रखकर वश में करना हो[illegible] । जिसके लिए उसको सतसंग और स्वाध्याय की आवश्यकता है ।

इस प्रकार आप देखेंगे कि शान्ति प्राप्त करने के लिए आप को धर्म शास्त्रों तथा सन्तों के सतसंग की सहायता लेनी होगी । धर्मशास्त्रों को ध्यानपूर्वक पढ़ो, जिससे कि तुम उनके उपदेशों को अपने हृदय में उतार कर उनको खूब अच्छी तरह पचा सको । इसके पश्चात इन सभी शिक्षाओं को अपने दैनिक जीवन के आचरण में लाओ । यह धर्मशास्त्र भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय के लोगों के लिए भिन्न हो सकते हैं । अर्थात ईसाइयों के

लिए बाइबिल, मुसलमानों के लिए क़ोरान (क़ुरान) और साधारण हिन्दुओं के लिए वेद, पुराण, रामायण और महाभारत इत्यादि, इत्यादि। किन्तु जिनको अद्वैत दर्शन भाता है, उनको गीता, योगवसिष्ठ, अवधूत गीता, उपनिषद और सूफी धर्म की पुस्तकें पढ़नी चाहिए जैसे दीवाने शम्स तबरेज़, दीवाने 'वती' और रिसाल-ए-अलिफ़ इत्यादि। ऐसी पुस्तकें उनके लिए बड़ी लाभदायक होंगी। ऐसी पुस्तकें मन लगाकर एकान्त में पढ़नी चाहिए, जिससे पढ़ते-पढ़ते रोंगटे खड़े हो जायें और मन तल्लीनता और ...द से भर जाय। ऐसी ही मानसिक अवस्था में धर्मशास्त्रों का ...जारी रखो—बड़ा आनन्द प्राप्त होगा। हिन्दुओं के 'ओम' ... मंत्र के भाव-पूर्ण उच्चारण में तदात्म होकर जो ...त होती है, मुसलमानों में वही अवस्था 'अल्लाह' के ...प से प्राप्त होती है। 'ओम' और 'अल्लाह' का एक ...है, जिससे मन की चंचलता थम जाती है। मन की ...लता के रुकने पर ही शान्ति प्राप्त होती है। और तब ही ...न्तरिक शान्ति के अनुभव से सच्चा आनन्द प्राप्त होने ... जाता है।

शास्त्र अध्ययन की विधि :—आपने बचपन में गुल्ली डंडे का खेल खेला होगा। इस खेल में डंडे की सहायता से पहले गुल्ली को ऐसी अवस्था में सावधानी से रक्खा जाता है, जिससे कि वह आसानी से उछाली जा सके। उसके पश्चात गुल्ली के नुकीले सिरे पर डंडा मार कर दूर से दूर उसे हवा में उड़ा देते हैं। उसी प्रकार धर्म-शास्त्रों को ध्यानपूर्वक पढ़ो। फिर आप अपने मन को ऐसी शान्तिमयी अवस्था में या उसके भी ऊपर पहुंचा दो जहां उसे आत्मसाक्षातकार की तल्लीनता

में डूब जाने में बड़ी सहायता मिल जाय। किन्तु यह सब आप की भावना की तीव्रता और प्रगाढ़ता पर निर्भर होता है। आप की भावना में जितनी अधिक तनमयता होगी, उतनी ही अधिक आत्म-साक्षात्कार करने में आपको सहायता मिलेगी।

एक उर्दू कवि कहता है :—

गले लिपट क जो सोया वह रात म गुलरू।
तो भीनी भीनी महीनों रही है बू बाक़ी॥

इसी-प्रकार, अपने धर्म शास्त्रों को अध्ययन क[illegible] नाओं की ऐसी तल्लीनता आप में आ जानी चाहि[illegible] प्रभाव के आनन्दपूर्ण शान्ति की आत्म-विस्मरणता [illegible] जाएं तभी तो अनिर्वचनीय मज़ा है। इसको आप केव[illegible] मात्र न समझें। एक वास्तविकता है, जिसको रा[illegible] अनुभव किया है।

समय का उपयोग :—बहुत से लोगों को प्रायः [illegible] शिकायत है कि बचपन का समय तो अज्ञानता में गया, युवा का[illegible] सांसारिक सुखों में व्यतीत हो गया और वृद्धा-अवस्था में कुछ अब हो नहीं पा रहा है। उसके ऊपर रोटी और गृहस्थी की चिन्ता लगी रहती है। बहुत से ऐसे भी धंधे हैं जो दम नहीं लेने देते। पेट और परमेश्वर दोनों एक ही राशि के हैं, दोनों का ही पाना बहुत मुश्किल है।

एक मनुष्य ने राम से शिकायत की कि मुझको समय नहीं मिलता है कि मैं परमेश्वर, सच्चिदानन्द ब्रह्म की याद कर सकूं।

राम ने उत्तर में यह कहा कि जैसे तुम्हें समय के अभाव की शिकायत है, वैसे ही हमें भी शिकायत है कि हमारे पास कोई पृथ्वी नहीं कि जिससे अन्न पैदा हो और हमारा पेट भरे। तब उसने कहा कि यह बात तो ग़लत है, ज़मीन तो बहुत है। राम ने कहा कि ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से या गणित शास्त्र के विचार में यह जगत केवल एक बिन्दु मात्र है जिसका कुछ माप या परिमाण नहीं। फिर इस छोटे से बिन्दु के तीन भाग पानी और केवल एक भाग सूखी ज़मीन है, जिस पर खेती की जा [illegible]ती है। अब इस खेती वाले भाग में ज़रा ध्यान दीजिए। [illegible]तना भाग तो पहाड़ों और जंगलों से ढका पड़ा है [illegible]र भी बहुत सा भाग ऊसर ज़मीन (बंजर ज़मीन), [illegible]दरिया, झील और बस्तियों में फंसा हुआ है। ऐसी [illegible] इतने अनगिनत प्राणियों के लिए खाद्य सामग्री उपजाने [illegible]ूमि कहां है! फिर भूमि की पैदावार के मुक़ाबले खाने [illegible] लोगों की संख्या तो अनगिनत है। चीन, अफ़्रीका, अमरीका, [illegible]ादि बड़े-बड़े देश हैं। स्वयं भारतवर्ष ही एक बहुत बड़ा देश [illegible]जसकी इस समय तीस करोड़ मनुष्यों की जन-संख्या है। मनुष्यों [illegible] छोडकर पशु भी तो इसी पैदावार पर जीते हैं और ऐसे ही पक्षी, कीड़े, मकोड़े आदि भी इसी पैदावार पर गुज़ारा करते हैं। तो ऐसी हालत में आप ही बतलाइए कि भूमि कहां है?

राम की बातें सुनकर मनुष्य ने कहा कि आपने मन्तक़ तो पूरा उतार दिया, अर्थात युक्ति तो ख़ूब दे दी, पर भूमि तो खेती के लिए फिर भी काफ़ी बची हुई है। राम ने कहा कि आपने बड़ी कृपा की कि हमको इस बात का निश्चय करा दिया कि खेती करने के लिए बहुत भूमि ख़ाली पड़ी हुई है।

राम ने फिर कहा कि इसी प्रकार तुम्हारी यह शिकायत कि हमको समय नहीं, वैसी ही अनुचित है जैसे कि यह कहना कि पृथ्वी पर खेती के लिए भूमि नहीं है क्योंकि अपने समय का यदि हम ठीक रीति से उपयोग करें, तो समय का कोई भी अभाव नहीं है। समय तो ईश्वर की याद के लिए निकाला ही जा सकता है, क्योंकि 'Time is sufficient if, well employed,' दुनिया में थोड़ी सी आयु में मनुष्य वहुत कुछ कर सकता है।

देखो, आदि गुरु शंकराचार्य जी महाराज की आयु तैं[illegible] (३३) वर्ष की ही हुई थी और इस थोड़ी सी आयु में ही उ[illegible] सौ पचास (६५०) पुस्तकें लिख डालीं जिनका अब [illegible] की आयु में ग़ौर से पढ़ना भी कठिन मालूम होता [illegible] अतिरिक्त, जब न रेल थी, न बस, न घोड़े गाड़ी की [illegible] थी, तो भी उन्होंने अपनी इस थोड़ी सी आयु में पैदल [illegible] भारतवर्ष के कई चक्कर लगाये। आखिर यह सब [illegible] कठिन कार्य केवल तैंतीस वर्ष की आयु में उन्होंने कैसे पूरे [illegible] डाले? इन सब मुश्किल से मुश्किल कामों के करने के [illegible] उनमें कहां से शक्ति आई? उनकी सफलता का क्या कारण था?

श्री शंकराचार्य की असाधारण सफलता का कारण उनकी संकल्प शक्ति, इन्द्रिय-निग्रह, सच्चा निश्चय, हृदय की पवित्रता थी जिसके कारण उनके हृदय में ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास विद्यमान था। उन्होंने कभी समय की कमी की कोई शिकायत नहीं की। जो भी उनकी थोड़ी सी आयु थी उसमें वह बराबर काम में लगे रहे और अकेले ही उन्होंने जगह-जगह बौद्धों को शास्त्रार्थ में पराजित करके, भारतवर्ष में सच्चे अर्थों में

शुद्ध आर्य धर्म की पुनः स्थापना की। एक प्रकार से अकेले ही, उन्होंने समूचे भारतवर्ष का इतिहास बदल डाला। क्या यह चमत्कार से कुछ कम है?

हज़रत मोहम्मद साहब को ही ले लो! उन्होंने अपने चालीस वर्ष की आयु के पश्चात्, अपने धर्म के प्रचार का काम शुरू किया और सारी दुनिया में हलचल सी मचा दी। अरब की मरु-भूमि के काले काले रेत के परमाणु बारूद के कण बनकर, ...स्फोटित हो कर सारी दुनियां में गूंज उठे। जिन्होंने उस समय ...ी हुई दुनिया के पुराने और दक़ियानूसी विचारों को एक ...श्वास में बदल दिया, "कुछ नहीं है, सिवाय ख़ुदा के"। ...श्वर पर अटूट विश्वास का चमत्कार है, जो बिना पवित्र ...म्भव है? जिसके हृदय में ईश्वर के प्रति ऐसा विश्वास ...य, वहां तो शान्ति ही शान्ति है।

...अमेरिका में भी कुछ ऐसे महान कवि हुये हैं जिन्होंने अपनी ...ल ३२ या ३३ वर्ष की आयु में कमाल कर दिखला दिया, जो ...के अथक परिश्रम और लगन का द्योतक है, जिसके कारण वह ...ान्ति-पूर्वक अपने महान ग्रन्थों की रचना कर सके।

यदि एक मनुष्य कोई काम कर सकता है, तो दूसरा मनुष्य भी वह काम अवश्य कर सकता है, अगर उसको उस काम में सफलता की विधि मालूम हो। बड़े अफ़सोस की बात है कि समय तो तुम्हारे पास बहुतायत से है, फिर भी तुम समय की शिकायत करते हो।

वास्तविक कर्म :—अब राम, कर्म की परिभाषा अध्यात्म-शास्त्र के अनुसार करता है। तुम को मालूम नहीं कि कर्म क्या

है? वह मनुष्य जो अपने समय का ठीक ठीक सदुपयोग करता है, सच पूछो तो वही जीवित मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। ठीक काम क्या है जिसके करने से आदमी, आदमी कहलाया जा सकता है। उसकी परिभाषा क्या है?

सच पूछो तो, धर्म शास्त्र के अनुसार, जो काम तुम साधारण रूप से यंत्र की नाईं करते हो, वह काम काम नहीं है। यह दुःख की बात है कि तुम जानते ही नहीं कि कर्म क्या है! साधारणतया इस शब्द के अर्थ का अनर्थ किया जाता रहा है। हिन्दुओं के धर्म शास्त्र में सच्चे काम को पुरुषार्थ कहते हैं। पुरुषार्थ तो व[illegible] है जो पुरुष (ईश्वर) को सच्चे रूप में अनुभव कराने [illegible] सहायक हो सके! अर्थात् जो हमें आत्म-साक्षात्कार [illegible] हमारी सहायता करे, जो हमको विकास की सीढ़ी के [illegible] की ओर बढ़ावे। यदि कोई काम इस अभिप्राय से नहीं [illegible] हमको सत्य या ब्रह्म के साक्षात्कार में हमारा सहायक [illegible] है। [illegible] काम सच्चे अर्थों में कर्म नहीं है, वह "पुरुषार्थ" नहीं है। वह [illegible] तुम्हारी शक्तियों का अकारण अपव्यय है। मनुष्य-जीवन [illegible] कार्यों का प्रयोजन तो यह है कि वह उसे अनन्त के विकास की ओर बढ़ाता रहे। अर्थात् उसको ईश्वरत्व अथवा परम सत्य की चरम सीमा के विकास में उसका सहायक हो। इस लिये मनुष्य को चाहिये कि उसके सारे के सारे कर्म इसी अभिप्राय और प्रयोजन से सम्पन्न हों। अतः तुम्हारा सारा मनोवेग उस परम तत्व से एक होने में लगना चाहिये। तुम्हारा प्रत्येक कार्य इसी मुख्य उद्देश्य से प्रेरित होना चाहिये कि तुम अपना ऊंचा से ऊंचा विकास कर सको, जिससे कि तुम ईश्वरत्व के परम तत्व को प्राप्त करके अंत में ब्रह्म-लीन हो जाओ और आवागमन के चक्कर से छुटकारा

पा सको। यही मोक्ष या सच्ची आज़ादी है। इसलिये सच्चाई, हार्दिक लगन, पूर्ण आस्था और इस दृढ़ विश्वास से ही कर्म करो कि हम सब के साथ एक हैं, क्योंकि, तुम्हारा अपना आत्मा और सबका आत्मा एक ही है। वही "परम-पुरुष" है जो सब में एक समान व्याप्त हो रहा है। अतः इस प्रतीत होने वाली अनेकता में एक परम पुरुष की अनुभूति के लिये जो साधन किया जाय वह ही "पुरुषार्थ" है, जो हमें उसका बोध कराने में हमारा सहायक सिद्ध हो। यदि इस अभिप्राय से कोई कर्म मन लगा कर किया [illegible] तब तो वह वास्तव में कर्म है, अन्यथा वह कर्म, कर्म नहीं [illegible]ह कर्म तो वही है जिसके करते हुए आप का चित्त और आप [illegible]का ध्यान उसी प्यारे दिलवर में नियुक्त रहे और उसी [illegible]न रहे। इस प्रकार कर्म करने से तुम्हारा कर्म तुम्हारे [illegible] में सहायक होगा। केवल यांत्रिक (mechanical) [illegible]एक प्रकार से व्यर्थ का अपव्यय है। इस प्रकार के यांत्रिक [illegible]म क सम्बन्ध में राम आप को एक रोचक कहानी सुनाता है।

"एक फ़ौज का सिपाही, तीस वर्ष नौकरी करने के बाद, [illegible]शन लेकर अपने घर आया। एक दिन बाज़ार से दूध लेकर वह अपने घर जा रहा था। एक हंसोड़े को मज़ाक़ सूझा। उसने उस सिपाही के पीछे खड़े होकर ऊंचे, प्रभावशाली स्वर में चिल्ला कर कहा, "अटेनशन" (attention), अर्थात् "सावधान"। सिपाही तीस वर्ष तक यही फ़ौजी क़वायद कर चुका था। वह इस शब्द "अटेनशन" (attention) "सावधान" से भली प्रकार परिचित था। अतः ज्यों ही उसने हुकमी शब्द सुना, उसके हाथ अपने आप नीचे गिरकर सीधे हो गये और उसके हाथ से दूध का लोटा गिर गया। ऐसा क्यों हुआ? वह तीस वर्ष तक सेना

में सिपाही रहा था और उसके लिये यह यांत्रिक काम का स्वभाव सा बन गया था कि वह शब्द सुनते ही सीधा खड़ा हो जाय। यही उसने किया भी। तमाम दर्शक लोग उसके इस बग़ैर समझे बूझे यंत्र की तरह काम करने के स्वभाव पर खूब खिलखिला कर हंस पड़े।

अब राम आप से पूछता है कि क्या आप इस काम को पुरुषार्थ कहेंगे? नहीं। यह कोई काम नहीं हुआ। यह तो केवल यांत्रिक (mechanical) झटका सा हुआ। यह तो किसी [illegible] उद्देश्य से नहीं किया गया था, यदि इसी को तुम काम [illegible] षार्थ" कहो तो सांस लेना भी-एक काम कहा जा [illegible] धमनियों में रुधिर का दौड़ना भी एक काम कहा जा स[illegible] लेकिन नहीं, यह कोई काम नहीं हुआ। यह तो यंत्र की [illegible] आप, बिना अपनी इच्छा के होने वाला काम है। इसमें [illegible] कहां? यह तो बिना प्रयोजन होने वाला स्वतः कार्य है। [illegible] तुम्हारा कोई इरादा, कोई नीयत, कोई मतलब या उद्देश्य [illegible] है। ऐसे कामों की तुम्हारी कोई ज़िम्मेदारी या जबावदेही नहीं है। हमारे धर्म शास्त्रों के अनुसार यह 'पुरुषार्थ" नहीं हुआ।

अगर तुम कोई काम करते हो और तुम कुछ और बात सोच रहे हो तो तुम्हारा वह काम खराब हो जायेगा। इस तरह तो बड़े बड़े बुद्धिमान और ज्ञानी लोग भी अन्यमनस्क (Absent-minded) हो सकते हैं। तब उनको अपने ऐसे काम में वांछित सफलता नहीं मिलती है। याद रक्खो कि जो अपना पूरा मन लगा कर काम करते हैं, वही लोग बुद्धिमान कहलाते हैं। ऐसे ही लोग अपने जीवन में बड़े से बड़े और आश्चर्यजनक काम कर सके हैं। Newton (न्यूटन) जो एक बड़ा वैज्ञानिक था,

वह अपनी प्रयोगशाला में रात दिन एकाग्रचित्त रहकर काम में जुटा रहता था। फलस्वरूप, लगभग उसके सभी अनुसंधान (Researches) महत्वपूर्ण थे। वह कवि जो एकाग्र-चित्त हो कर अपनी कविता लिखता है, वह सचमुच में महान कवि हो जाता है। वह साहित्यिक-संसार में सनसनी मचा देता है। इसी प्रकार जो गणितज्ञ मन लगाकर, एक-चित होकर अपनी गणित की समस्याओं की पूर्ति करता है, वह सफल रहता है। किसी काम में सफलता के लिये पूर्ण रूप से एकाग्र-चित्त होकर काम करना [illegible]वश्यक है। यदि इस प्रकार वह काम नहीं हो पाता तो वह [illegible]ब हो जाता है और उस काम में मनुष्य को बदनामी, [illegible]और अपयश का सामना करना पड़ता है। इन सब बातों [illegible]होता है कि एकाग्रता और केन्द्रीकरण से मन की चंचलता [illegible]है और मन वश में किया जा सकता है और जिस के मन [illegible]ता दूर हो गई है, उसको स्वत: शान्ति मिल गई। जितनी [illegible]अधिक चित्त की एकाग्रता होगी उतनी ही अधिक मन को [illegible]न्ति प्राप्त होगी। इसका उलटा भी ठीक है। बिना शान्ति [illegible]एकाग्रता नहीं आ पाती और बिना एकाग्रता के सफलता नहीं उपलब्ध होती। अत: हमको हर सम्भव प्रयास से मन को शान्त रखना है जिसके लिये हमें चित्त को एकाग्र करने का अभ्यास करना आवश्यक है। सच्ची बात तो यह है कि जब तक किसी मनुष्य का जीवन बिना किसी चिन्ता, दु:ख, दर्द या क्लेश के सुगमता से सुखद चलता रहता है, तब तक तो वह शान्त रह ही सकता है। ऐसे अनुकूल वातावरण में अगर तुम शान्त रहो तो यह कोई बड़ी बात नहीं है। किन्तु तुम तुरन्त अपना सन्तुलन खो बैठते हो, जब कोई तुम्हारा विरोध करता है या जब तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई

काम खराब हो जाता है, जब कोई ईर्षालु अथवा प्रतिशोधी मनुष्य, अपनी पुरानी दुश्मनी निकालने के लिये तुम्हारा अपमान करता है या तुमको अकारण गाली इत्यादि देकर तुमको उत्तेजित करना चाहता है, तो तुमको फ़ौरन क्रोध आ जाता है। कभी कभी ऐसे ही नीच और अविवेकी तथा पशु-प्रकृति कहलाने वाले मनुष्यों से जीवन में अकारण पाला पड़ ही जाता है। ठीक ऐसी ही प्रतिकूल और कष्टकर अवस्थाओं में तुम्हारी सहनशीलता की सच्ची परीक्षा होती है। उस समय, तुमको क्या करना चाहिये ? क्या तब, तुमको भी बदले की भावना से उत्तेजित होकर वैसी ही ग[illegible] गलौज और असभ्य आचरण करना चाहिये ? यदि तुम भ[illegible] ही करने लग जाओगे, तब तो अशान्ति के कुचक्र का क[illegible] नहीं हो पायेगा। नहीं, नहीं ! तुम में बदला लेने की भाव[illegible] विचार भी नहीं आना चाहिये। क़ानून को अपने हाथ में म[illegible] साधक को और सत्य पथ पर चलने वालों को ऐसा प्रतिशोधा[illegible] कार्य करना कदापि शोभा नहीं देता। यदि तुम्हारा प्रतिद्वन्द[illegible] तुम्हारे सच्चे और अथक प्रयासों के पश्चात् भी, अपनी पशु[illegible] असभ्यता और अविवेकी हठ को नहीं छोड़ता और यदि तुम में इतनी सहन-शीलता का विकास अभी नहीं हुआ है कि तुम इन तमाम अविवेकी और विषावत अत्याचारों को चुप चाप शान्ति से सहन कर सको, तब तो भलाई इसी में है कि तुम छूत और संक्रामक वातावरण से जितना शीघ्र बन पड़े दूर भाग जाओ, जैसे कि कोई छूत की बीमारी के रोगी से भागता है। इस से तुम गंदे, असभ्य, अरुचिकर और अप्रिय वायु-मण्डल से अपने को दूर रख सकोगे जो तुम्हारी शान्ति को बुरी तरह भग कर सकता है। महत्वपूर्ण बात तो यह है कि तुम अच्छी संगत में रहो, जिससे तुम ऊंचे उठ

सको। परन्तु यदि अच्छी संगत या सत्संग न मिल सके, तो गंदे वातावरण में रहने से अकेले ही रहना कहीं अच्छा है।

हां, किन्तु अगर तुम समझते हो कि तुम में इतनी शक्ति है कि तुम किसी के अविवेकी और असभ्य व्यवहार को ज्ञान पूर्वक सहन कर सकते हो, तो बिना अपने मन में कोई मैल लाए हुये, उसे सहर्ष सहन करो। याद रक्खो कि कोई भी अपमान कोई भी दुर्व्यवहार, गाली गलौज इत्यादि तुम्हारा उस समय तक कुछ भी [illegible] बिगाड़ सकते, जब तक कि तुम उन अपमान-जनित शब्दों [illegible] स्वयं ध्यान न दो, और उनको अपने ऊपर न ले लो, अथवा [illegible] अपने लिये न समझो। यह तनिक कठिन सा लगता है, [illegible] लगातार अभ्यास से अति सहज भी हो जाता है। अतः [illegible] अविवेकी प्रतिद्वन्दी की विषाक्त बातों को हंस कर उड़ा दो [illegible] रहे कि मनुष्य के बड़प्पन, उदारता और महानता की इससे [illegible]छी और निरापद कोई अन्य कसौटी नहीं है कि वह अपमान-[illegible]क और विषाक्त अभिव्यन्जनाओं की ओर कोई भी ध्यान न दे। यही उचित है कि तुम ऐसे अशिष्ट वाक्यों को अस्वीकार करके उन की उपेक्षा करो, उनकी अवहेलना करो। इसी में तुम्हारा बड़प्पन है और इसी में तुम्हारी महानता भी है। इसी में तुम्हारा कल्याण है, इसी में तुम्हारी शान्ति भी बनी रह सकती है।

संसार के किसी भी दुर्व्यवहार और दुर्वाक्य से अपने को परेशान मत होने दो। किसी भी प्रकार अपने को उत्तेजित करके अपने मन का सन्तुलन मत खोओ। यदि आवश्यक हो तो अपने आक्रमणशील, झगड़ालू, अविवेकी और विद्वेषी प्रतिद्वन्दी से ऐसा ही सम्बन्ध रक्खो, जैसे कि एक डाक्टर अपने रोगी (मरीज़)

से सम्पर्क रखता है जिससे कि उसको रोगी के रोग की छूत न लगने पावे। उसकी बात शान्ति से मुस्करा कर सुनो, जैसे कि तुम एक आसक्ति-रहित साक्षी हो। तुम शरीर, मन या बुद्धि नहीं हो। तुम तो आत्मा हो जो अपमान और मान-हानि से बहुत ऊंचे और बहुत परे हो। फिर तुम क्षुब्ध क्यों हो ? क्यों तुम्हारे माथे पर शिकन आने पावे ? उत्तेजित करने वाले और मन में क्रोधाग्नि की छूत पैदा करने वाले इन तीखे और विषैले वाक्यों पर ध्यान ही मत दो। धीरे-धीरे यह अभ्यास सुगम, सरल और साध्य हो जायेगा।

प्यारे, ज़रा सोचो ! यद्यपि तुम्हारे अविवेकी प्रति[illegible] का शरीर बढ़कर खूब लम्बा चौड़ा और सुदृढ़ हो गया है, [illegible] उसी अनुपात में उसकी बुद्धि का विकास नहीं हो पाया है। [illegible] तो जवान हो गया है, किन्तु बुद्धि तो अभी बच्चों जैसी बनी हु[illegible] मानो वह अभी मानसिक स्तर पर बच्चा ही है, और बच्चा त[illegible] बच्चा ही है। बुद्धिमान और समझदार लोग बच्चों की बातों [illegible] ओर ध्यान नहीं देते हैं। बच्चों की बातों को सज्ञान लोग हंस कर उड़ा देते हैं। बच्चे तो यह समझ ही नहीं पाते कि जो कुछ वह कह रहे हैं, वह उचित है या अनुचित। यह सब कुछ सोचने विचारने की उनमें बुद्धि ही नहीं होती है। ऐसी हालत में तुम उनके मानसिक स्वास्थ्य, निर्दोष बुद्धि और उदार स्वभाव के लिये ईश्वर से प्रार्थना करो। वह लोग तुम्हारी दया के पात्र हैं, क्रोध के नहीं। उनकी बच्चों जैसी बातों पर अपना मन मत बिगाड़ो। तुम तो समझदार हो। तुम तो बच्चे नहीं हो।

जो तुम पर दोषारोपण करते हैं, या जो तुमको अकारण बदनाम करते हैं, उनके प्रति संवेदना, अनुकम्पा और सहानुभूति

की भावना रक्खो। उनसे घृणा मत करो। तुमको यदि अपने ईश्वरत्व का ज्ञान रहे, तो अज्ञानता का सारा अंधकार स्वयं ही नष्ट हो जायेगा। वेदान्त के ज्ञान को अपने सामने रक्खो। भावपूर्ण मन से ओम् का उच्चारण करो और यह ध्यान में रक्खो कि तुम सच्चिदानन्द स्वरूप हो। ऐसा करने से उत्तेजना होने पर भी तुम अपना मानसिक सन्तुलन बनाए रखोगे और शान्त चित्त भी बने रहोगे।

ईश्वर को मत भूलो :–

किसी काम के करते समय, मनुष्य के मन (Mind) का [illegible]ाग ख़ाली रहता है, घूमते समय, भोजन बनाते समय या [illegible] और काम करते समय आप के मन (दिमाग़) का कुछ न [illegible] भाग खाली अवश्य रहता है। एक मेहनती और ज़िम्मेदार [illegible]र्थी अपने मन को थोड़ा बहुत किसी न किसी विचार में लगाये [illegible]ा है, कोई कोई तो खाते समय भी कुछ न कुछ सोच विचार करते रहते हैं। यदि मनुष्य अपने मन को पूर्ण रूप से किसी अच्छे और उपयोगी काम में बराबर लगाये रक्खे तो और भी अधिक अच्छा है। राम अपना अनुभव बतलाता है। स्नान करते समय या बाहर घूमने जाते समय, अपने मन में राम गणित के प्रश्नों के सम्बन्ध में विचार किया करता था कभी कभी तो अन्य प्रश्नों के बारे में भी सोचा करता था और मन ही मन उनका समाधान भी निकाला करता था।

चित्त की शान्ति के लिये खाली मन को ईश्वर की याद मे भरकर रक्खा जाय, तो यह सबसे अधिक लाभदायक होगा। जानते हो परमात्मा को अपने मन में रखने का क्या अर्थ है? ईश्वर तो आनन्दस्वरूप है। ईश्वर को दिल में याद रखने का

प्रयोजन यह हुआ कि मन सच्चिदानन्द भगवान से भर जायगा और मनुष्य हर अवस्था में आनन्दित रहेगा। जो मनुष्य परमात्मा को हर दम याद रखता है मानो वह सदा परमात्मा के साथ रहता है। परमात्मा उसमें रहता है और वह मनुष्य परमात्मा में रहता है। ऐसा मनुष्य संसार की चिन्ताओं से आज़ाद रहता है। वह सदा प्रसन्न चित्त रहता है। ऐसी प्रसन्नता इन्द्रियजनित सुखों में तुमको कदापि नहीं मिल सकती और न स्त्री, बच्चों, धन-दौलत, पदवी या ख्याति के अनुभव में ही मिल सकती है। ईश्वर को याद रखने वाला मनुष्य सदा प्रसन्न रहेगा। जो मनुष्य प्रसन्न चित्त है, उसमें कोई चिन्ता रह ही नहीं सकती चिन्ता-रहित मनुष्य शान्ति को प्राप्त कर सकता है। अतः मनुष्य को हर समय, भी काम करते समय, अपने खाली मन में ईश्वर का स्मरण बरा करते रहना उचित है, जिससे कि वह ईश्वरीय शान्ति का आन उठा सके।

आनन्द अपने अन्तर में है :-

अरे प्यारे! आनन्द तो अपने ही मन के अन्दर है। तुमने देखा या सुना होगा कि बहुधा जब फ़ौज का सिपाही युद्ध में लड़ने जाता है, तो उसे मदिरा पिला दी जाती है, जिससे कि उसे नशा आ जाता है, जिसके कारण उसके हृदय में निर्भयता भर उठती है। तब न उसे किसी को मारने में संकोच होता है और न स्वयं अपने मरने का भय होता है। किन्तु इस प्रकार का कृत्रिम नशा केवल क्षणिक होता है। ज़रा सोचिये कि जब आप को कोई गहरी चिन्ता होती है तो कोई भी, कितना भी बाहरी सुख आपको सुखी नहीं कर सकता है, क्योंकि आप का मन दुखी होता है। और जब

आप के मन में ख़ुशी भरी होती है, तो कोई भी दु:ख आपको दुखी नहीं कर सकता, क्योंकि आप के मन के अन्दर आनन्द भरा है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि यदि आप के अन्दर का मन दुखी है, तो आप दुखी हैं और यदि आप के अन्दर का मन सुखी है, तो आप सुखी हैं। किन्तु यह याद रहे कि आप की वास्तविक आत्मा तो स्वभाव से ही सदा आनन्द का स्वरूप है। फिर निर्भय होने के लिये थोड़ी देर क़ायम रहने वाले नशे का प्रयोग आप क्यों करते हैं ? आप की आत्मा तो अद्वितीय है, निर्द्वन्द है। उसके सिवा कोई दूसरा तो है ही नहीं। तब भला कौन किससे डरे ? किसको, [illegible] किस का डर हो सकता है ? जब तुम्हारे सिवाय कोई दूसरा [illegible] नहीं। और जब तुम में किसी प्रकार का भय नहीं; तो सब [illegible]नन्द ही आनन्द है। अन्य मनुष्य चाहे वह कोई भी हो, हिन्दू [illegible]लमान या ईसाई, उसका आनन्द उसी के अन्दर है। यह आनन्द [illegible]सकी वास्तविक आत्मा के अन्दर का आनन्द है, जो कभी नहीं मिटता। तब आनन्द के लिये बाहर के इन्द्रिय-जनित पदार्थों पर अपने आपको क्यों निर्भर बनाते हो ? अपनी वास्तविक आत्मा के शुद्ध स्वरूप का अनुभव करो और निजानन्द में सदा मस्त रहो। अशान्ति तो तब पास फटक ही नहीं सकती, क्योंकि शान्ति का वास्तविक स्वरूप आनन्द ही तो है, जो अपने अन्दर ही है।

एक मनुष्य भंग पी रहा था। उसके पास एक दूसरा मनुष्य आया। उसने उसको भी एक प्याला भंग का दिया। उस मनुष्य ने उस प्याले को पहले कान से लगाया, और पूछा कि "ऐ भंग तू कैसी है, कि जो व्यक्ति तुझे पी लेता है, वह मस्त हो जाता है ? तू तो सबको मस्त बना देने वाली है।" प्याले की भंग ने उत्तर दिया कि "मैं तो किसी को उन्मत्त नहीं करती। यदि मैं उन्मत्त

करती होती, तो प्याला भी उन्मत्त हो जाता। वह कपड़ा जिसमें मुझे छाना गया है, वह भी उन्मत्त हो जाता। वह कूंडी या डन्डा जिससे मैं पीसी गई हूं वह भी उन्मत्त हो गया होता। किन्तु यह सब तो कोई भी मतवाले या नशे में उन्मत्त नहीं हुए। सच बात तो यह है कि तू स्वयं नशे का स्रोत है। और तू दुनिया में मुझे झूठा ही बदनाम करता है।"

इससे निष्कर्ष यह निकला कि भंग या शराब हममें मस्ती नहीं भर सकती। मस्ती तो स्वयं हमारे ही अन्दर है। यदि हम हीन हों, तो मस्ती किसको आए ? मस्ती हमारे ही अन्दर है बाहर के पदार्थों में नहीं। उसको बाहर ढूंढना अज्ञानता अ पागलपन है।

एक शराब पीने वाले ने एक शराब की दुकान पर जाव शराब बेचने वाले से कहा कि "एक पैसे की शराब दे दो।" दुकानदार ने कहा कि "क्यों एक पैसे का खून करते हो ? क्यों यह एक पैसा फ़िज़ूल खर्च करते हो ? इस एक पैसे को किसी और काम में खर्च करो। एक पैसे की शराब में तो ज़रा सा भी नशा नहीं होगा।" शराब खरीदने वाले ने कहा "तुमको इससे क्या कि मुझको नशा होगा या नहीं। मैं इस एक पैसे की शराब मूंछ में लगा लूंगा जिससे लोग यह जानें कि मैंने शराब पी है। मेरी निजी मस्ती का नशा मुझ में ही है।" मस्ती तो स्वयं आप के अन्दर ही मौजूद है। आप अपनी मस्ती को अपने भीतर से निकालें और उससे लाभान्वित हों, उसका उपाय राम बतलाता है। वह उपाय यह है कि प्रथम तो प्रातःकाल धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन करने का अभ्यास करें। उसके पश्चात् सारे दिन दुनिया का जो भी काम

काज आप करते हैं, उसको बराबर करते रहें। परन्तु प्रातःकाल धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन से जो ज्ञान या हार्दिक प्रसन्नता उत्पन्न हुई थी उस ज्ञान को न भूलें और उस प्रसन्नता को बराबर बनाये रखें। कोई ऐसा पद या वाक्य ज़बान पर रखना चाहिए जैसे "हाथ तो हो काम में और मन हो राम में।" राम ऐसी बात कभी कहता ही नहीं जो उसके अनुभव में न आई हो। राम तो अपनी बीती बातों को आपके सामने रखता है। मन को इस प्रकार साधो जैसे लोग बाज़ (पक्षी) को सिखा लेते हैं। वह अपने स्वामी के हाथ पर बैठा रहता है और अवसर पाते ही हवा में उड़कर दूर [illegible] अपना शिकार पकड़ता है और फिर वापस आकर उसी हाथ [illegible] बैठ जाता है, उसी प्रकार तुम को भी उचित है कि तुम अपने मन को संसारी काम में लगाओ, किन्तु काम के बाद फिर उसको प्रातःकाल वाली प्रसन्नता में मग्न हो जाने दो, चाहे वह थोड़ी देर [illegible] लिए ही क्यों न हो।

आपने देखा होगा कि जब किसी कुत्ते का स्वामी उसके पास मौजूद होता है, तो वह शेर हो जाता है किन्तु जब वह अपने मालिक के साथ नहीं होता है तो वह गीदड़ की तरह डरपोक हो जाता है। उसकी हिम्मत उतनी नहीं रह जाती जितनी अपने मालिक के साथ रहने पर होती है, इसी प्रकार यदि आप अपने हृदय में ईश्वर को याद रखें तो आपकी भी हिम्मत बनी रहेगी और ईश्वर की याद अपने मन में रखने के कारण आपके सभी काम अच्छे से अच्छे होगें, जो काम ईश्वर की याद के बिना आप अकेले कर सकने के कभी योग्य नहीं थे। जब बाज़ जैसा पक्षी सधाया और सिखाया जा सकता है तो बड़े दुःख और शर्म की बात है कि आप मन के मालिक होते हुए भी अपने मन को नियंत्रण में नहीं रख पाते हैं। बड़ी लज्जा

की बात है कि आप एक कुत्ते या बाज़ जैसे पक्षी से भी नीचे गिरे हुए हैं।

कीड़ा ज़रा सा और वह पत्थर में घर करे।
इन्सां नहीं, न जो दिले दिलवर में घर करे।

मैदानों में एक पक्षी होता है जिसे कूंज कहते हैं। उनके विषय में यही कहा जाता है यदि उसकी मां मर जाये तो उसके अंडे बच्चे भी मर जाते हैं, और यदि मां जीती है तो उसके बच्चे भी जीते रहते हैं। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि उन अंडे बच्चों का पालन पोषण मां के ख़याल या उनकी संकल्प शक्ति पर निर्भर होता है। मां चाहे जितनी दूर रहे उसके बच्चे उसकी संकल्प शक्ति से ही ज़िन्दा रहते हैं। यदि यह सच है कि मां पक्षी के शुभ संकल्प मात्र से उसके बच्चे स्वस्थ और अच्छे रह सकते हैं तो क्या यह सम्भव नहीं कि मनुष्य राम का ख़याल हर समय अपने दिल में जगाये रखे और अपने उस ख़याल में ऐसा पग जाय कि सब प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त हो जाय।

आप जानते ही हैं कि एक गर्भवती स्त्री अपने घर के काम काज में व्यस्त रहती है किन्तु अपने गर्भ के बच्चे को कभी नहीं भूलती। तब तो यह बड़े दुःख की बात है कि अपने अन्दर वाले राम को, अपने परमेश्वर को, जो हर समय उसके हृदय में विराजमान है, यह मनुष्य भुलाए रखता है। क्या मनुष्य एक साधारण स्त्री से भी गया गुज़रा है।

क्लेशों से लाभ :-

प्यारो, देखो, हाथी अपने अंकुश की चोट के संकेत से सारा काम ठीक ठीक करता है। मनुष्य के दुःख, तकलीफ़ और क्लेश

इत्यादि भी अंकुश के समान हैं जिसके कारण मनुष्य को विकास के सच्चे रास्ते पर लगाया जाता है, किन्तु यह बड़े अफ़सोस की बात है कि मनुष्य अपने दु:खों और मुसीबतों को भूल जाता है और अपनी पुरानी भूलों और पापों को बार-बार दोहराता रहता है। यह बड़ी लज्जा की बात है कि मनुष्य अपने दु:ख क्लेश और मुसीबत रूपी अंकुशों के इशारों को समझते हुए भी नही समझता और बार-बार वही ग़लती करता है। क्या यह बड़े आश्चर्य की बात नहीं है? आध्यात्मिक विकास और शान्ति के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य अपनी बीमारियों और मुसीबतों से शिक्षा ग्रहण करे और इस प्रकार शान्ति पाकर सतपथ पर अग्रसर होता रहे। यह याद रहे कि बिना चित्त में शान्ति प्राप्त किये हुए कोई भी मनुष्य ख़ातिर ख्वाह (मन चाही) तरक्क़ी नहीं कर सकता। वह कदापि विकास के पथ पर नहीं बढ़ सकता। अत: चित्त की शान्ति, विकास के लिए परम आवश्यक तत्व है।

मुसीबतों, बीमारियों, तकलीफ़ों और क्लेशों को ईश्वर का आशीर्वाद समझो, जो हाथी के अंकुश की नाईं तुमको ठीक रास्ते पर लगाये रहते हैं और इधर उधर भटकने नहीं देते। वह लोग वास्तव में बड़े भाग्यशाली हैं जो बिना भुगते हुए दूसरों के अनुभवों से स्वयं लाभान्वित होकर शान्ति प्राप्त करते हैं और विकास के पथ पर स्वयं आगे बढ़ते रहते हैं।

दैवी जीवन अपनाओ :-

प्राणी-शास्त्रियों (Naturalists) की खोज में उनको एक कीड़ा मिला जो वायु को अपने चारों ओर लपेटे हुए गंदले से

गंदले जल में घुस जाता है, किन्तु वह स्वयं तनिक भी गन्दा नहीं हो पाता है और जब वायु का कोष (चोला) बिगड़ जाता है तो फिर वायु में ऊपर आकर वायु का चोला पहन लेता है। यही हाल दुनिया का है। यहां शोक, दुःख, क्लेश और मुसीबतों की गन्दगी तो अवश्य ही है किन्तु यदि तुम इनसे बचना चाहो तो शुद्ध और सात्विक विचारों की वायु अपने चारों ओर फैलाते रहो। इस प्रकार सांसारिक चिन्ताओं की विषैली गैस तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी और फिर तुम प्रसन्नता और शान्ति से, बिना दुखी हुए इस दुनिया के गन्दे जल से अपने को सुरक्षित रख सकोगे। दुनिया के किसी भाग में चले जाओ, कैसी भी गन्दगी के वातावरण में पड़ जाओ, तुम्हारी कोई हानि नहीं होगी।

महान सन्तों के सत्संग से और धर्म शास्त्रों के उत्कृष्ट उपदेशों को अपने जीवन में प्रयोग करने से तुम्हारा यह सात्विक कवच सदैव ही सुन्दर, कुशल, सुदृढ़ और नया बना रहेगा। इससे तुम दुनिया में आज़ादी से घूम सकते हो और दुःख व मुसीबतों से अपने को बचाकर शान्ति प्राप्त कर सकते हो।

डाक्टर लोग प्लेग या ऐसी ही कोई छूत की बीमारी वाले रोगी को स्वस्थ लोगों से अलग रखते हैं, जिससे वह छूत की बीमारी उनको न लग जाये। इसी प्रकार यदि तुम्हें ईर्ष्या, द्वेष, पक्षपात, क्रोध अथवा घृणा के छूत की बीमारी लगी हो तो यही उचित है कि अपने तथा दूसरों के हित के लिए तुम दूसरे लोगों से अपने को अलग रक्खो। एकान्त में या अलग कोठरी में अपने को बन्द रखो जिससे कि तुम्हारी अशान्ति की छूत दूसरों को न लग पाये और तुम दूसरों की शान्ति को भंग न कर सको। और भी एक बात है,

वह यह कि दूसरे साधारण लोगों को भी चाहिये कि वह इस प्रकार मानसिक छूत की बीमारी वाले लोगों से दूर रहें जिससे उनकी अपनी शान्ति सही सलामत बनी रहे।

ईश्वर से बल प्राप्त करो :–

यूनान की एक पौराणिक कहानी है जिसमें हरक्यूलीज की किसी व्यक्ति से लड़ाई का वर्णन है। हरक्यूलीज़ ने उसको पछाड़ दिया, पर भूमि उस व्यक्ति की माता थी। इसलिये जब वह हरा-कर भूमि पर गिरा दिया जाता था तो उसकी गई हुई शक्ति उसको पुनः वापिस मिल जाती थी। हरक्यूलीज़ ने उसको कई बार पछाड़ा और भूमि पर लिटा दिया, किन्तु भूमि पर गिरते ही उसकी सारी थकान दूर हो जाती थी और उसमें पुनः शक्ति आ जाती थी, क्योंकि भूमि उसकी माता थी जो अपने बेटे को बराबर शक्ति प्रदान करती रहती थी। इसका अर्थ क्या हुआ ? इससे हम एक शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। हम जानते हैं कि ईश्वर सर्वाधार है। वह ही हमारी सब की माता है जो सर्वशक्तिमान है। अतः जो भी मानसिक रूप से उस परमात्मा से संसर्ग या संपर्क रखता है उसकी शक्ति का कभी ह्रास नहीं होता। उसको कभी ताक़त की कमी अनुभव नही होती। क्योंकि वह सर्वशक्तिमान परमात्मा तो शक्ति का भंडार है। जो लोग उस परमात्मा पर ईमान नहीं लाते उनको हम क्या कहें, उनको तो साफ़ शब्दों में कुछ बेईमान कहना अनुचित न होगा, ऐसे लोग सत्यपथ पर नहीं चलते। माता श्रुति, वेद और अन्य धर्मशास्त्र ईश्वर के अस्तित्व की घोषणा करते हैं। क्या इसमें भी कोई सन्देह है। राम तो अपने निजी अनुभव से कहता है कि ईश्वर है और वह सब जगह और सब में बराबर है, विश्व का

एक-एक कण उसी से अनुप्राणित हो रहा है। उसको प्रत्यक्ष देखने और समझने के लिए केवल ज्ञान चक्षु की आवश्यकता है। फिर भी इस सृष्टि का नियमपूर्वक संचालन देखकर उसकी हस्ती से इन्कार नहीं किया जा सकता। अतः उसी से शक्ति प्राप्त करो।

डार्विन (Darwin), हक्सले, हरबर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) और अन्य लोग यदि ईश्वर की सत्ता को आपकी तरह नहीं मानते तो न मानें। किन्तु इन लोगों का व्यावहारिक जीवन और दैनिक चरित्र तो न्याय और सदाचारी के सद्‌गुणों और विश्वव्यापी वास्तविकता को स्वीकार करने से इनकार नहीं करता। और फिर आखिर ईश्वर है क्या? वह न्याय और सदाचार का मूर्तिमान आदर्श ही तो है, वह वास्तविकता ही तो है, जिसमें कभी कोई परिवर्तन नहीं होता, वह चिरस्थायी प्रकृति के नियमों में अनुभव किया जा सकता है। वह आज व कल सदा सदा एक समान रहता है। सबमें सब कुछ वही तो है। **वे लोग जो सदाचारी हैं और न्याय-संगत तथा स्वार्थ-रहित जीवन दूसरों की भलाई व सेवा में बिताते हैं सच पूछा जाये तो वे ही ईश्वर की सच्ची सेवा करते हैं।** भले ही बादलों के ऊपर कहीं रहने वाले किसी साकार ईश्वर में, आप की तरह उनका अन्धविश्वास न हो तो भी वे अपने आचरण से आस्तिक हैं। अतः उचित यही है कि पहले हम उस परमेश्वर को यथा-शक्ति समझने और अनुभव करने का अच्छी तरह प्रयास करें। वास्तव में वे भाग्यशाली हैं जिन्होंने ईश्वर की अनुभूति ठीक ठीक प्राप्त कर ली है। तुम अब बुड्ढे हो गये हो और सांसारिक जीवन से ऊब उठे हो, इस बुढ़ापे में भी यदि तुम उस सर्वव्यापी परमात्मा में पूर्ण विश्वास कर सको तो तुम अब भी तमाम दुःखों, तकलीफों, मुसीबतों, क्लेशों और

अनेक सांसारिक चिन्ताओं से अपने को मुक्त कर सकते हो। तब तुम अपने में शक्ति, बल और ओजस्विता का अनुभव करने लग जाओगे और उसी प्रकार तुम पुनः उत्साहपूर्ण, बलशाली और तरोताज़ा बन जाओगे जैसे कि हरक्यूलीज़ का प्रतिद्वन्दी किन्तु शर्त यह है कि तुम अपना संसर्ग उस सर्वशक्तिमान ईश्वर से बराबर बनाए रखो। यदि तुम अपने दैनिक जीवन में सफलता चाहते हो, यदि तुम अपने दैनिक संघर्षों में विजयी बनना चाहते हो, यदि तुम चाहते हो कि संसार में तुम अजेय रहो तो उस सर्वशक्तिमान परमात्मा की सत्ता में अपना सच्चा और अडिग विश्वास बनाए रखो, जिससे कि तुम उससे शक्ति और प्रेरणा ले सको। यही तो वास्तविक सफल जीवन है जिसमें एक छत्र शान्ति का ही साम्राज्य है।

याद रहे कि निर्बल और कमज़ोर मनुष्य ही आसानी से, बिना सोचे समझे, उत्तेजित हो पड़ते हैं और अपने मस्तिष्क का संतुलन खोकर क्रोध में उबल पड़ते हैं। इस तरह आसानी से क्रोधित हो उठने वाला मनुष्य न तो युक्ति संगत होता है और न विवेकपूर्ण। शान्ति के अमृत के सुखद स्वाद का आनन्द वह भला कैसे उठा सकता है? यह तो केवल एक समर्थ और सक्षम मनुष्य ही है, जो अपने मनोविकारों, आवेगों और संवेगों पर नियंत्रण रख सकता है, केवल ऐसा ही व्यक्ति अपने को प्रसन्न और शान्त रखने में सफल हो सकेगा। चिड़चिड़ा, बद मिज़ाज, और हीनता के भावों से पीड़ित अविवेकी और निर्बल मनुष्य ज़रा सी बात में ही अकारण बौखला उठेगा। उसको भला शान्ति कहाँ? इसलिये यदि तुम शान्ति चाहते हो तो वह मनोबल, चरित्र-बल, सामर्थ्य और क्षमता अपने में उपलब्ध करो, जिस से कि तुम अपने

मन और विचारों पर नियंत्रण रख सको। यह शक्ति और बल तो तुम को केवल ईश्वर से ही मिलेगा, जो तमाम ऊर्जा का स्रोत है। अतः तुम ईश्वर के साथ अपना संबन्ध बनाये रक्खो, जिससे तुमको उससे बराबर शक्ति मिलती रहे। अपने में किसी प्रकार की निर्बलता मत आने दो, क्योंकि धर्मशास्त्रों ने कहा है कि निर्बलों को आत्म-साक्षात्कार नहीं हो सकता। इसलिये अपने आपको हर प्रकार से सामर्थ्यवान बनाओ, जिससे कि तुम सच्ची और लाभदायक शान्ति का आनन्द उठा सको।

राम अमेरिका में लगभग तीन वर्ष रहा। वहां उसने देखा कि लाखों स्त्री-पुरुष ऐसे हैं जो अपनी चिकित्सा आध्यात्मिक रीति से करते हैं और एशिया के बहुत से भाग ऐसे भी हैं, जहाँ की सरकारों ने बिना औषधि के रोग-निवारण करना उचित समझा है। इस आध्यात्मिक रीति से रोग निवारण करने में पहले तो डाक्टरों ने बहुत बाधाए डालीं, किन्तु अनेक विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक और चिकित्सा-शास्त्र के उत्तम और योग्य बुद्धिमान लोगों ने आगे चलकर इस सिद्धान्त को स्वीकार किया है।

प्रोफेसर जेम्स (Professor James) ने इस सम्बन्ध में इंगलैण्ड में बीस भाषण दिये हैं, और वह स्वयं यह स्वीकार करते हैं कि वह नया मत जो केवल ईश्वर के नाम और परमात्मा के ध्यान से ही चिकित्सा करना सिखलाता है, वह निस्संदेह उत्तम चिकित्सा है, क्योंकि वह ईश्वर से संबंधित है जो सब शक्तियों का स्रोत है। किन्तु यदि आजकल के अधूरे वैज्ञानिक इस सत्य की कोई संतोषजनक विवृति अथवा सफ़ाई नहीं दे पाते हैं तो वह उनकी ही कमज़ोरी प्रमाणित होती हैं। इससे सत्य पर कोई असर नहीं पड़ता। सत्य तो सत्य है ही।

आत्मा और भौतिक तत्व एक है :–

आजकल के कुछ वैज्ञानिकों और मनोवैज्ञानिकों का यह ख़याल है कि आध्यात्मिक शक्ति संसारी स्थूल पदार्थों पर कोई असर नहीं डाल सकती और न वह रोगों की सफलतापूर्वक चिकित्सा कर सकती है। उनका मत है कि आत्मा (Spirit) और भौतिक तत्व (Matter) अलग-अलग हैं, उनका सह-अस्तित्व नहीं हो सकता, किन्तु यह ग़लत है। यदि उन्होंने आत्मा (Spirit) के चमत्कार का अनुभव किया होता, तो वह ऐसा कदापि न कह सकते।

एक हिन्दी कवियत्री कहती है कि :–

"औषधि खाऊं, न बूटी खाऊं, ना कोई वैद्य बुलाऊं।
मीरा के तो वैद्य अविनाशी, उन्हीं को नब्ज़ दिखाऊं।।"

ईश्वर का सहारा लेने से मनुष्य के तीनों ताप भाग जाते हैं।

जिसके दिल में ईश्वर समा गये हैं, वह दोनों व्यावहारिक और पारमार्थिक उन्नतियां करता रहेगा, इसमें कोई संशय नहीं है। वह दुनिया के सब काम करते हुए भी ईश्वर में वैसे ही रहेगा, जैसे कि हमने पहले कहा है। यह ग़लत है कि :—

हम ख़ुदा ख्वाही व हम दुन्या-ए-दूं।
ईं ख़यालस्तो-मुहालस्तो जुनूं।।

अर्थ : एक ओर ईश्वर की प्राप्ति चाहना और दूसरी ओर दुनिया की भी उन्नति चाहना, यह दोनों भ्रम-मात्र हैं, कठिनाई मात्र हैं व पागलपन-मात्र हैं।

राम कहता है कि यह कहना ग़लत है और ऐसा ख़याल रखना भी ग़लत है और पागलपन है। उक्त वाक्य के लिये यह कहना चाहिये कि :—

ईं ख़यालस्तो, मुहालस्तो जुनूं।

अर्थ : ऐसा ख़याल करना ही पागलपन है।

ईश्वर को याद रखने से एवं उसका सहारा लेने से अगर हमको व्यावहारिक और परमार्थिक दोनों उन्नतियां नहीं मिलतीं तो ऐसे ईश्वर और धर्म को लेकर कोई क्या करेगा। परमेश्वर सर्वव्यापक है और दुनिया में हर जगह मौजूद है। उससे कुछ छिपा नहीं है। वह सब कुछ देखता है और प्रत्येक उन्नति में तुम्हारी सहायता करता है। यह ही धर्म का प्रयोजन है। यदि कोई धर्म तुम्हारी हर प्रकार से उन्नति और विकास में सहायक नहीं है, तो वह धर्म बेकार है। वह धर्म अमान्य है जो तुम्हें तमोगुण में प्रेरित करता है और जो तुम्हारे जीवन की यात्रा में तुम्हें आगे बढ़ाने में तुम्हारी मदद नहीं करता।

यह बिल्कुल ग़लत है कि ईश्वर और दुनिया अलग-अलग हैं। इसका तो मतलब यह हुआ कि दुनिया ने ईश्वर को सीमित कर दिया, और जब दोनों एक हैं तो यह कहना भी ग़लत है कि व्यावहारिक और परमार्थिक उन्नतियां साथ-साथ नहीं हो सकती। यदि किसी मनुष्य ने धार्मिक जीवन में उन्नति की है तो यदि वह चाहे, सांसारिक उन्नति उसको अपने आप मिल जावेगी। वह मनुष्य जो ईश्वर से एक है, वह तो ईश्वर ही है। ईश्वर का एक सच्चा भक्त यदि चाहे तो संसारी सम्पन्नता और परमार्थिक उन्नति दोनों प्राप्त कर सकता है। यदि भक्त चाहे तो दोनों

उन्नतियां साथ-साथ चल सकती हैं। सर और पैर दोनों शरीर में साथ-साथ ही रहते हैं। जब यह शरीर आगे बढ़ता है तो यह दोनों भी साथ-साथ आगे को ही बढ़ेगें। यह असम्भव है कि पक्षी का एक पंख उसको कहीं ले जावे और दूसरा पंख उसको कहीं और ले जावे। पक्षी के दोनों पंख उसको केवल एक ही ओर ले जाने में सहायक होगें। यदि धर्म सच्चा है, तो सर्वोन्नति निश्चित है। जहां भगवान विष्णु हैं वहां उनकी अर्धांगिनी लक्ष्मी को भी होना ही चाहिये। इसका तात्पर्य यह है कि धन, दौलत या सांसारिक सम्पन्नता दोनों सत्य के साथ बंधी हुई हैं। सत्य ही भगवान विष्णु का रूप है और सत्य का पालन करना ही भगवान में रहना सहना है। जो भगवान में रहता-सहता है, उसमें नैतिक सद्गुण अपने आप ही आ जायेंगे। लक्ष्मी का बिना विष्णु (सत्य और सद्गुण) के बराबर बनी रहना असम्भव है। एक फ़ारसी कवि कहता है :—

हर जा कि सुल्तां ख़ेमाज़द ।
ग़ोग़ा न मानद आमरा ।।

अर्थ : जहां बादशाह सलामत (भगवान) डेरा डाल देते हैं, वहां साधारण लोगों का शोर-शराबा नहीं होता।

जहां सूर्य निकल आता है वहां अंधेरा या मच्छर नहीं टिक सकते, जहां चश्मा बहेगा, प्यासे वहां अपने आप पहुंच जायेंगे। इसी प्रकार जिस दिल में ईश्वर का वास हो, उस मनुष्य के पास यदि वह चाहे तो संसार की सभी वस्तुएं अपने आप आने लगेंगी। शर्त यह है कि दिल में सच्चा विश्वास होना चाहिये और उपाय

भी ठीक होना चाहिये। यदि उपाय या विधि बिगड़ गई तो सारा काम ही बिगड़ जायेगा, जैसे God (गाड) को उलट देने से Dog (डाग, कुत्ता) हो जाता है। इसी प्रकार यदि विधि या साधन को ठीक-ठीक लेकर आप चलेंगे तो आपको यह स्वयं मालूम हो जायेगा कि सिर पैर साथ-साथ ही चलते हैं। यदि सिर की जगह हम पैर ऊपर करके हाथों के बल चलें, तो हमारे ठीक-ठीक आगे बढ़ने में बाधा पड़ जायेगी। अतः विधि ठीक होनी चाहिये अर्थात् सिर को हवा में रखना चाहिये और पैरों को पृथ्वी पर होना चाहिए; तब तो प्रगति सरल और स्वाभाविक होगी अन्यथा नहीं। इसलिये यह परम आवश्यक है कि ईश्वर को याद रखने की विधि भी ठीक होनी चाहिये जिससे आध्यात्मिक प्रगति और विकास सुगमता और स्वाभाविक रूप से चल सकें।

ईश्वर को स्मरण करने की विधि :-

ईश्वर को अपने स्वार्थ के लिए मत याद करो। ईश्वर को निष्काम रूप से याद रक्खो। यह याद रहे कि परमात्मा तुम्हारा नौकर या ख़ानसामा नहीं है, जो तुम्हारे लिए खाने-पीने का इन्तज़ाम करे या रोज़गार तलाश करता फिरे या तुम्हारी बेटी के लिए कोई अच्छा सा वर ढूंढता फिरे। **ईश्वर को याद करते समय अपने आप को उसके समक्ष पूर्ण रूप से आत्म-समर्पण कर दो और अपने जीव-भाव को ईश्वरत्व के विश्वव्यापी भाव में विलीन कर दो, अर्थात् अपने जीव की परिछिन्नता को ईश्वर की अपरिछिन्नता में तल्लीन कर दो।** जिस प्रकार एक बूंद सागर में गिर कर अपना अस्तित्व खो देती है, उसी प्रकार ईश्वर की याद में तुम कुछ इस तरह डूब जाओ कि तुम तुम न रहो और

देहाध्यास से ऊपर होकर ईश्वर में खो जाओ। ईश्वर को याद करने की यही विधि ठीक है। यदि तुम यह विधि नहीं अपनाते, तो सब उल्टा-पुल्टा हो जायेगा और उसका पूरा लाभ तुम को न मिल सकेगा। सिर नीचे, पैर ऊपर करके चलना ठीक नहीं है। ऐसा न करो कि स्वार्थपूर्ण इच्छाओं को आगे रक्खो और ईश्वर को पीछे कर दो, यह तो घोड़े के आगे गाड़ी रखना है।

"It is to keep the cart before the horse."

यह विधि तो उल्टी है। गाड़ी के आगे घोड़ा रक्खो, तब तो गाड़ी चलेगी, अन्यथा नहीं। यदि विधि ठीक है तो सिर और पैर अपनी-अपनी जगह पर ठीक-ठीक काम करेंगे और उसका फल भी ठीक होगा अर्थात् अपने गंतव्य उद्देश्य की ओर तुम सुगमतासे प्रगति कर सकोगे। यदि तुम ईश्वर की आराधना ठीक-ठीक करोगे अर्थात् पूर्ण रूप से उस सच्चिदानन्द ब्रह्म में अपने आपको समर्पित कर दोगे तो आध्यात्मिक और भौतिक दोनों ही जगत तुम्हारे इशारे पर नाचेंगे और तुम विश्व के नियंत्रणकर्ता बन जाओगे।

अपना काम करने की विधि :–

एक कमसेरियट का गुमाश्ता (Commissariate) हज़ारों-लाखों रुपयों की रसद अपने हाथों से निकालता रहता है और सैकड़ों सिपाहियों के साथ वह अपना व्यवहार रखता है। तो भी उसको कभी भी यह भ्रम नहीं होता कि वह सामान मेरा है और न किसी सिपाही से उसकी कोई निजी मुहब्बत या आसक्ति होती है। अगर उसके भंडार में कमी हो जाये, तो उसे कोई चिन्ता नहीं और अगर उस कार्यालय में कोई लाभ न भी हो, या वह

नुक़सान पर चले तो भी उसे कोई परेशानी नहीं होती है, या अगर उसमें बहुत लाभ हो जाये तो भी उसको कोई ख़ुशी या प्रसन्नता नहीं होगी। उसकी तो केवल एक ही ज़िम्मेदारी है कि वह अपना काम सच्चाई और ईमानदारी से करता रहे। बस! और किसी झगड़े से उसका कोई मतलब नहीं। इस प्रकार ईश्वर का सच्चा भक्त वही है जो अपनी निजी सम्पत्ति को ईश्वर की सम्पत्ति समझता है और जो अपने निकट के संबंधियों को भी ईश्वर की धरोहर समझता है। जिस प्रकार से कमसेरियट का गुमाश्ता सिपाहियों के साथ अपनी कोई निजी आसक्ति नहीं रखता, इसी प्रकार, **ईश्वर का सच्चा भक्त अपने काम को ईश्वर का काम समझ कर सच्चाई और ईमानदारी से करता रहता है और अपने प्रत्येक सम्बन्धी को ईश्वर की धरोहर समझता है**, उनसे अपनी कोई निजी आसक्ति न रखते हुए भी उनके प्रति अपना पूरा कर्तव्य निभाता है। ठीक ऐसा ही मनुष्य अपने इहलोक और परलोक दोनों ही लोकों को सुधार लेता है। **तुमको तो केवल अपना काम करने का अधिकार है, उसके फल पर तुम्हें कोई अधिकार नहीं है, वह तो ईश्वर का काम है, उसी की ज़िम्मेदारी है।**

आपने देखा होगा कि संसारी मालिक अपने उसी सेवक या नौकर से प्रसन्न रहता है, जो अपना काम ईमानदारी और सच्चाई से ठीक-ठीक करता रहता है। किन्तु वह अपने उस नौकर से कदापि प्रसन्न नहीं रहता जो अपना काम तो ठीक से करता नहीं, वरन् रात-दिन ख़ुशामद और झूठे शिष्टाचार में लगा रहता है। भला ऐसे खुशामदी और निकम्मे नौकर को कौन पसंद करेगा? यह तो स्वाभाविक ही है कि मालिक अपने सच्चाई से काम करने वाले नौकर से ही प्रसन्न रहेगा, चाहे वह कुछ भी खुशामद और

चापलूसी करना न जानता हो। उसी प्रकार, ईश्वर भी उसी व्यक्ति से प्यार करता है, जो अपना काम सच्चाई और ज़िम्मेदारी से करता है, किन्तु जो मनुष्य केवल खुशामद, चापलूसी, और ज़बानी लल्लो-चप्पो करता रहता है, ईश्वर **उस** को कभी मुंह नहीं लगाता। केवल माला पर राम-राम जपते रहने से या बार-बार बिलैया-दंडवत करते रहने से या रामायण, क़ुरान, या इन्जील को बिना उनके उपदेशों को अपने जीवन में कार्यान्वित किये हुए, पढ़ते रहने से कोई काम नहीं बनेगा। इस से कोई लाभ नहीं है। यह तो ईश्वर को धोखा देना है। तुम दुनिया को भले ही धोखा दे लो किन्तु ईश्वर को तुम धोखा नहीं दे सकते। ईश्वर तो तुम्हारे अंदर की, बाहर की सब कुछ जानता है। भला उसकी आंखों में तुम धूल कैसे झोंक सकते हो? याद रहे कि ईश्वर उन्हीं को प्यार करता है और उन्हीं पर कृपा करता है जो सत्य को ही सबसे अधिक महत्व देते हैं, जो अपने कर्तव्यों को सच्चाई और ईमानदारी से तथा अनासक्ति भाव से करते रहते हैं, जो अपना काम ईश्वर का काम समझकर उसी के आश्रित होकर करते हैं, उस के फल की परवाह नहीं करते और जो प्रकृति के नियमों के अनुसार ही जीवन को चलाते हैं। थोड़े में, कर्म के दर्शन का यही सारांश है, जिसको साधारण रूप से "निष्काम कर्मयोग" कहते हैं। इस प्रकार से काम करने में, चाहे वह कैसा ही झंझट और उलझन का ही क्यों न हो, तुमको कभी परेशानी नहीं होगी और तुम्हारे हृदय में शान्ति भी बराबर बनी रहेगी।

गीता या अन्य किसी धार्मिक ग्रन्थ को एक बहुमूल्य कपड़े में बांधकर उसको खूंटी से लटका कर नित्य सबेरे और सायं-काल हाथ जोड़कर उसकी पूजा-सम्मान करते रहो, तो उससे क्या

लाभ ? इस प्रकार की पूजा-आरती बेकार है। तुमको गीता या अन्य किसी धार्मिक पुस्तक की पूजा नहीं करनी है। तुमको तो उस के उपदेश ग्रहण करके इस प्रकार अपने में पचा लेना है, जिससे कि वह सब तुम्हारे दैनिक जीवन में स्वतः कार्यान्वित होने लग जायें। यदि तुम ऐसा करने में सफल हो जाओ, तो सचमुच तुम धर्म-परायण बन जाओगे। यही तो शान्ति का जीवन है, जो तुम्हें विकास के मार्ग पर आगे बढ़ा सकता है।

सत्य ही धर्म की जड़ है। जो लोग सत्य और धर्म को नहीं अपनाते, वह कभी ईश्वर के भक्त नहीं हो सकते और न ही ईश्वर उन्हें अपनाता है। काम ऐसा होना चाहिए कि तुम दुनिया के धन्धे तो करते रहो किन्तु तुम्हारा मन परमेश्वर में लगा रहे और उसपर पूरा विश्वास भी बना रहे, ईश्वर चाहता है कि तुम अपना काम सच्चाई और ईमानदारी से करो, जैसाकि पहले कमसेरियट के गुमाश्ते की चर्चा राम कर चुका है, उसी की तरह अपने कर्तव्य का पालन बिना आसक्ति के करो। यह समस्त संसार ईश्वर का है और हम लोग केवल उसके गुमाश्ते की तरह उसका काम करने वाले हैं। तुम जब भी कोई काम करो तो यही विचार करो कि तुम केवल उसी प्रभु का काम कर रहे हो। इस प्रकार, उस काम को अच्छी से अच्छी तरह श्रद्धा, भक्ति और सच्चाई से करो। यदि तुम इस प्रकार से काम करोगे तो तुम अपना काम ठीक-ठीक तो करोगे ही, साथ ही ईश्वर को भी प्रसन्न रखोगे और अपने आप को भी। इस विधि से तुम संसार में एक भारी सफलता प्राप्त करोगे और साथ ही साथ तुम ईश्वर से भी अपना सम्बन्ध बनाये रक्खोगे। जो मनुष्य ईश्वर के संसर्ग में रहता है, उसको सारी

आवश्यकताएं पूरी होती रहती हैं और वह सदा ही संतुष्ट रहता है तथा शान्ति में भी वह विश्राम करता है।

ईश्वर सर्वव्यापी है :

एक संत के पास दो व्यक्ति आये और कहा कि हमको अपना चेला बना लीजिए। संत ने कहा कि मैं तुम लोगों को चेला बनाने से पहले तुम्हारी परीक्षा लूंगा। कुछ दिनों बाद संत ने दोनों को एक-एक कबूतर दिया और कहा कि, "मैं उसी को चेला बनाऊंगा जो कबूतर को मार कर मेरे पास पहले पहुंचेगा।" उसने एक शर्त यह भी रक्खी कि कबूतर को मारने का कार्य कोई भी न देख सके।

दोनों व्यक्ति अपने-अपने कबूतरों के साथ संत के पास से चल दिये। उनमें से एक ने तो अन्य लोगों की तरफ़ पीठ करके बाज़ार के एक कोने में ही अपने कबूतर की गर्दन मरोड़कर, उसे मार डाला। इसके पश्चात् वह संत के पास लौटकर बोला कि, "मुझे चेला बना लीजिए।" संत ने कहा, "ठहरो, दूसरे व्यक्ति को भी आ जाने दो।" उन्होंने दूसरे मनुष्य के वापस आने की दो दिन तक प्रतीक्षा की किन्तु वह न लौटा। तीसरे दिन जब वह लौटा तो उसने कहा, "महाराज, मैं आपकी शर्त पूरी करने में असफल रहा। आप कोई और दूसरी शर्त रखिये।" जब उससे इसका कारण पूछा गया तो उसने कहा, "इस कबूतर को एकान्त में मारने के लिए मैं जंगल में गया किन्तु वहां इस की सुन्दर और रसीली आंखें मुझे देख रही थी। जब जब मैंने इस की गर्दन मरोड़ने का प्रयास किया, तब तब मैंने देखा कि इसकी आखें मेरी ओर घूर रही थीं। उस समय मुझे आप की शर्त की बात याद आ जाती थी और मेरा हाथ रुक जाता

था। ऐसा लगता था मानो कबूतर के अंदर बैठा हुआ कोई मुझे देख रहा है। तब भला मैं उसे कैसे मार सकता था ? मुझे खेद है कि मैं आपकी शर्त पूरी न कर सका।" संत उसकी बातों से बहुत प्रसन्न हुआ और उसने कहा, "कबूतर की आखों द्वारा जो तुम्हें देख रहा था, वह परमेश्वर ही है। वह तो सर्वव्यापी है। जो उसके अस्तित्व को सब में और सब जगह अनुभव करता है, वही सच्चा संत है और वही व्यक्ति हर अवस्था में शान्त और संतुष्ट रह सकता है।

यह बड़े दुःख की बात है कि जब तुम चोरी या परगमन या और कोई पाप करने जाते हो, तो तुम उस परमेश्वर को भूल जाते हो, जो सर्वव्यापी है, जो सब में और सब जगह मौजूद है, जो सब कुछ देखता व सुनता है। भला उस परमेश्वर से क्या छिप सकता है ? संसार के लगभग सभी धर्म परमात्मा को सर्वव्यापी मानते हैं, किन्तु हम तो धर्म ग्रंथ को केवल पढ़ने के लिए ही पढ़ते हैं। खेद है कि हम उनको अपने जीवन के व्यवहार में लाने के लिए नहीं पढ़ते। इस समय यहां ज़िले के कलक्टर साहब सभापति के आसन पर विराजमान हैं, इसलिए आप सब लोग चुपचाप बैठे रहेंगे, कुछ भी नहीं बोलेंगे। किन्तु हम परमेश्वर का ज़रा भी ख़याल नहीं करते जो हर समय हमारे साथ रहता है, जो बादशाहों का बादशाह, जो सब लाटों का लाट और सब राजाओं का महाराज है, हम उसको ज़रा भी नहीं डरते। यदि हम ईश्वर को सर्वव्यापी जानते तो पाप करने में हमारा दिल क्या कांप न उठता और किसी सुन्दर स्त्री की ओर पाप की दृष्टि से देखने पर क्या हमारी आखें फूट न जातीं ? किन्तु बड़े दुःख की बात है कि हम उसकी उपेक्षा करते हैं और उसकी उपस्थिति की ज़रा सी भी

परवाह नहीं करते हैं। कितने शर्म की बात है ! ! ! यदि हम ईश्वर की सर्वव्यापकता में विश्वास करते होते, तो चुपचाप चोरी से रिश्वत या घूस लेते समय हमारा हाथ कांपने लग जाता। तुम को विश्वास है और तुम जानते भी हो कि ईश्वर सब कुछ देख रहा है, फिर भी यह बड़े दुःख और आश्चर्य की बात है कि तुम अपने इस ज्ञान को अपने जीवन में कार्यान्वित नहीं करते। यदि तुमने इस बात को जीवन में उतारा होता, तो तुम फ़रिश्तों, पैगम्बरों, अवतारों की श्रेणी में गिने जाते। **प्यारो, तुमको सद्‌गुणों और सत्य को अपने दैनिक-जीवन में उतारना ही होगा। बिना इसके दुःख और मुसीबतों से तुम्हें छुटकारा नहीं मिलेगा और न तुम्हारा मोक्ष या निर्वाण होगा।** एक पापी या दुराचारी मनुष्य को शान्ति का आनन्द कैसे नसीब हो सकता है ?

मुसीबतों से मत घबड़ाओ :

तुम कह सकते हो कि दुनिया के दुःख, मुसीबत, व परेशानियों को झेलते हुए हम कैसे शान्त रह सकते हैं ? यह तो असम्भव बात है, किन्तु प्यारो ! ज़रा सोचो और शान्ति से विचारो कि साधारणतया दुःख और मुसीबतों की आग से ही गुज़रकर मनुष्य विकास की बात सीखता है। डार्विन और हक्सले जैसे वैज्ञानिक कहते हैं कि विकास के लिए जीवन में संघर्ष बहुत आवश्यक है। राम इससे पूर्णरूप से इंकार नहीं करता किन्तु यह संघर्ष केवल वनस्पति जगत और पशु जगत के लिए ही अनिवार्य है, मनुष्यों के लिए यह सिद्धान्त सत्य नहीं है। **मनुष्यों का विकास सत्य, प्रेम और सहानुभूति द्वारा ही होता है, लड़ाई-झगड़ा, ईर्ष्या-द्वेष द्वारा कदापि नहीं।** मनुष्य में विवेक की शक्ति होती है, इसलिए

उसकी उन्नति और उस का विकास शिक्षा और अनुकूलन (Adaptation) द्वारा होता है। जितना ही विस्तार से हम अपने प्रेम के क्षेत्र को फैलायेंगे, उतना ही ऊंचा और उतना ही अधिक हमारा आध्यात्मिक उत्थान और विकास होगा। पशुओं को अपनी बुद्धि के विकास के लिए किसी विद्यालय में नहीं जाना होता, उनका विकास तो स्वाभाविक और नैसर्गिक (Instinctive) होता है, क्योंकि मनुष्य की भांति उनमें विवेक बुद्धि नहीं होती है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि मनुष्य दुःख और मुसीबतों द्वारा शिक्षा ग्रहण करता है, जो एक प्रकार से उसके लिए शुभ आशीर्वाद का काम करती हैं। इनके कारण वह बहुत नीचे नहीं गिर पाता। इन से हमको चेतावनी मिलती है और हम सावधान और सतर्क होकर अवनति करते करते रुक जाते हैं। इस प्रकार, हम स्वयं ही अपनी इच्छा से अपनी बुराइयों और दुर्गुणों को त्यागने लग जाते हैं तथा उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ने लग जाते हैं। यदि घोड़ा आगे बढ़ने से इन्कार करता है तो उसको चाबुक मारी जाती हैं। इसी प्रकार हमको भी दुःख, विपदा, बीमारी, और अनेक प्रकार की तकलीफ़ें भुगतना पड़ता है, यदि हम बार-बार ग़लतियां करते हैं या आगे बढ़ने और विकास के मार्ग पर चलने से इन्कार करते हैं। हमारी यह विपदा हमें बार-बार याद दिलाकर शिक्षा देती हैं कि हमें फिर-फिर मुसीबत भुगतनी पड़ेगी, यदि हम अपनी स्वार्थपरता और अपना पापपूर्ण व्यवहार नहीं त्यागते। हम केवल सच्चाई को अपनाकर उन्नति के मार्ग पर सदा ही आगे बढ़ते रह सकते हैं। अतः दुःख, मुसीबत, विपदा और बीमारी इत्यादि को हमें ईश्वर का आशीर्वाद ही समझना चाहिए, जिनके कारण हमारे

विकास में हमको सहायता मिलती है। इसके लिए हमको ईश्वर का कृतज्ञ होना चाहिए और विपदाओं तथा तकलीफ़ों से हिम्मत न हारनी चाहिए और न ही हमको उदास या मलोत्सर्ग होना चाहिए। प्रकृति की योजना में कभी कोई कमी या ग़लती नहीं होती। वह तो सदा सदा ही हमारी अच्छाई और भलाई के लिए ही होती है जिससे हमको शान्ति मिलती है, जो हमारे विकास के लिए परम आवश्यक उपकरण है।

आत्मसमर्पण :-

अमेरिका के एक बहुत बड़े गिरजाघर में एक बड़ा पियानो (बाजा) था। बहुधा यह केवल प्रत्येक रविवार को ही बजाया जाता था। एक रविवार को गिरजाघर में हज़ारों मनुष्यों का समूह था। उसमें एक अपरिचित मनुष्य ने वह बाजा बजाना चाहा, तो पादरी ने उसे वह बाजा बजाने से रोक दिया, क्योंकि उसके विचार से वह बाजा किसी अनाड़ी आदमी के बजाने से ख़राब हो जाता। तदनुसार, वह मनुष्य वहां से हटा दिया गया। जब गिरजाघर की कार्यवाही समाप्त हो गई तो वह मनुष्य चुपके-चुपके बाजे के पास पहुंचा और उसको बजाने लग गया। उसके बजाते ही उसमें से अच्छी ध्वनि निकलने लग गई, जिससे प्रभावित होकर गिरजे से बाहर जाने वाले भक्त भी ठहर गये और जो बाहर निकल गये थे वह भी लौट आये और गिरजाघर में फिर से भीड़ हो गई। लोग उस बाजे के मधुर रागों को सुनकर मस्त हो रहे थे जैसे कि बीन के राग पर सर्प बेसुध हो जाते हैं।

आखिर वह अपरिचित मनुष्य था कौन ? वह मनुष्य वही था जिसने इस बाजे का निर्माण किया और इस का आविष्कार

किया था। इसीलिए उस व्यक्ति के बाजा बजाने पर सभी लोग मुग्ध होने लग गये। जब लोगों को तथा उस पादरी को भी यह मालूम हुआ कि वह स्वयं उस बाजे का निर्माणकर्ता है, तब सब लोगों ने उसे और भी खुलकर बाजा बजाने की आज्ञा दी। फिर क्या था ! ! फिर तो उसने और भी उत्तम रीति से बाजा बजाकर लोगों को मस्त कर दिया। ठीक ऐसे ही हमारा शरीर भी एक बाजे के समान है। इसमें पादरी कौन है ? इसमें पादरी हमारी परिछिन्न आत्मा, अपना मलिन अहंकार या तुच्छ "मैं" है, जो चाहता है कि बाजा संभालकर रखा जाय और यह उचित भी है। किन्तु एक बात और भी है, वह यह कि जब बाजे का मालिक आवे तो उसको यह बाजा बजाने को अवश्य दे दिया जाना चाहिए। अब इस शरीर रूपी बाजे का मालिक या निर्माता कौन है ? वह निर्माता या मालिक ईश्वर है। यदि आप अपना तन, मन और बुद्धि सब उस ईश्वर को अर्पित कर देगें तो वह ईश्वर आप में से ऐसे-ऐसे स्वर और राग निकालेगा कि सारा संसार आश्चर्य से चकित रह जायेगा। आप ऐसे अच्छे से अच्छे कार्य करने लगेंगे कि सारा संसार आपकी प्रशंसा करने लग जायेगा और वह आपकी अच्छाइयों के कारण आपका अनुरागी और प्रेमी बन जायेगा। जितना ही आप में आत्मसमर्पण का गुण आता जायेगा उतना ही अधिक आप के अंदर शान्ति और आनन्द की मात्रा भी बढ़ती जायेगी।

करो शहीद ख़ुदी के सवार को रोकर,
यह जिस्म दुलदुले बेयार कीजिये तो सही।

लाहौर और लखनऊ में शिया मुसलमान दुलदुल (इमाम

का घोड़ा) निकालते हैं। उस पर लोग फूल चढ़ाते हैं और उसकी इज़्ज़त तथा सम्मान करते हैं। इस पर कोई दुनियावी मनुष्य सवार नहीं होता है, इसी प्रकार अपने शरीर को दुलदुल समझो, और इसके सवार, जो ख़ुदी या मन, बुद्धि सहित मलिन अहंकार है, उसको जड़मूल से मिटा दो और ख़ुदी की जगह ख़ुदा (परमेश्वर) को बैठा दो। अपने शरीर रूपी दुलदुल घोड़े की लगाम को ईश्वर के हवाले कर दो **अर्थात्** अपने शरीर का संचालक ईश्वर को बना दो, तो सारी दुनिया तुम पर फूल चढ़ाकर तुम्हारी पूजा करेगी और दुलदुल की तरह तुम्हारी इज़्ज़त करेगी। यदि सचमुच तुम ईश्वर को अपना निर्देशक (सवार) बना लो, तो केवल यह दुनिया ही नहीं, ऐसी हज़ारों दुनियायों को तुम आसानी से हिला सकते हो। किन्तु याद रहे कि तुम पूर्णरूप से अपने आपको ईश्वर में समर्पित कर दो। जितना ही अधिक आत्मसमर्पण होगा उतनी ही अधिक बेफ़िक्री और शान्ति तुम में आयेगी।

ईश्वर में विश्वास :

हजरत मोहम्मद साहब को लोगों ने डराना धमकाना चाहा कि वह अपने सिद्धान्तों से हट जायें और अपना नया प्रचार छोड़ दें। चूंकि हज़रत मोहम्मद साहब के दिल में ईश्वर का प्रेम भर गया था, उनका अंतःकरण शुद्ध हो गया था और उनके चित्त में ईश्वर के प्रति इतनी श्रद्धा और भक्ति समा गई थी तथा उनको पक्का विश्वास बंध गया था कि एक ईश्वर ही सत्य है और दुनिया में जो कुछ है सब धोखा ही धोखा है। इसलिए जब लोग उन्हें मार डालने की धमकी देते थे, तो वह अपने अटल विश्वास के बल पर कहते थे "यदि सूर्य मेरे दाहिनी ओर और चांद बाईं ओर

आकर यह कहें कि मैं सच्चाई से हट जाऊं, तो भी मैं अपने रास्ते से हट नहीं सकता।" उनका ईश्वर में ऐसा ही अटल विश्वास था। आज से हज़ारों साल पहले, वेदों ने भी ठीक यही घोषणा की थी,—"ईश्वर अद्वितीय है, उस पर अडिग आस्था रखो। सत्य-पथ से कभी विचलित न हो, चाहे सारी दुनिया तुम्हारी विरोधी क्यों न हो जाये। अपने हृदय को इच्छाओं, आवेशों, आवेगों और प्रलोभनों से बचाकर शुद्ध और पवित्र रखो। अपने हृदय में सच्चिदानन्द परमात्मा का दृढ़ और पक्का विश्वास जमा लो, जो ध्रुव की तरह स्थिर हो।"

देखो, जब मोहम्मद साहब का ईश्वर में पक्का विश्वास हो गया, तो क्या रेगिस्तान और क्या अरब सब जगह उनका सिद्धान्त फैलता चला गया। किसी को भी यह आशा नहीं थी कि उनके धर्म को इतनी सफलता मिलेगी, यहां तक कि मोहम्मद साहब को भी इतनी जल्दी और इतनी बड़ी सफलता की आशा नहीं थी। सौ वर्ष के अंदर ही अंदर इस्लाम यूरोप, अफ़्रीका और एशिया में फैल गया। यह स्वयं एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। आखिर इस चमत्कारी सफलता का क्या कारण था? इसका कारण यह था कि मोहम्मद साहब को ईश्वर में अटूट आस्था थी, अडिग विश्वास था जिसके कारण मुसलमानी सेना में वह अविश्वसनीय शक्ति आ गई थी जिस से उनको चमत्कारिक सफलता बराबर मिलती गई। अतः हम को भी अपने हृदय में, ईश्वर में अटूट श्रद्धा और विश्वास भरकर केवल ईश्वर पर ही आश्रित रहना चाहिए। सच पूछो तो उसीका जीवन सफल है, जो केवल ईश्वर में ही रहता-सहता है। इस पर अविश्वास मत करो। इस विषय पर तुम्हारी शंका तपेदिक की बीमारी की तरह है, जो तुम्हारा सत्यानाश कर

देगी। यदि तुम्हारा ईश्वर पर अडिग विश्वास नहीं है, तो तुम दया के पात्र हो। तुम्हारे धर्मशास्त्र भी यही पुकार-पुकार कर कहते हैं कि अपना सारा का सारा कार्य, सच्चाई, ईमानदारी और विवेक बुद्धि से ईश्वर के आश्रित होकर करो। चाहे जो कुछ भी हो, तुम्हारा विश्वास ईश्वर में ख़ूब मज़बूती से बना रहे। तभी तुम चिन्तामुक्त होकर शान्ति प्राप्त कर सकते हो।

यह दुनिया एक थियेटर (नाट्यशाला) के समान है। इसमें हम सब लोग अभिनेताओं के समान हैं। अभिनेता जब मंच पर अपना अभिनय करता है, तो वह अपने निजी अस्तित्व को नहीं भूलता। इसी प्रकार जब तुम भी इस संसार के नाट्यमंच पर अपने जीवन का अभिनय करो तो अपने असली सच्चिदानन्द स्वरूप को मत भूलो। उसको सदा याद रखो जो तुम वास्तव में हो। ऐसा करने से तुममें एक गौरवमय आत्म-विश्वास उत्पन्न हो जायेगा और तुम अपने अंदर अविक्षुब्ध शान्ति का अनुभव करोगे।

ईरान में एक नया धर्म चल गया है। कदाचित् उसके संस्थापक या प्रवर्तक का नाम सुलेमान खां था। कहा जाता है कि उसके विरोधियों ने उस पर बहुत अनुचित दबाव डाला, कि वह अपने सिद्धान्तों का प्रचार न करे किन्तु वह उनकी धमकियों से भयभीत नहीं हुआ। तब उसके विरोधियों ने उसे जबरदस्ती एक दीवार पर खड़ा किया और उसकी बांहों में छेद करके उसमें जलती हुई मशालें घुसेड़ दीं। उन्होंने कहा कि यदि तुम अपने धर्म का प्रचार करना छोड दोगे तो हम तुम्हारे साथ अत्याचार नहीं करेंगे। किन्तु सुलेमान दृढ़ संकल्प वाला मनुष्य था। उसने उन लोगों के

क्रूर और निर्मम अत्याचारों की तनिक भी परवाह नहीं की। वह उसी दीवार पर प्रसन्नता से नाचने लगा और कहा, "कायरता से मरने की अपेक्षा वीरता से मरना कहीं अच्छा है।" इस पर उन लोगों ने उसको क्रूरता से जला-जला कर मार डाला।

साक्रेटीज़ (Socrates) ने खुशी से विष पी लिया और प्राण त्याग दिये, किन्तु वह अपने विचारों और सिद्धान्तों का हनन करने और उनको छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुआ।

दूर क्यों जाओ? हमारे पुराण तो ईश्वर-विश्वास के प्रसंगों से भरे पड़े हैं। प्रहलाद पर क्या-क्या अत्याचार और ज़ुल्म नहीं किये गये। पर्वत से फेंका गया, नदी में डुबाया गया, आग में जलाया गया इत्यादि, इत्यादि, किन्तु प्रह्लाद ने अपनी आस्तिकता नहीं छोड़ी। वह अपने ईश्वर प्रेम में अडिग रहा। मौत का दंड भी उसके विश्वास को हिला न सका। उसका विश्वास इतना दृढ़ था कि प्रकृति ने भी उसके लिए अपनी प्रकृति बदल दी थी। यदि तुम्हारे हृदय में पक्का विश्वास हो, तो तुम्हारी निगाहें भी लोहे का खम्भा चीर कर उस में से भगवान प्रकट करा सकती हैं। विश्वास में अलौकिक शक्ति होती है। ईश्वर के विश्वास के बल पर मनुष्य आश्चर्यजनक चमत्कार कर सकता है। जिसको ईश्वर में विश्वास है, उसको हर अवस्था में संतोष है। जिसको संतोष है, उसको शान्ति है, और जिसको शान्ति है, उसको सब जगह आनन्द ही आनन्द है।

केन्द्र के बाहर मत हो :–

बर्कले (Berkley) ने बाह्य वस्तुओं के बारे में सिद्ध किया कि वह कुछ नहीं है और ह्यूम ने प्रमाणित किया है कि

अंदर की प्रत्येक वस्तु कुछ नहीं है। फिर रहा क्या? कुछ भी कहीं नहीं, सिवाय एक ईश्वर के, जो विश्व का केन्द्र है, विश्व का आधार है। उसी की याद रक्खो, उसी में रहो, उसके बाहर मत हो अर्थात् उसे कभी मत भूलो, इसी में तुम्हारा कल्याण है। मनुष्य जैसा सोचता है, वैसा ही हो जाता है। संकल्प का बहुत महत्व है। एक बार एक मनुष्य ने अपनी यह धारणा बनाई कि मैं एक लकड़ी का लट्ठा हूं। उसने अपना सिर एक मेज़ पर तथा पैर दूसरी मेज़ पर रखे, जो कुछ दूरी पर थी। उसके लट्ठा होने का विचार उसके मस्तिष्क में इतना शक्तिशाली और दृढ़ता से भर गया था कि उसका शरीर सख्त और कड़ा हो गया तथा भारी भारी वस्तुओं के लादने पर भी वह न झुका। उस मनुष्य पर भारी से भारी बोझ का कुछ भी असर नहीं हुआ, न ही उसने इस भार को महसूस किया। मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही हो जाता है। जब लट्ठे का भाव मन में भरने से मनुष्य लट्ठा हो जाता है तो क्या ईश्वर का भाव मन में भरने से मनुष्य ईश्वर नहीं हो सकता? संकल्प में बड़ी शक्ति है। मनुष्य की वास्तविक आत्मा तो ईश्वर है ही, यदि वह अपने इस सच्चे विचार में पग जाये पुख्ता हो जाय, तो उसके ईश्वर हो जाने में कोई संदेह है ही नहीं। मशीन जब तक केन्द्र में रहती है, खूब काम करती है और जब केन्द्र से बाहर हो जाती है तो काम में रुकावट आ जाती है। हमारा यह शरीर मशीन की तरह है। इसका केन्द्र (सेन्टर) परमात्मा है। अतः जब तक यह मशीन परमात्मा रूपी केन्द्र में न आये, उससे कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं हो सकता। देखो, जब आग जलती है, तो हवा उसके इर्द-गिर्द खिचकर अपने आप आ जाती है। इसी प्रकार यदि तुम ईश्वर की याद को अपने मन में भरकर चलो, तो सारी प्रकृति तुम्हारी सहायक बन जायेगी।

इंगलैण्ड में एक विद्यार्थी परीक्षा दे रहा था। जब वह प्रश्नों का उत्तर लिखता था तो अपने जेब से एक कागज़ निकालकर उसे बार-बार देख लेता था। परीक्षागृह के निरीक्षक को शक हुआ कि कदाचित् यह लड़का नक़ल कर रहा है। उन्होंने उसके पास जाकर पूंछा "तुम जेब से कागज़ निकालकर बार-बार क्या देखते हो? उस कागज़ को मुझे दिखा दो।" लड़के ने उत्तर दिया, "मैं कोई अनुचित कार्यवाही नहीं कर रहा हूं।" निरीक्षक ने ज़ोर देकर कहा, "उस कागज़ को मुझे दिखा दो।" उस लड़के ने तब जेब से वह कागज़ निकालकर दिखलाया तो वह एक लड़की की तसवीर थी। लड़के ने कहा, "यह तस्वीर मेरी प्रेमिका की है। इसी के कारण मैं परीक्षा देने यहां आया हूं। उसने मुझको यह वचन दिया है कि यदि मैं यह परीक्षा पास कर लूंगा तो वह मुझसे शादी कर लेगी। जब मैं लिखते-लिखते थक जाता हूं या जब मेरा मन उचाट हो जाता है तो मैं अपनी प्यारी प्रेमिका की तस्वीर को जेब से निकालकर देख लेता हूं, इससे मेरी थकान दूर हो जाती है, स्फूर्ति आ जाती है और जो कुछ भूला हुआ होता है वह भी याद आ जाता है।" प्यारो, दुनिया के जीवन की परीक्षा में, यदि तुम अपने प्यारे ईश्वर की याद बराबर बनाए रखो, जो तुम्हारे अंदर ही है, तो इस परीक्षा में तुम सदैव कुशलता से सफल होते रहोगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। एक उर्दू कवि कहता है—

दिल के आईने में है तस्वीरे यार।
जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली॥

ईश्वर को भूल जाना ही, उसके केन्द्र से बाहर होना या उससे अलग होना है।

इच्छाओं की पूर्ति :-

मनुष्य की इच्छाओं की पूर्ति न होने से भी उसकी शान्ति भंग हो जाती है। अतः इच्छाओं की पूर्ति की क्या विधि है, उसके सम्बन्ध में राम एक कहानी द्वारा आपको समझाता है।

एक राजा का जन्म दिन था। उसने अपने नौकरों और नौकरानियों को आज्ञा दी कि आज हमारी ख़ुशी का दिन है, जो कुछ भी कोई मांगेगा, वह उसको दिया जायेगा। अतः किसी ने रुपया मांगा तो किसी ने अपनी उन्नति मांगी और किसी ने कुछ व किसी ने कुछ मांगा। सब कुछ सबको उनके मांगने के अनुसार दिया गया, परन्तु एक लौंडी (दासी) मैले-कुचैले कपड़े पहने, उदास सूरत बनाये, एक कोने में खड़ी थी। राजा ने उसको इस प्रकार देखकर उससे पूछा, "आज ख़ुशी का दिन है। सब लोग ख़ुश हैं किन्तु तू उदास है। इसका क्या कारण है? जो कुछ तुझे मांगना है, तू भी मांग ले।" लौडीं ने कहा, "जो मैं मांगना चाहती हूं, कदाचित् आप उसे न दे सकें।" राजा ने कहा, "तेरी मांग अवश्य पूरी की जावेगी, तू मांग तो सही।" तब लौंडी ने कहा कि हुज़ूर अपना हाथ बढ़ावें। जब राजा ने अपना हाथ बढ़ाया तो उस लौंडी ने राजा का हाथ पकड़कर कहा, "बस मैं इसी हाथ को अपनी शादी के लिए चाहती हूं, और कुछ नहीं। मुझे आशा है कि महाराज अपना कहा हुआ वचन पूरा करेंगे। राजा संकोच में पड़ गया, किन्तु वचनबद्ध होने के कारण उसको अपना वादा पूरा करना पड़ा और उसने उस लौंडी के साथ शादी कर ली। इस शादी से लौंडी को केवल राजा ही नहीं मिला वरन राजा के सारे राज्य की भी वह स्वामिनी हो गई।

इसी प्रकार अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए यदि हम ईश्वर से ईश्वर को ही मांग लें, तो हमारी सारी इच्छाएं अपने आप पूरी हो जांयगी। जब विश्व का मालिक ईश्वर ही हमारा अपना हो गया तो विश्व की सारी वस्तुएं अपनी हो गईं, फिर मांगने को क्या बाक़ी रहा? अतः हमको ईश्वर-प्राप्ति का ही प्रयास करना चाहिए, जिससे हमारी इच्छाएं स्वतः पूरी हो जाय और कोई इच्छा ही न रह जाय। जब हम इच्छारहित हो जायेंगे, तब शान्ति तो अपने आपही हममें भर जायेगी। ईश्वर की अनुभूति से ही सच्ची और शाश्वत शान्ति मिलती है।

ईश्वर से दुनिया की धन-दौलत या सम्पत्ति या स्वर्ग भी मत मांगो। एक उर्दू कवि कहता है :—

जन्नत परस्त ज़ाहिद, कब हक़ परस्त है।
हूरों पर मर रहा है, शहवत परस्त है।।

अर्थात : स्वर्ग की इच्छा रखने वाला ईश्वर-भक्त नहीं हो सकता। वह तो स्वर्ग की अप्सराओं पर जान देता है। वह तो केवल एक कामी पुरुष है।

जो लोग ईश्वर से दुनिया की कोई वस्तु माँगते हैं, वह मानों ईश्वर को अपना दास बनाना चाहते है, कि यों करो, यों न करो। परन्तु यदि तुम स्वयं ईश्वर को अपना लो, या तुम स्वयं ईश्वर से एक हो जाओ तो तुम्हें कुछ माँगने की इच्छा करने की कोई आवश्यकता ही नहीं है। इच्छा-पूर्ति की इससे अच्छी विधि और क्या हो सकती है?

आपने देखा होगा कि अगर आप अपनी छाया पकड़ना चाहें तो आप उसे कदापि नहीं पकड़ सकते, छाया आप से दूर-दूर भागती जायेगी। इसी प्रकार से जब आप दुनिया के विषय-भोगों, लालसाओं, इन्द्रियजनित सुखों की चाहना करते हैं, तो आप चाहे कितना ही कठिन परिश्रम क्यों न करें, वह आप से दूर और दूर भागते जायेंगे। किन्तु यदि आप अपना मुख उधर से फेरकर सूर्य की ओर कर लें, तो आपकी छाया आप के पीछे-पीछे भागेगी। इसी प्रकार से यदि आप दुनिया के विषय-भोगों और रिश्ते-नातों के प्यार की इच्छा त्याग देते हैं और अपना मुख उस सूर्यों के सूर्य, परमेश्वर की ओर कर लेते हैं और अपनी आस उसी में लगा लेते हैं, तो दुनिया के तमाम पदार्थ और सुख आप के पास अपने आप चले आयेंगे। ईश्वर की ओर चलने से आप के बिना चाहे दुनिया छाया की तरह आप के पीछे-पीछे चलेगी, यह प्रकृति का नियम है।

यदि आप ईश्वर की ओर चलें तो आपको अपने इस ध्येय की ओर चलाने के लिए सभी सुविधाएँ आप से आप उपलब्ध हो जायेंगी। सूर्य को पृथ्वी के चारों ओर घुमाने का प्रयास मत करो, पृथ्वी को ही सूर्य के चारों ओर घूमने दो। यह ही ठीक है और यह स्वाभाविक भी है। तात्पर्य यह है कि ईश्वर द्वारा अपनी इच्छाओं की पूर्ति कराने की जगह, इच्छाओं को ईश्वर के चारों ओर घूमने दो अर्थात् अपनी इच्छाओं को ईश्वर को अर्पण कर दो। अब उसका काम, वही जाने, तुम तो निश्चिन्त हो गये। इसी में तुम्हारी शान्ति और तुम्हारा कल्याण है।

विकास में प्रगति कैसे तेज की जाय : राम ने देखा है कि

जापान में तीन तीन सौ वर्ष पुराने देवदार के वृक्ष हैं, किन्तु उनकी

लम्बाई या ऊँचाई केवल एक हाथ भर की ही है। साधारणतया देवदार के वृक्ष की स्वाभाविक ऊचाई साल या साखू के वृक्षों से भी ऊँची होती है। पूछताछ करने से ज्ञात हुआ कि वृक्ष जितना ऊपर बढ़ता है, उतना ही नीचे उसकी जड़ें भूमि के भीतर जाती हैं। इस सिद्धान्त के आधार पर, वहां के विशेषज्ञ देवदार की जड़ें भूमि के नीचे ही नीचे शुरू से काटते गये, जिससे भूमि के बहुत नीचे न धँस सकें। इसके फलस्वरूप, वृक्ष की ऊंचाई भी न बढ़ने पाई और वृक्ष बौना होकर रह गया। अतः वृक्ष को बौना रखने के लिए वह उन वृक्षों की जड़ें नीचे ही नीचे बराबर काटते रहते हैं जिसके कारण वृक्ष अपनी स्वाभाविक ऊंचाई प्राप्त नहीं कर पाता है और एक या डेढ़ फ़ीट का ही होकर रह जाता है। इसी प्रकार यदि हम अपने दैवी विचार या सद्‌गुणों की जड़ें अपने हृदय या मस्तिष्क के अन्दर गहराई से धंसने न दे, तो आध्यात्मिक विकास की स्वाभाविक ऊँचाई हम कभी भी न प्राप्त कर सकेंगे, हमारी उन्नति रुक जायेगी और हमारा आध्यात्मिक विकास अवरुद्ध हो जायेगा। यह एक प्रकृति का नियम है, जो वनस्पति और आध्यात्म दोनों ही क्षेत्रों में ठीक से बराबर सत्य उतरता है। अतः अपने विचारों को दैवी सद्‌गुणों से पूर्णतया भर दो जिससे कि उनकी जड़ें, तुम्हारे शरीर, मन और बुद्धि के एक-एक रग, रेशे, तंतु और कोष्ठ के भीतर गहराई से प्रविष्ठ हो जायें। केवल तभी तुम आत्मिक, आध्यात्मिक और धार्मिक क्षेत्रों में ऊँची से ऊँची उन्नति और विकास कर सकोगे, अन्यथा मूर्ख, अज्ञानी, और बौद्धिक बौने बन कर रह जाओगे।

भगवान श्री कृष्ण गीता में कहते हैं कि जो मनुष्य अपना जीवन ईश्वर को, ईश्वर के लिए, ईश्वर की सेवा में समर्पित कर देता है,

वह बहुत बड़ा भाग्यशाली है। 'He whose life is for god's sake is blessed.' देखो, जब कोई मनुष्य कच्चा पारा खा लेता है, तो वह मर जाता है, किन्तु वही पारा जब कुश्ता बनाकर शोध कर खाया जाता है तो वह लाभदायक औषधि का काम करता है। वह अमृत बन जाता है। सोना भी जब कच्चा खाया जाता है तो वह स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है किन्तु जब उसका कुश्ता बनाकर खाते हैं तो वह जीवन दान देता है और उत्तेजनापूर्ण शक्ति प्रदान करता है। इसी प्रकार तुम्हारा मलिन अहंकार, जीव भाव या परिछिन्न आत्मा तुम्हारे आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। यह ही तुम्हारे तमाम दु:खों, कष्टों, हीनता का मूल कारण है। तुम्हारी स्वार्थपरता, तुम्हारी खुदी और तुम्हारा यह मलिन अहंकार तुम्हारे विकास को अवरुद्ध कर देते हैं, तुम्हारी उन्नति में बाधा बन जाते हैं। अत: अपने मलिन अहंकार या जीव-भाव का संस्कार करके उसको शुद्ध अहंकार में परिष्कृत करो। अपने स्वार्थ पूर्ण और सीमित अहं को महान और उत्कृष्ट बनाओ अर्थात् उसको विश्वव्यापी चेतना या ब्रह्म-भाव में विलीन कर दो। तब तुम स्वयं सच्चिदानन्द ब्रह्म होकर परम् शान्ति और शाश्वत् आनन्द का साक्षात स्वरूप बन जाओगे।

जीवित पुरुष जब पानी में घुसता है तो पानी उसे नीचे दबाए रहता है किन्तु जब मनुष्य मर जाता है तो पानी भी उसकी लाश को सर पर उठा लेता है अर्थात वह पानी पर उतराने लगता है। इसी प्रकार यदि तुम दुनिया के लिये मर जाओ, तो प्रकृति तुम्हारी हर सम्भव सहायता करेगी जिससे कि तुम आत्मिक शक्ति, आध्यात्मिक सम्पत्ति और प्राणदायक देवत्व प्राप्त कर सको। मरना

तो एक दिन है ही, तब तुम अपने मन से अपने अहं को तुरन्त मिटा-कर बाहरी दुनिया के लिये अभी से क्यों नहीं मर जाते ? जिससे कि अपने भौतिक शरीर के मरते समय तुमको कोई क्लेश या दुःख अनुभव न हो सके और तुम शान्ति से जी सको और शान्ति से मर भी सको ।

अब राम तुमको फ़ारसी की एक कविता सुनायेगा और उसके हिन्दी अनुवाद के पश्चात् अपना व्याख्यान समाप्त कर देगा ।

ताशानह सिफ़त सर न निही दर तहे आरह
हरगिज़ व सरे-ज़ुलफ़े-निगारे न रसी

प्यारे ! अगर चाहो कि हम अपने माशूक़ (प्रेम-पात्र) तक पहुंच जायें, तो वह मार्ग बहुत कठिन है । पहुंचना तो सम्भव है किन्तु साधन कठिन है । देखो, कंघी प्यारे के सिर तक पहुंचने योग्य तब होती है, जब पहले उस पर आरह चल लेता है, और वह अपना सारा तन कटा डालती है । इसी तरह, जब तक तुम्हारा अहंकार रूपी सिर कंघी के समान ज्ञानरूपी आरह के नीचे नहीं रखा जायेगा, अर्थात् जब तक वह ज्ञान की सहायता से कंघी के समान न बन जायेगा, तब तक तुम अपने प्यारे के बालों या सिर तक नहीं पहुंच सकते । यदि यह कहो कि अच्छा, सिर तक न पहुंचें, तो कान तक ही पहुंच जायें, तो उसके विषय में सुनिये :—

ता हमचो दुर-सुफ़्तह न गर्दी बा तार,
हरगिज़ व बना गोशे-निगारे न रसी ।

मोती माशूक़ के कान तक उस समय पहुंचता है जब पहले तार से गुंथने का दुःख सहन कर लेता है और अपने सारे तन को

छिदवा डालता है। इस प्रकार, जब तक तुम मोती के समान ज्ञान रूपी तार द्वारा छिद न जाओगे, तब तक अपने प्यारे के कान तक पहुंचना भी असंभव है। अगर यह कहो कि अच्छा, कान तक न पहुंचें हो तो मुंह तक ही पहुंच जांये तो इसके विषय में भी सुन लीजिये :—

ता ख़ाक तुरा कूज़ह न साज़न्द कुलालां,
हरगिज़ वलये-लाले निगारे न रसी।

अर्थात् आबख़ोरह (प्याला) माशूक़ के मुंह तक उस समय पहुंचता है, जब वह पहले अपने आप को मिट्टी बना डालता है और कुम्हार के यहां का दुःख सहन कर लेता है। ऐसे ही जब तक कुम्हार तुम्हारी अहंकृति रूपी मिट्टी को कूट-कूटकर प्याला नहीं बना लेते, तब तक तुम्हारा अपने प्यारे के मुंह तक पहुंचना भी असम्भव है। अगर यह कहो कि अच्छा, मुंह तक न सही तो हाथ तक ही पहुंच हो जाये तो उसके विषय में भी यह कहना है :—

ता हमचो क़लम सर न निह दर तहे कारद,
हरगिज़ व सरगश्ते-निगारे न रसी।

जब तक लेखनी के समान तुम अपने अहंकार रूपी सिरको ज्ञानरूपी छुरे के नीचे न रख लोगे, तब तक अपने माशूक़ के हाथ तक पहुंचना भी असम्भव है। देख लीजिये, क़लम भी अपने माशूक़ के हाथ में उस वक्त पहुंचने के योग्य होती है, जब वह पहले अपना सिर क़लम करवा लेती है अर्थात् कटवा लेती है। अगर यह कहो कि हाथ तक न सही, तो माशूक़ के पैर तक ही पहुंचना हो सके तो उसके लिए भी सुन लीजिये :—

ता हमचो हिना सूदह न गर्दी तहे संग,
हरगिज़ व कफ़े पाय निगारे न रसी।

मेंहदी भी माशूक़ के पैर तक उसी समय पहुंचती है, जब वह पहले पहल पिसने का कष्ट सहन कर लेती है। इस प्रकार, जब तक तू मेंहदी के समान ज्ञान रूपी पत्थर के तले पिस न जायेगा, तब तक अपने प्यारे के पैरों तक पहुंचना भी असम्भव है।

अत: इस तरह से अगर तुमको भी अपने प्यारे परमेश्वर, खुदा से मिलने की इच्छा है, तो तुम दुनिया के क्लेश और दु:ख से मत डरो। आनन्द और शान्ति तब ही प्राप्त होते हैं, जब तुम अपने आप को अपने तन मन और बुद्धि से अलग जान लोगे। दूसरा और कोई उपाय नहीं है।

To stand outside the body and mind,
Is the way to peace of every kind.

ओम शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

शाश्वत सत्य*

(यह व्याख्यान सन् १८९९ में लाहौर में दिया गया था)

प्रिय आत्मन्,

आज राम को कुछ अधिक नहीं कहना है, केवल संक्षेप में इतना ही बतलाना है कि शाश्वत सत्य क्या है ? सत्य तो अनन्त है, इसके सम्बन्ध में जितना भी कहा जाय, थोड़ा है। इसलिए यहाँ पर केवल थोड़े ही शब्दों में सत्य की ओर संकेत मात्र कर दिया जायेगा। श्रोता-गण इस पर स्वयं ही गहन विचार और चिन्तन मनन करके इसका पूर्ण अनुभव करें; किसी प्रकार की शंका रह जाने पर उसका निवारण बाद में राम द्वारा किया जा सकता है।

आज का प्रत्येक मानव अपने आप को दुखी और आप्त अनुभव करता है। कोई भी व्यक्ति अपने में पूर्णतया सुख और आनन्द का अनुभव नहीं कर पाता, सबके सब किसी न किसी प्रकार से दुखी हैं, सब चिन्तित हैं। चिता तो मुर्दे को जलाती है, किन्तु चिन्ता जीवित मनुष्य को जलाती रहती है। सबके सब किसी न किसी चिन्ता की चिता में ज़ीवित ही झुलसते रहते हैं। किसी को रोज़ी कमाने की चिन्ता है तो किसी को अपना रोज़गार बढ़ाने

---

* यह व्याख्यान लाला अमीचन्द आनन्द पेशावरी द्वारा लिये हुये नोट्स पर आधारित है। इस सभा के सभापति लाला ठाकुरदास थे।

की चिन्ता है। किसी को ग़रीबी मिटाने की चिन्ता, तो किसी को अपनी अमीरी बढ़ाने की चिन्ता। किसी को अपने विवाह की चिन्ता है, तो किसी को अपने विवाह से चिन्ता है; किसी को बेटे की चिन्ता है, तो किसी को अपने बेटे से चिन्ता है। सारांश यह कि जिधर भी देखो सब के सब किसी न किसी दुःख से दुखी हैं। दुनिया वाले जिन व्यक्तियों को सुखी और सम्पन्न समझते हैं, उनके अंदर भी किसी न किसी प्रकार का दुःख, घुन की तरह लगा हुआ है।

नानक दुखिया सब संसार।

आख़िर ऐसा क्यों है कि सारा संसार किसी न किसी दुःख से पीड़ित है? क्या आपने कभी इस बात पर गम्भीरता से विचार किया है? इसका मूल कारण यह है कि दुःख से पीड़ित लोगों में सत्य का आचरण नहीं रह गया है। जो मनुष्य सत्य का आचरण करता है, वह बाहर की परिस्थितियों की परवाह नहीं करता, अपितु शान्तिपूर्वक ईश्वर के सहारे उनका डटकर मुक़ाबला करता है, ऐसा मनुष्य अन्दर से सुखी और सन्तुष्ट रहता है; निश्चिन्त रहता है, सत्य पर आचरण करने वाला किसी की भी आंखों से आंखें मिलाकर देख सकता है। मसल (कहावत) मशहूर है :—

सत्य बोल, पूरा तोल, मन चाहे तहां डोल।

अर्थात् सत्य पर चलने वाला मनुष्य निर्भय हो जाता है। फिर उसको मौत का भी भय नहीं रहता। किन्तु जो मनुष्य सत्य को अपने जीवन में नहीं उतारता, वह अवश्य ही दुखी और चिन्तित रहता है, यह प्रकृति का अकाट्य नियम है।

हमारे उत्तरी भारत में सत्यनारायण की पूजा की प्रथा है किन्तु खेद का विषय यह है कि बहुत कम लोग ही सत्यनारायण की पूजा का वास्तविक अर्थ समझते हैं। वह इस कथा को केवल एक रस्म की तरह सुन भर लेते हैं, कदाचित् ही कोई लोग उसका तात्पर्य समझते हों। अरे प्यारो! सत्य ही नारायण है और नारायण ही सत्य है। सत्य पर चलना अर्थात् सत्य को अपने दैनिक आचरण में ढालना ही सत्यनारायण की पूजा या आराधना है। सत्य पर आरूढ़ रहने का व्रत लेना, सत्यनारायण का व्रत है। जो भी मनुष्य, चाहे वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र कोई भी हो, सत्य पर चलता है, तो उसकी मुसीबतें और दुःख सब कट जाते हैं और वह खुशहाली और शान्तिपूर्वक सुख का जीवन व्यतीत करता है। यह ही सत्यनारायण के व्रत और सत्यनारायण की पूजा का प्रसाद है। सत्य नित्य है; सत्य यथार्थ है; अतः सत्य को अपनाना ही धर्म है। सत्य की भावना तुम्हारी सब कमज़ोरियों को दूर कर देती है और अजेय बना कर तुमको विकास के पथ पर आगे बढ़ाती रहती है।

सत्य ही वास्तविक तत्व है। सत्य को पानी का बुलबुला मत समझ लेना, जो छूते ही टूट जाय। यह ठोस और मज़बूत होता है, इसको फुटबाल की तरह चाहे जितना उछालो या दबाओ, यह फूटेगा नहीं, टूटेगा नहीं। सत्य कुचला नहीं जा सकता, वह मिटाया नहीं जा सकता। ईश्वर इस सत्य के ही माध्यम से यह अनन्त सृष्टि चलाता है, किन्तु दुःख की बात तो यह है कि साधारण मनुष्य का वास्तविक सत्य से कुछ परिचय ही नहीं है। उसने तो यह समझ रखा है कि जिस कार्य में आर्थिक अथवा सांसारिक लाभ हो, वही सत्य है और उसी में सुख की प्राप्ति हो सकती है। किन्तु

यह शाश्वत सत्य नहीं है। सत्य तो वह है जो सदा सदा रहे और जिसका कभी नाश न हो। जिस सांसारिक सुख की प्राप्ति के लिए मनुष्य प्रयास किया करता है, वह तो इन्द्रियों को केवल क्षणिक सुख देने वाला झूठा सुख है। दुर्भाग्यवश मनुष्य ने उसी को असली और सच्चा सुख मान लिया है जबकि असली और सच्चा सुख वह है जिसमें स्थायी आनन्द हो तथा जो शाश्वत हो। शाश्वत सत्य ही परम आनन्द का द्योतक है। जिन लोगों ने इस परम आनन्द का मज़ा चखा है, उनको अन्य सांसारिक सुख फीके और निःस्वाद लगने लगते है। जिन लोगों ने गंगोत्री का शुद्ध निर्मल और शीतल जल पिया है, उनको कुंए का खारा जल कदापि अच्छा नहीं लग सकता। शाश्वत सुख का जिज्ञासु सांसारिक सुखों के पीछे नहीं भागता। इस प्रकार इन सुखों के पीछे भागने में कोई मज़ा नहीं है। यह तो नितांत अज्ञानता है, जो धोखा ही धोखा है।

आप पहले यह समझें और जानें कि संसार में वास्तविक रूप से अपना यह जीवन सफल बनाने के लिये कौन सा कार्य मौलिक है तथा कौन सा गौण है अर्थात् क्या आवश्यक है और क्या अनावश्यक। अनावश्यक कार्यों पर ध्यान देने से मनुष्य यथार्थ से दूर हो जाता है और झूठे दिखावे में फंसकर शाश्वत आनन्द से वंचित हो जाता है। राम तो अपनी उचित आवश्यकताओं की ओर भी ध्यान नहीं देता क्योंकि जो प्रारब्ध में है वह तो मिलेगा ही, किन्तु बाहरी दिखावे या आडम्बरों की ओर तो ध्यान देने का प्रश्न ही नहीं उठता। इन्द्रियों की मांगों की भी राम कोई परवाह नहीं करता। मनुष्य को इन्द्रियों का ग़ुलाम नहीं बनना चाहिए, क्योंकि वास्तव में वह तो इन्द्रियों का मालिक है। भगवान ने मनुष्य को इसीलिये विवेक बुद्धि दी है कि वह अपने मन की इच्छाओं का

विश्लेषण करके यह जान सके कि उसके लिए क्या उचित है और क्या अनुचित ।

संसार की स्थितियां बदलती रहती हैं किन्तु उनके लिये मनुष्य को विवेक द्वारा अपनी अन्दर की शान्त-स्थिति को नहीं बदलना चाहिये अर्थात् अपने अन्दर की स्वाभाविक और मौलिक शान्ति का संतुलन भंग नहीं होने देना चाहिए । उसको तो एक रस और एक समान ही रहना चाहिए। दुःख और मुसीबतों से घबड़ाना कायरता है । सत्यनारायण के पुजारी को इन परिस्थितियों से डरना शोभा नहीं देता ।

गर यों हुआ तो क्या हुआ, और वों हुआ तो क्या हुआ ।।

वैसे तो इन्द्रियों की मांगें सदा बढ़ती ही रहती हैं और मनुष्य के जीवन काल में सब की सब पूरी भी नहीं हो सकतीं । इन्द्रियों की यह सब मांगें, मनुष्य की इच्छानुसार जब पूरी नहीं होतीं तो उसको निराशा होती है और दुःख होता है। यदि कोई संसारी इच्छा पूरी हो भी गयी तो इच्छाएं और भी बढ़ती जाती है । इन बढ़ती हुई इच्छाओं को पूरा करने के चक्कर में मनुष्य दिन-रात चिन्ताओं में फंसा रहता है, जिसके कारण उसे कभी शान्ति नहीं मिल पाती, क्योंकि इच्छाएं ही दुःख का कारण होती हैं। याद रहे कि बिना शान्ति के मनुष्य का जीवन एक बोझ सा बन जाता है, केवल इच्छा-रहित मन ही शान्त रह सकता है । जिसके दिल में शान्ति होती है, वही मनुष्य उन्नति करने में सफल होता है । इस प्रकार बिना सत्य को अपनाए मनुष्य सन्तुष्ट नहीं हो पाता, इसका यह मतलब या तात्पर्य नहीं है कि शान्त और सन्तुष्ट रहने के लिए मनुष्य कुछ न करे अथवा केवल हाथ पर हाथ रख कर बैठा रहे ।

नहीं, नहीं। मनुष्य कार्य तो करे परन्तु निष्काम और अनासक्त भाव से, दत्तचित्त होकर कार्य करे। कर्तव्य को अच्छी प्रकार करने में कोई कसर या कमी नहीं रहनी चाहिए। इस प्रकार से कर्तव्य परायण होने पर, जो भी सफलता प्राप्त हो, उसको ईश्वर का वरदान समझ कर उसमें मनुष्य को सन्तुष्ट रहना चाहिए। केवल इसी सन्तोष में शान्ति, सुख और शाश्वत आनन्द की झलक प्राप्त होती है। यह याद रहे कि शाश्वत सत्य का व्यावहारिक ज्ञान हुए बिना मनुष्य को शान्ति नहीं मिल सकती और न यथोचित सन्तोष प्राप्त हो सकता है, आनन्द की बात तो दूर रही।

अरे प्यारो! आनन्द तो मनुष्य के अन्दर ही है, किन्तु दुर्भाग्यवश, अज्ञानता के कारण, वह सुख और आनन्द को संसार की बाहरी वस्तुओं में ढूंढता रहता है। भला वहां आनन्द कहां है? मनुष्य के अन्दर के आनन्द की किरण बाहर की जिस वस्तु पर पड़ जाती है, उसमें ही उसे आनन्द की अनुभूति होने लगती है। लैला के प्रेम में मजनूं को आनन्द की अनुभूति होती थी, तो क्या वह आनन्द लैला में पहले से था? नहीं, नहीं। ऐसी बात नहीं थी। यदि ऐसा होता तो और अन्य सब लोगों को भी लैला को देखकर आनन्द प्राप्त होता। किन्तु ऐसी बात नहीं थी। मजनूं के अन्दर का इश्क़, प्रेम या प्यार लैला पर आनन्द की क़लई चढ़ा देता था, जिसके कारण मजनूं को लैला में आनन्द की झलक दिखाई देने लगती थी और वह उसके प्रेम में पागल सा हो उठता था। तुम अपने प्रेम या आनन्द की किरण जिस पर भी डालोगे, उसी में तुम्हें प्रेम या आनन्द झलकने लगेगा। यह प्रेम या आनन्द तो तुम्हारे अपने आप में ही है, न कि कहीं बाहर। सबके साथ दिल से प्रेम करो तो तुम्हें सब जगह आनन्द ही आनन्द मिलेगा।

किन्तु यह याद रहे कि तुम किसी से तब तक प्रेम नहीं कर सकते जब तक कि तुम उससे अपनी एकता न अनुभव कर लो। एकता की यह अनुभूति केवल शाश्वत सत्य के ज्ञान से ही मनुष्य को प्राप्त होती है। यदि तुम सब जगह आनन्द ही आनन्द का अनुभव करना चाहते हो तो सबसे अपनी एकता स्थापित करो, जो अद्वैत ज्ञान के बिना कभी सम्भव नहीं हो सकती। यही शाश्वत सत्य है।

संसार के दैनिक जीवन में ही देखो कि मां अपने बेटे को जी-जान से इसीलिए प्यार करती है, क्योंकि वह उसे अपना आप समझती है। एक मां का पुत्र मकान की छत से गिरकर बेहोश हो गया। जब मां को इस बात की ख़बर मिली तो इस ख़बर के मिलते ही वह भी बेहोश हो गयी। पुत्र को तो थोड़ी देर पश्चात् होश आ गया, किन्तु मां की बेहोशी देर तक क़ायम रही। ऐसा क्यों? इसलिए, कि मां की बच्चे के साथ ऐसी हार्दिक एकता थी कि मानों वह स्वयं ही छत से गिरी हो। एक मसल है :—

"चोट बेटे को लगे, कलेजा मां का चूर हो।"

जो सत्य भी है। यह सब एकता की अनुभूति की बात है, इसी लिए तो मां अपने बच्चे को इतना अधिक प्यार करती है।

पति अपनी पत्नी से इसलिए प्यार करता है कि वह उसको अपना आप समझता है, अर्थात् उससे अपनी एकता महसूस करता है। कहा जाता है कि मजनूं अपनी लैला को इतना अधिक प्यार करता था मानों दोनों एक ही प्राणी हों।

खूं रगे मजनूं से निकला,
फ़स्द लैला की जो ली।

अर्थात् जब लैला की नस में चीरा लगाया गया तो मजनूं की नस से ख़ून बहने लगा, आख़िर ऐसा क्यों ? क्योंकि मजनूं लैला को अपना आप समझकर, उससे जी जान से प्यार करता था। यह प्रकृति का नियम है कि कोई किसी को प्यार कर ही नहीं सकता जब तक कि वह अपने प्रेमी या प्रेमिका से अपनी एकता को अनुभव न करे। इसके विपरीत यह भी देखा गया है कि जब कभी पति-पत्नी में मनमुटाव हो जाता है अर्थात् पति-पत्नी में जब कभी लड़ाई-झगड़ा बढ़ जाता है और वह आपस में एक दूसरे के साथ निर्वाह नहीं कर पाते, तो उनमें तलाक़ की नौबत आ जाती है अर्थात् पति-पत्नी दोनों एक दूसरे को छोड़ देते हैं। जो पति-पत्नी पहले एक दूसरे में एक रूह दो क़ालिब समझते थे अर्थात् एक दूसरे के लिए जान देते थे, अब एक दूसरे की जान के प्यासे हो जाते हैं। यूरोप में, ऐसा देखने में बहुत आता है, आख़िर क्यों ? क्योंकि अब उनमें एकता का भाव मिट गया, जब दोनों में एकता की भावना नहीं रही तो वह एक दूसरे को कैसे प्यार कर सकते हैं ?

इस दुनिया में सब जगह यही हाल है। जहां एकता है, केवल वहां ही प्यार हो सकता है। यह एकता ऊपरी नहीं होनी चाहिए, यह एकता दिखावटी नहीं होनी चाहिए, अन्यथा यह एकता टिकाऊ नहीं हो सकेगी। जहां एकता टिकाऊ नहीं, वहां प्रेम भी स्थायी नहीं, जहां प्रेम स्थायी नहीं वहां आनन्द भी शाश्वत नहीं। यह शाश्वत आनन्द ही शाश्वत सत्य है। इसका अर्थ यह हुआ कि सच्चा आनन्द एकता की अनुभूति पर आधारित है। इस एकता की

परिधि जितनी ही बढ़ती जायेगी अर्थात् व्यक्ति के प्रेम का घेरा जितना बढ़ता जायेगा, उतना ही व्यक्ति शाश्वत सत्य को अपनाता जायेगा।

अब देखना यह है कि शाश्वत सत्य की अनुभूति के लिए एकता या प्रेम की परिधि किस प्रकार से बढ़ाई जा सकती है, क्योंकि बिना एकता अनुभव किये हुए कोई किसी से प्रेम कर ही नहीं सकता। यही बात ईश्वर के लिये भी है। जितनी अधिक हमारी ईश्वर से एकता होगी, उतना ही अधिक ईश्वर से हमारा प्रेम भी होगा। ईश्वर विश्व से कहीं अलग तो हैं नहीं, अतः विश्व से प्रेम ही ईश्वर से प्रेम है। इसलिए पहले हमको यह बात भली भांति समझ लेना चाहिए कि हम सब एक हैं, तभी हम एक-दूसरे से प्यार करते हुए, ईश्वर से अर्थात् विश्व से सच्चा प्रेम कर सकते हैं और केवल तभी हम अद्वैत के स्थायी आनन्द का अनुभव कर सकते हैं।

जब हमने यह महसूस कर लिया कि हम सब एक हैं, तो हमारा कोई शत्रु न रहा, हमारा कोई प्रति-द्वन्दी न रहा। तब हम किसी से ईर्ष्या द्वेश या पक्षपात भी नहीं कर सकते, क्योंकि हमने यह अच्छी तरह समझ लिया है कि सारे विश्व के साथ हम एक हैं। यही वास्तविक ज्ञान है कि विश्व की अनेकता में हम एकता को प्रत्यक्ष अनुभव कर सकें।

संसार में हम देखते हैं कि सब जगह भिन्नता ही भिन्नता दिखलायी देती है। संसार की प्रत्येक वस्तु के नाम अलग अलग, रूप अलग अलग और काम भी अलग अलग हैं, फिर उन सबमें एकता का क्या प्रश्न? लेकिन हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि हम एक दूसरे से प्यार करते हैं। मनुष्यों की बात जाने दीजिये, हम कुत्ता,

बिल्ली, घोड़े और अपनी गाय से भी प्यार करते हैं। हम अपने मकान सम्पत्ति और अपने देश से भी प्यार करते हैं। परन्तु प्रकृति के अटल नियम के अनुसार हम किसी से भी तब तक प्यार नहीं कर सकते, जब तक कि हम उससे अपनी एकता का अनुभव न करें। इससे यह बात सिद्ध होती है कि हम सब में बाहरी एकता न भी दिखाई दे, फिर भी हम सबमें कोई न कोई ऐसा सामान्य तत्व अवश्य है जो हमारी एकता का उपकरण है। आखिर वह सामान्य तत्व (Common Factor) क्या है, जिस के कारण हमारी सब की एकता बनी रह सकती है!

हम दूर क्यों जायें? हम अपने शरीर को ही ले लें। हमारे शरीर में आँख, कान, नाक, मुंह, जिह्वा, त्वचा, हाथ, पैर, फेफड़ा, यकृत, गुर्दा, हृदय, इत्यादि अनेकों अवयव और अंग हैं। यह सब अलग अलग हैं, इनके नाम-रूप और काम भी अलग अलग हैं, फिर भी हम इन सबसे अपने शरीर में एकता का अनुभव करते हैं। यदि हमारे किसी भी अंग में पीड़ा हो जाय तो हम दुखी हो जाते हैं। यदि हमारे तलुए में कांटा लग जाय, तो झट हमारे मस्तिष्क को कष्ट अनुभव होगा; हमारी आंखें उस कांटे को देखने के लिए तुरन्त झुक जायेंगी; हमारा हाथ भी उस कांटे को निकालने के लिए ठीक उसी जगह पहुँच जायेगा, जहां कांटा लगा हुआ है। हमारे सारे शरीर का प्रयास उस कष्ट को दूर करने में लग जायेगा, आखिर क्यों? कांटा तो केवल तलुए में ही लगा है तब सारे का सारा शरीर उस कष्ट को क्यों अनभव करे? किन्तु नहीं, हमारा तलुवा, शरीर स अलग नहीं है। सब अंगों के अलग-अलग नाम-रूप और अलग-अलग काम होते हुए भी सब हमारी एक ही प्राण-शक्ति के कारण एकता के सूत्र में बन्धे हुए हैं। शरीर के

सब अंग भले ही अलग-अलग हों किन्तु इन सब की प्राण-शक्ति या आत्मा तो एक ही है, जो इन सब अंगों में एकता बनाये हुए है। यदि हमारे गाल पर कोई मच्छर बैठ जाता है, तो हमारा हाथ उसको गाल पर से भगाने के लिए तुरन्त वहां पहुँच जाता है। यदि हमारे शरीर के किसी भी स्थान में खुजली होती है, तो हमारा हाथ झट से उसी जगह पहुँच कर उस खुजलाहट को दूर कर देता है। यदि कोई दूसरा मनुष्य उस खुजलाहट को दूर करना चाहे तो उसका हाथ ठीक उसी स्थान पर स्वत: यानी अपने आप नहीं पहुँच सकता। उसको बार-बार बतलाना होगा कि यह खुजली अमुक स्थान पर हो रही है। किन्तु हमारा स्वयं का हाथ बिना किसी के बताए हुए ठीक उसी जगह पर पहुँच जाता है, जहां ख़ुजली हो रही है, आख़िर ऐसा क्यों? यदि हमारे शरीर में कोई विजातीय द्रव्य पहुँच जाता है, तो उसको बाहर निकाल फेंकने के लिए हमारे शरीर की सारी शक्ति लग जाती है।

यह हमारा नित्य का अनुभव है, आख़िर ऐसा क्यों? क्योंकि हमारे सारे शरीर में एक ही आत्मा काम कर रही है और उसी की शक्ति के कारण हमारे शरीर के अन्दर और बाहर के सभी अंग और अवयव सुव्यवस्थित ढंग से काम कर रहे हैं। यद्यपि हमारे अंगों और अवयवों के अलग-अलग नाम रूप और काम हैं फिर भी सारे शरीर में एक आत्मा होने के कारण सब अंग और अवयव एक दूसरे के साथ मिलजुल कर काम करते हुए, एक आश्चर्यजनक एकता बनाए हुए हैं। वही एक आत्मा हमारे पैर के तलुए में है, वही हमारे मस्तिष्क में है और वही हमारे हाथ में भी। वही एक आत्मा हमारे शरीर के सभी अंगों

और अवयवों में भी है। अतः सब एक दूसरे के लिए एक होकर इस निमित्त से काम करते हैं, जिससे हमारा यह शरीर निर्मल, स्वच्छ और स्वस्थ बना रहे।

इसी प्रकार हम यह भी देखते हैं कि जैसे हमारे शरीर के अंगों और अवयवों में हमारी जीवात्मा के कारण सुव्यवस्थित (Harmonious) ढंग से सब काम होते रहते है, उसी प्रकार से दूसरे प्राणियों के शरीरों में भी ठीक वैसे ही काम होता रहता है। जैसे हमारा भोजन पचता है, वैसे ही दूसरे शरीरों में भी भोजन पचता है; जैसे हमारा रुधिर साफ़ होता है, वैसे ही, उसी प्रक्रिया द्वारा दूसरे प्राणियों का भी रुधिर साफ़ होता है; जैसे हमारे फेफड़े काम करते हैं, वैसे ही दूसरों के फेफड़े भी काम करते हैं; जैसे हमारे बाल और नाखून बढ़ते हैं, ठीक वैसे ही दूसरों के बाल और नाखून बढ़ते हैं; जिस प्रकार हम बीमार पड़ते हैं और जिन जिन औषधियों से हमें लाभ होता है, ठीक वैसे ही दूसरे प्राणी भी बीमार होते हैं और उन्हीं औषधियों से वह रोग मुक्त भी हो जाते हैं। इन सब युक्तियों से यह प्रत्यक्ष प्रमाणित होता है कि अलग-अलग होते हुए भी हम सब में एक ही शक्ति, एक सा ही काम कर रही है। यही एक शक्ति सबके शरीरों में एक ही ढंग से सुव्यवस्था और एकता बनाए हुए है, क्योंकि हमारी सबकी आत्मा एक है।

आपको कदाचित् ज्ञात होगा कि आधुनिक विज्ञान ने यह बात निर्विवाद रूप से प्रमाणित कर दी है कि यह शक्ति या ऊर्जा (Energy) एक ही है, जो अलग-अलग नाम रूप और मात्रा में विश्व के अलग-अलग क्षेत्रों को नियमपूर्वक चला रही

है। यही एक शक्ति खनिज जगत, वनस्पति जगत और प्राणी जगत में वैसे ही काम करती है जैसे कि हमारे अलग-अलग प्राणियों के शरीरों में वह व्यवस्था और एकता बनाए रखती है। इतना ही नहीं, बल्कि यही वह एक शक्ति है जो खनिज जगत, वनस्पति जगत और प्राणी जगत में भी संयोजन और सम्बन्ध स्थापित करके सबको एकता के सूत्र में पिरोए हुए है। यह सब जगत एक दूसरे पर निर्भर और आश्रित हैं तथा बिना एक की सहायता के दूसरा अपना अस्तित्व क़ायम नहीं रख सकता, क्योंकि सब एक दूसरे से सम्बद्ध हैं।

वनस्पति जगत, खनिज जगत पर निर्भर करता है, क्योंकि बिना मिट्टी से पानी द्वारा भोजन लिए हुए वनस्पति जगत पनप नहीं सकता; बिना वनस्पति जगत के शाकाहारी प्राणी जीवित नहीं रह सकता क्योंकि शाकाहारी प्राणी का भोजन वनस्पति जगत से ही मिलता है और बिना शाकाहारी प्राणी के मांसाहारी प्राणी भी जीवित नहीं रह सकता, क्योंकि मांसाहारी प्राणी, शाकाहारी प्राणी को खा कर ही जीवित रह पाता है। इस प्रकार यह सब एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। जिस प्रकार से हमारे शरीर के भिन्न-भिन्न अंग और अवयव एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं और हमारे अपने एक शरीर के कल्याण के लिए सब मिलजुल कर कार्य करते रहते हैं, उसी प्रकार खनिज जगत, वनस्पति जगत और प्राणी जगत भी एक दूसरे की सहायता करके अपने सबके कल्याण के लिए मिलजुल कर कार्य करते रहते हैं।

हम जो सांस छोड़ते हैं उसमें कार्बन-डाइ-आक्साइड (Carbon-Dioxide), जो कि प्राणियों के लिए एक विषैली गैस

या वायु है, निकलती है। यह गैस या वायु प्राणी जगत के लिए तो विष है परन्तु वनस्पति जगत के लिए यही वायु उनको भोजन की सामग्री प्रदान करती है। यह वृक्ष और पौधे हमारी सांसों से निकली हुई विषैली और दूषित वायु (Carbon dioxide) को खाकर उसके बदले में हमें प्राणवायु के रूप में आक्सीजन (Oxygen) देते हैं। इस प्राणवायु के बिना हम एक क्षण जीवित नहीं रह सकते। इस प्रकार हम देखते हैं कि वनस्पति जगत हमारी सांसों से निकली हुई विषैली वायु के लिए प्राणी जगत पर आश्रित है तथा प्राणी जगत प्राणवायु अर्थात् आक्सीजन के लिए वनस्पति जगत पर निर्भर है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि देखने में इस संसार की वस्तुएं अलग अलग हैं किन्तु मनुष्य शरीर के अलग अलग अंगों और अवयवों की तरह वह सब एक दूसरे पर आश्रित रहने के कारण एकता में सम्बद्ध हैं।

एक बात और भी है। वह यह है कि सब हरे-भरे पौधे और वनस्पति केवल सूर्य के प्रकाश में ही हमारी सांसों से निकली हुई दूषित वायु, कार्बन-डाइ-आक्साइड, को आत्मसात करके ही, हमको प्राणवायु (आक्सीजन) दे सकने की क्षमता रखते है, अन्यथा नहीं। बिना सूर्य के प्रकाश के न कोई वनस्पति ही पनप सकती है और न कोई प्राणी ही जीवित रह सकता है। शाकाहारी प्राणी का जीवन वनस्पति के भोजन पर ही निर्भर होता है, जो केवल शाक-भाजी, हरी पत्ती, फल और अनाज इत्यादि खाकर ही अपना जीवन बनाए रखता है। किन्तु मांसाहारी प्राणियों का जीवन शाकाहारी जानवरों के आश्रित रहता है, क्योंकि शाकाहारी पशुओं को खाकर ही मांसभक्षी प्राणी अपने को जीवित रखता है। अतः शाकाहारी और मांसाहारी प्राणियों का जीवन, इस प्रकार

से केवल वनस्पति जगत पर ही आधारित है और यह वनस्पति जगत सूर्य के प्रकाश पर ही निर्भर रहता है। इसीलिए वैज्ञानिक लोग, इस पृथ्वी के लिए, सूर्य को ही ऊर्जा का मूल स्रोत मानते है और उसे (Ultimate source of Energy) कहते हैं। इस प्रकार हम सबके सब सूर्य से भी सम्बद्ध हैं।

जिस प्रकार चन्द्रमा का प्रकाश, सूर्य के प्रकाश पर निर्भर करता है, उसी प्रकार हमारा यह सूर्य भी अन्य अन्य कारणों पर आश्रित हैं। इन सबकी प्रक्रिया थोड़े से समय में विस्तार से बताना यहां सम्भव नहीं है, क्योंकि यह सब विवरण एक अलग का ही विषय है। जो भी हो, उपर्युक्त बातों से यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है कि हम सब पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य इत्यादि एक-दूसरे से एकता में बंधे हुए हैं। यह सब बातें पूर्ण रूप से प्रमाणित करती हैं कि यह सारे का सारा विश्व अलग अलग दिखाई देते हुए भी एक ही सूत्र में बंधा हुआ है।

इस प्रकार वैज्ञानिक रूप से भी यह बात साफ़ है कि इस विश्व के समस्त अवयव एक दूसरे से सम्बद्ध हैं, जिस प्रकार कि हमारे शरीर के भिन्न भिन्न अंग और अवयव एक दूसरे से सम्बद्ध हैं, विश्व का यह सब संयोजन भी एक ही ऊर्जा के द्वारा कार्यान्वित होता है। इसे शिव शक्ति, आत्मा, अल्लाह, गाड चाहे जो कह लो। विश्व में इसी शक्ति के द्वारा हम सब एक दूसरे से सिलसिलेवार मिले होने के कारण एक ही हैं। यों कह लो कि यह सारा विश्व एक विराट शरीर है जिसमें अलग अलग भिन्न भिन्न नाम-रूप वाले पदार्थ और प्राणी विश्वव्यापी शक्ति द्वारा एक सूत्र में पिरोए हुए हैं। इसीलिए हमारे आचार्यों ने सूत्र रूप में यह कहा है :—

"जो पिन्डे सो ब्रह्माण्डे।" अर्थात् जिस प्रकार की व्यवस्था हमारे शरीर के पिण्ड में काम करती है वैसी ही व्यवस्था ईश्वर की सर्व-व्यापी शक्ति द्वारा ब्रह्माण्ड में काम करती है।

यहां पर इस विश्वव्यापी शक्ति या ऊर्जा के सम्बन्ध में बतला देना बहुत आवश्यक प्रतीत होता है। इस शक्ति या ऊर्जा द्वारा कण-कण अनुप्राणित हैं। जहां कहीं भी कोई क्रिया, करना या होना पाया जाता है, उन सब कार्यों का एक मात्र कारण यही शक्ति होती है। विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में यह शक्ति या ऊर्जा अनिवार्य है। इसके भिन्न भिन्न कार्यों और रूपों के कारण, विज्ञान ने इसके अलग अलग नाम दे दिये हैं किन्तु वास्तव में यह सब एक ही हैं। जैसे ऊष्मा (Heat) प्रकाश (Light), चुम्बकत्व (Magnetism), विद्युत (Electricity), ध्वनि (Sound)। याद रहे कि ऊर्जा के यह सब अलग अलग रूप एक दूसरे मे परिवर्तित हो सकते हैं और होते भी रहते हैं। इसलिए इनके अलग अलग नाम-रूप और गुण होते हुए भी यह सब एक ही हैं। उदाहरण के लिये समुद्र को लीजिए। चीन के पास वाला समुद्र चीन सागर कहलाता है, भारत के पास वाला समुद्र भारत (हिन्द) सागर कहलाता है, अरब के पास वाला समुद्र अरब सागर कहलाता है, इंग्लैण्ड के पास वाला समुद्र ब्रिटिश चैनेल कहलाता है, उत्तरी ध्रुव पर समुद्र, उत्तरी ध्रुव सागर कहलाता है, और दक्षिणी ध्रुव का समुद्र, दक्षिणी ध्रुव सागर कहलाता है। इसी प्रकार, जहां पर समुद्र का रंग कुछ लाल है उसको लाल सागर कहते हैं और जहां समुद्र शान्त है, उसको प्रशान्त महासागर कहते हैं। यह सब अलग अलग नाम होते हुए भी, यह सबको भलीभांति ज्ञात है कि इस सारे संसार में केवल एक ही सागर या समुद्र है जो

पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक फैला हुआ है। इसी प्रकार सारे विश्व में ऊर्जा भी एक ही है, जो विश्व भर में फैली हुई है, किन्तु अलग अलग क्षेत्रों के कारण इसके अलग अलग नाम पड़ गये हैं। युद्ध क्षेत्र के कार्यों में इसी ऊर्जा को वीरता या साहस कहते हैं तथा वनस्पति के उगाने में इसी शक्ति या ऊर्जा को वर्धन शक्ति कहते हैं, इत्यादि इत्यादि।

वास्तव में यह केवल एक ही शक्ति है जो प्रकृति के तमाम नियमों का नियन्त्रण करती है और अलग अलग नामों से पुकारी जाती है, जैसे सम्बद्धता शक्ति (Force of Cohesion), गुरुत्व शक्ति (Force of Gravitation), क्रिया और प्रतिक्रिया शक्ति (Force of Action and Reaction), आकर्षण शक्ति (Force of Attraction), प्रतिकर्षण (Repulsion), प्रजनन (Reproduction) उत्पादन शक्ति (Production), उन्नति शक्ति (Development), विकास शक्ति (Evolution) इत्यादि इत्यादि। यह शक्ति तो एक ही है किन्तु अलग अलग कार्यों के कारण इसके अलग अलग नाम रख दिये गये हैं। यह शक्ति या ऊर्जा अमर है, इसका कभी नाश नहीं हो सकता। काठ को काट-काट कर उस के टुकड़े टुकड़े कर डालो, किन्तु उसके अन्दर की छिपी हुई अग्नि को तुम कभी भी नष्ट नहीं कर सकते। यह अग्नि भी उसी शक्ति या ऊर्जा का नाम है, जो विश्वव्यापी एवं अविनाशी है। इसीलिए ऋगवेद का पहला मंत्र इसी अग्नि की प्रार्थना के सम्बन्ध में है। यह अग्नि ईश्वर का प्रत्यक्ष प्रतीक है। वैदिक ऋषियों ने ईश्वर का एक नाम अग्नि भी कहा है क्योंकि इस शक्ति या ऊर्जा के बिना विश्व

में कुछ भी नहीं हो सकता और न कुछ ठहर ही सकता है। इसी ऊर्जा या शक्ति के कारण परमात्मा को सर्वशक्तिमान भी कहते हैं।

हम जिनको जड़ पदार्थ कहते हैं, वह सब भी इसी विश्व-व्यापी अग्नि या ऊर्जा का बदला हुआ रूप है। बिना इस ऊर्जा के यह तथा-कथित जड़ पदार्थ अपने में भौतिक और रसायनिक गुणों को क़ायम नहीं रख सकते। इन सब पदार्थों में भी वही शक्ति या ऊर्जा है जो संघनित रूप (Condensed Form) में उनमें छिपी हुई है। जिस प्रकार पानी में भाप संघनित होती है या बर्फ़ में पानी संघनित होता है वैसे ही यह विश्वव्यापी शक्ति भी सभी जड़ समझे जाने वाले, पदार्थों में संघनित होती है। जिस प्रकार भाप या बर्फ़ से पानी फिर से प्राप्त किया जा सकता है, ठीक उसी प्रकार, उपर्युक्त साधनों द्वारा इन तमाम संसारी पदार्थों से यह संघनित शक्ति फिर से रूपान्तरित की जा सकती है। ऐसा इसलिए सम्भव है क्योंकि यह सब पदार्थ मूल रूप में ऊर्जा के अति-रिक्त और कुछ हैं ही नहीं।

इस विश्वव्यापी शक्ति या ऊर्जा के मौलिक स्वरूप या श्रोत को, ईश्वर, परमात्मा, अल्लाह, खुदा, गाड, नेचर इत्यादि, चाहे जो कह लो, कहा जाता है। यों तो यह अनामी है, किन्तु बोलचाल के लिए लोगों ने इसके अनेक नाम रख दिये हैं। वास्तव में सत्य तो एक ही है। वेदान्त में इसे ब्रह्म या आत्मा कहते हैं, क्योंकि ब्रह्माण्ड में ब्रह्म ही ब्रह्म, समान रूप से, फैला हुआ है। यही शक्ति सब में है और सब कुछ इसी में है।

उदाहरण के लिए——आभूषण में सोना है और सोने में आभूषण है, ठीक वैसे ही यह आत्मा, परमात्मा या ब्रह्म सब में है और सब कुछ इस में है। यहां आत्मा को पदार्थों से अलग नहीं समझना चाहिए, जैसे कबूतर घोंसले में है; यहां कबूतर और घोंसला अलग अलग हैं। जैसे सांप बिल में है; यहाँ सांप और बिल अलग अलग हैं किन्तु यदि हम यह कहें कि ब्रह्म या आत्मा सब पदार्थों में है तो, यहां ब्रह्म या पदार्थ अलग अलग नहीं है। वह ब्रह्म तो पदार्थों में इस प्रकार है जैसे कुल्हाड़ी में लोहा या सोने के आभूषणों में सोना। यहां आत्मा सब में एक हो रहा है, आत्मा से बाहर कुछ नहीं है। इसी आत्मा के कारण सारा विश्व एकता में सम्बद्ध है, यह सब कुछ एक ही का पसारा है। यह ही शाश्वत सत्य है। इसी को समझो,जानो और आत्मसात करो।

सागर में हज़ारों-लाखों लहरें होती हैं। सब अलग अलग सी प्रतीत होती हैं, कोई बड़ी कोई छोटी और कोई तिरछी कोई टेढ़ी। ऐसा प्रतीत होता है कि एक बड़ी लहर ने छोटी लहर को खा लिया या एक बड़ी लहर छोटी लहर को पकड़ने दौड़ी, किन्तु छोटी लहर भागकर ग़ायब हो गयी, एक लहर दूर-दूर तक दौड़ती चली गयी, एक लहर पैदा होते ही मिट गई इत्यादि इत्यादि। समुद्र के किनारे बैठकर देखने में इन लहरों का तमाशा भी बड़ा विचित्र और आकर्षक दिखलाई देता है। एक अबोध बालक इन सब लहरों को अलग-अलग ही समझता है, लेकिन क्या यह सब लहरें वास्तव में अलग अलग हैं ? नहीं, नहीं। एक ज्ञानी पुरुष ऐसा नहीं कह सकता, क्योंकि यह सब लहरें सागर से अलग नहीं हैं, इन सब में एक ही सागर का जल ओत-प्रोत हो रहा है। यह लहरें अलग अलग प्रतीत होते हुए भी सागर के माध्यम होने के

कारण वास्तव में एक ही है। इसी प्रकार विश्व में सब वस्तुएं या प्राणी देखने में भले ही अलग अलग से प्रतीत होते हों, किन्तु इन सब में एक ही आत्मा या एक ही ब्रह्म, लहरों में सागर की तरह, ओत-प्रोत है। अतः हम सब अलग अलग प्रतीत होते हुए भी एक हैं और वही हैं जो वह है।

यद्यपि सागर बूंदों का ही सामूहिक रूप है किन्तु यदि समस्त सागर को तुम मथ डालो तो भी तुमको उसके अन्दर कोई बूंद अलग से नहीं मिलेगी। सब सागर, केवल सागर ही है। अरे प्यारो! बूंद तो तब कही जायेगी, जब वह सागर से अलग होगी। मान लो यदि हम सब इस ब्रह्मत्व के सागर में अलग अलग बूंद समझे भी जावें तो, ऐसा समझना ग़लत है, क्योंकि ब्रह्मत्व का यह सागर अनन्त और असीम है तथा कोई भी बूंद उसके बाहर हो ही नहीं सकती। सागर में तो सब सागर ही सागर है, ढूंढ़ने पर भी उसके अन्दर कोई बूंद नहीं मिलेगी। इस सन्दर्भ में एक कहानी याद आ गई, उसको यहां कह देना कुछ अनुचित न होगा।

अकबर बादशाह के नवरत्नों में एक रत्न का नाम बीरबल था। बीरबल एक बहुत सूझ-बूझ वाले आदमी तथा एक कुशल हाज़िर जवाब भी थे। एक दिन बीरबल ने बादशाह से कहीं कह दिया, "जहांपनाह, आप तो ख़ुदा से भी बड़े हैं।" अकबर ने पूछा—"कैसे ?" बीरबल ने निवेदन किया—"जो काम ख़ुदा भी नहीं कर सकता, वह काम आप आसानी से कर सकते हैं।" यद्यपि बादशाह बीरबल का बहुत आदर करता था और उनको अपने दोस्त की तरह ही मानता था, परन्तु बादशाह अकबर को यह बात बिल्कुल पसंद नहीं आयी। वह ख़ुदा से बहुत डरता था। बीरबल की

बात सुनकर वह क्रोधित हो उठा और उसने बीरबल से कहा--"तुमने ऐसी बात मुंह से निकाली है, जो मैं, मुसलमान होते हुए, हर्गिज़ बरदाश्त नहीं कर सकता। तुमने तो मुझे ख़ुदा से भी बड़ा बना दिया, जो असम्भव है। मुझको ऐसी ख़ुशामद बिल्कुल पसंद नहीं है, यह कुफ़्र है। तुमको यह बात साबित करनी होगी। अगर तुम यह बात साबित न कर सके तो तुम्हारी गर्दन उड़ा दी जायेगी। मैं ख़ुदा का यह अपमान कदापि बरदाश्त नहीं कर सकता।"

अकबर ख़ुदा के क़हर (क्रोध) के डर के मारे कांपने लगा। किन्तु अकबर को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि बीरबल पर उसके क्रोध का कोई असर नहीं हुआ। बीरबल ज्यों का त्यों शान्ति से मुस्कुरा रहा था। उसने नम्रता से निवेदन किया--"जहांपनाह, यदि आप रुष्ट होकर किसी को अपने राज्य से बाहर निकालना चाहें, तो आप यह काम बहुत आसानी से फ़ौरन पूरा कर सकते हैं, परन्तु अल्लाह ताला यदि किसी को अपने राज्य से बाहर निकालना भी चाहे तो वह ऐसा हरगिज़ नहीं कर सकता, क्योंकि ख़ुदा या अल्लाह का साम्राज्य तो असीम और अनन्त है। वह अपने राज्य से किसी को बाहर कैसे निकाल सकता है? प्रत्येक जगह तो उसी का साम्राज्य है। लेकिन इसके विपरीत जहांपनाह में यह क्षमता है कि वह किसी को भी अपने राज्य से निकालकर बाहर कर सकते हैं। इसीलिए कम से कम आप एक काम तो ऐसा कर ही सकते हैं, जो ख़ुदा नहीं कर सकता।" बीरबल की चतुर हाज़िर जवाबी सुनकर बादशाह मुस्कुराया और उसने बीरबल की प्रशंसा करते हुए बहुत कुछ इनाम देकर उनको ख़ुश किया।

यहां इस कहानी का तात्पर्य यह है कि ईश्वरत्व का महासागर तो अनन्त और असीम है। इसके बाहर कुछ हो सकना तो सोचा भी नहीं जा सकता है। जब ऐसा है तो, कोई बूंद उसके, अर्थात् ईश्वरत्व के सागर के बाहर हो ही नहीं सकती। अतः इस ईश्वरत्व के महासागर के अन्दर जो कुछ भी है वह सब ईश्वरत्व का सागर ही, है अलग बूंद तो कहीं है ही नहीं। इसी प्रकार हम सब जड़ या चेतन, जो कुछ इस ब्रह्मत्व के महासागर में हैं, उससे अलग नहीं हैं। यहां भी सागर, वहां भी सागर। जहां हम बूंद समझते वहां भी सागर, सब कुछ सागर ही सागर तो है। ब्रह्म तो पूर्ण (Infinite) है, जो पूर्ण है वह सब जगह और सब प्रकार से पूर्ण है। कोई भी वस्तु उसकी पूर्णता में बाधक नहीं हो सकती। उसके खण्ड नहीं हो सकते, क्योंकि वह अखण्ड है। वह पूर्ण रूप से पूर्ण है। इसलिए बूंद भी वही है जो सागर है, और हम सब भी वही हैं जो ब्रह्म है।

सोने के भिन्न भिन्न प्रकार के आभूषण बनते हैं। यह सब आभूषण बनते एवं बिगड़ते रहते हैं, किन्तु सोने का क्या बिगड़ा। आभूषण भले ही बनते-बिगड़ते रहें, किन्तु सोना तो सोना ही बना रहता है; इस उदाहरण में आभूषण को मिथ्या कह सकते हैं क्योंकि वह परिवर्तनशील हैं और बनते-बिगड़ते रहते हैं। आभूषणों के विचार से उनमें सोना सत्य कहा जा सकता है, क्योंकि सोना आभूषण बनने के पहले भी सोना था, आभूषण बन जाने पर भी सोना ही है तथा आभूषण के टूट जाने, गल जाने के पश्चात् भी वह सोना ही बना रहेगा।

इसी प्रकार से मिट्टी के अनेकों नाम-रूप के खिलौने और बर्तन बनते हैं, जो टूट-फूट कर फिर मिट्टी ही हो जाते हैं किन्तु

मिट्टी का क्या बिगड़ता है ? मिट्टी तो सदा ही मिट्टी बनी रहती है ।

दीपावली के अवसर पर शक्कर के खिलौने बनते हैं । हाथी, घोड़ा, कुत्ता, गधा, चिड़िया, राजा, सिपाही आदि अनेक नाम-रूप के खिलौने बनते हैं । यह खिलौने अलग अलग नाम और रूप होने के कारण, अलग अलग से दिखाई देते हैं, किन्तु इससे क्या ? हैं तो पब शक्कर के ही खिलौने–

खांड का कुत्ता, गधा, घोड़ा बिला ।
मुंह में डालो ज़ायक़ा है खांड का ।।

यह खिलौने भले ही टूट जायें किन्तु शक्कर तो शक्कर ही बनी रहेगी ।

यहां पर एक कहानी बीरबल की फिर याद आ गई, उसको सुनिये । अकबर बादशाह ने एक दिन अपने दरबारियों से पूंछा कि दुनियां में अंधे ज़्यादा हैं या देखने वाले । सबने यही कहा कि देखने वाले ज़्यादा हैं और अन्धे कम हैं, बादशाह का भी यही ख़याल था, लेकिन बीरबल चुप रहा । अतः अकबर ने बीरबल को सम्बोधित करते हुए उससे पूछा, "इस सम्बन्ध में तुम्हारी क्या राय है ।" बीरबल ने निवेदन किया––"मेरे विचार से तो इस दुनियां में ज़्यादातर लोग अंधे ही अंधे हैं ।" अकबर ने पूछा––"कैसे ?" बीरबल ने कहा––"इस का उत्तर मैं दो दिन बाद दूंगा ।"

उसी दिन शाम को बीरबल पगड़ी बांध कर दरबार में गया । बादशाह ने पूछा,––"आज तुमने इतनी बड़ी पगड़ी क्यों बांध रखी है ?" बीरबल ने कोई जवाब नहीं दिया । दूसरे दिन कुछ

अधिक सर्दी होने के कारण बीरबल एक शाल ओढ़कर दरबार में गया और फिर उसी दिन शाम को चूड़ीदार पाजामे पर धोती पहन कर गया। सभी दरबारियों ने उसका बहुत मज़ाक उड़ाया। अकबर ने कहा,—"बीरबल, तुमने यह क्या स्वांग बना रखा है? जानते नहीं यह शाही दरबार है।" बीरबल ने अति नम्रता से निवेदन किया,—"जहांपनाह, यह आपके कल के सवाल का उत्तर है कि ज़्यादा संख्या अंधे लोगों की है या देखने वालों की।" बादशाह ने कहा,—"मैं कुछ समझा नहीं, ज़रा साफ़ साफ़ कहो।" बीरबल ने कहा,—"कल मेरे सिर पर जो पगड़ी बंधी थी, उसी को आज सवेरे मैंने शाल की तरह ओढ़ रखा था और इस समय उसी को मैंने धोती की तरह पहन रखा है। अंधे लोगों ने उसे पगड़ी कहा, फिर उसे शाल कहा और इस समय वह उसे धोती कह रहे हैं। असलियत में तो वह सिर्फ़ एक कपड़ा ही है, लेकिन अंधों को यह कपड़ा नहीं दिखायी पड़ता। वह लोग उसे कुछ का कुछ कहते हैं, इसीलिए तो मैं कहता हूं कि दुनिया में अंधों की संख्या ज़्यादा है, क्योंकि वह लोग दिखावट में भूले रहते हैं और असलियत को नहीं देखते।

प्यारो! यही हाल दुनिया वालों का है। वास्तव में यह सब कुछ ब्रह्म ही ब्रह्म है, लेकिन अज्ञानी लोग जिनकी ज्ञान की आखें बंद ,हैं उनको यह ब्रह्म दिखलाई नहीं देता। संसार के तड़क-भड़क के आकर्षण में उन की आखें ठीक वैसे ही चकाचौंध हो जाती हैं जैसे उल्लू की आखें सूर्य के प्रकाश में। ऐसे व्यक्तियों को भला ब्रह्म की एकता कैसे दिखलाई दे सकती है?

सत्य तो यह भी है कि श्याम कल कलकत्ते गया था या अमुक

व्यक्ति हैज़े से बीमार है, इत्यादि इत्यादि, परन्तु यह शाश्वत सत्य नहीं है। भगवन, सत्य तो उसे ही कहते हैं जो कल था, वही आज है और जो आज है वह सदा सदा वैसा ही विद्यमान रहे। इस मापदण्ड के अनुसार, जैसा कि कई उदाहरणों से बताया जा चुका है कि विश्व में कुछ भी बनता या बिगड़ता प्रतीत होता रहे, परन्तु ब्रह्म एक समान बना रहता है। वही सबमें सब कुछ है। वह न बढ़ता है और न ही घटता है, क्योंकि वह तो पूर्ण है; वह एक सा ही बना रहता है। इसलिए वास्तव में केवल एक ब्रह्म ही सत्य है और सभी परिवर्तनशील या मिथ्या कहे जाते हैं। यह सब अर्थात् हम-तुम, पृथ्वी-आकाश, सूर्य-चन्द्र तथा समस्त नक्षत्रगण इत्यादि, सिवाय ब्रह्म के अन्य कुछ है ही नहीं। यह सब उसी ब्रह्म की शक्ति या सत्ता से, जल में बुलबुलों, फेन या लहरों के समान, उसी ब्रह्म में उत्पन्न होते हैं, उसी में बने रहते और उसी में लय हो जाते हैं क्योंकि ब्रह्म तो सदा एक रहा, एक है और समुद्र में जल की तरह, आभूषणों में सोने की तरह, शक्कर के खिलौनों में शक्कर की तरह, मिट्टी के बर्तनों में मिट्टी की तरह या भिन्न भिन्न पोशाकों के कपड़ों में रुई की तरह या बरफ़ में पानी की तरह सदा एक सा ही बना रहेगा। इसीलिए हमारे ऋषियों और विचारकों ने निर्विवाद रूप से यह सिद्ध किया है,—"एको ब्रह्म द्वितीयोनास्ति।" अर्थात् ब्रह्म ही ब्रह्म है, दूसरी अन्य वस्तु तो कुछ है ही नहीं। यही शाश्वत सत्य है।

यह वाक्य ही सत्य है और यही शाश्वत सत्य है। जिसने इस सत्य का अनुभव कर लिया, उसके लिए यह सब विश्व लोप हो गया, उसे अब कुछ कहना, सुनना, करना बाक़ी नहीं रह गया।

उसका मेरा तेरा, अपना-पराया, ऊँच-नीच, छूत-अछूत का भेद-

भाव, मान-अपमान, हानि-लाभ, घृणा और प्यार सब कुछ ब्रह्म की एकता की बाढ़ में बह गया। न मैं रहा और न तू। "हम न तुम दफ़्तर गुम।" बस केवल एक ही एक रह गया, द्वैत मिट गया। यही तो अद्वैत की एकता है।

एक ही एक है यां, ग़ैर का कुछ काम नहीं।
ज़ाते मुतलक़ में कहीं, रूप नहीं नाम नहीं।।

विश्व की अनेकता में इसी सर्वव्यापी ब्रह्म की एकता के कारण हम सब एक ही हैं। जिसने इस विश्वव्यापी एकता का व्यावहारिक रूप से अनुभव कर लिया वह ही सच्चा ज्ञानी है। ऐसा व्यक्ति ऊंच-नीच हानि-लाभ, जीवन-मृत्यु बन्धन और मुक्ति, साधन और साध्य आदि से ऊपर उठ जाता है। उसको विषयों से कोई लगाव नहीं रह जाता। उसके मन में संकल्प-विकल्प कुछ भी नहीं उठते। वह ब्रह्म की अनुभूति के कारण, परमानन्द में डूबे रहते हुए भी, सब कार्य अनासक्ति भाव से करता रहता है। वह सोता हुआ भी जागता रहता है और जागते हुए भी सोया सा प्रतीत होता है। यही अवस्था शाश्वत सत्य की अनुभूति की है। तुम भी, शाश्वत सत्य के द्वारा प्राप्त, परम सन्तोष, शान्ति और आनन्द से लाभान्वित हो सकते हो।

वेदान्त का यह अद्वैत सिद्धान्त अकाट्य है। इसमें शक मत करो। उसको ठोंक-बजाकर देखो, उसको उलट-पलट कर हर प्रकार से निरखो, परखो, उसकी जांच करो, उसका विश्लेषण करो। यदि वह अद्वैत विचार तुम्हारी समझ में अच्छी तरह से ठीक उतरे, तो उसको अपने व्यवहार में लाकर अपने जीवन को सफल बनाओ और संसार में इस अद्वैत ज्ञान के द्वारा शान्ति और

आनन्द पूर्वक विश्व की आत्मा के साथ एक होते हुए, शहन्शाह बन कर रहो। डरो मत, इसमें डरने की कोई बात नहीं है।

यदि तुमको सारा संसार भी तुम्हारे विरोध में होता हुआ प्रतीत हो तो परवाह मत करो। तुम्हारा कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता, क्योंकि तुम्हारे सिवा दूसरा कोई है ही नहीं। गैंडे को भी वह स्थान नहीं मिलेगा, जहां तुम्हारे शरीर में वह अपना सींग गड़ा सके; शेर को भी वह जगह नहीं मिलेगी, जहाँ वह तुम्हारे शरीर में अपने दांत और पंजे लगा सके। तलवार की धार भी तुम्हारे लिए गोठिल हो जायेगी; बंदूक़ की गोली तुम्हारे शरीर को छू न सकेगी। मौत को भी मौत आ जायेगी, अगर वह तुम्हारी ओर मुंह भी करेगी। निश्चय मानो समय तुम्हारा साथ देगा। प्रकृति के सारे के सारे तत्व तुम्हारे इशारे पर चलेंगे, मानो वह तुम्हारे ही अपने हाथ-पैर हों। इस बात पर तुम्हारा पूर्ण निश्चय और पूर्ण विश्वास हो कि केवल एक तुम ही हो, तुम्हारे अतिरिक्त और है कौन जिससे तुम डरते हो? चांद-सूरज पर नियन्त्रण करने वाले तुम ही हो, प्रकृति पर शासन करने वाले तुम हो, वायु तुम्हारी आज्ञा से अठखेलियां करती है और मौत पर तुम्हारा ही कोड़ा है। अपने को जानो तो सही, अपने को पहचानो तो सही। तुम तो वही हो जो वह है।

तुम किस झंझट में पड़े हो?
दुनिया के किस लालच में फंसे हो
हस्ती के मत फ़रेब में आजाइयो असद
आलम तमाम हल्क़ाए दामे ख़याल है।

अरे प्यारो ! दुनिया की यह तड़क-भड़क स्वप्न की तरह केवल कल्पित है । इसके लालच के जाल में कभी न फंसना अन्यथा धोखा खाओगे और पछताओगे । राम तुम्हें बार बार चेतावनी देता है कि शाश्वत सत्य को अपनाओ । अरे अपना कर तो देखो, सब देवता तुम्हारा पानी न भरें तो कहना । तुम्हारी सब इच्छाएं एवं वासनाएं स्वतः शान्त न हो जायें तो कहना । जब तुम पूर्ण-काम हो तो, तुमको किस बात की इच्छा रह जायेगी ? तुम इस सत्य के लिए जियो और इसी सत्य के लिए मरो । तुम अकेले ही सही । यदि तुम सत्य पर आरूढ़ रहोगे तो अन्त में तुम्हारी ही जीत होगी ।

यह नर्क सा संसार तुम्हारे लिए स्वर्ग का साम्राज्य बन जायेगा । इस स्वर्ग में तुम्हारा ही एक छत्र राज्य है । तुम इस शाश्वत सत्य को अपनाओ तो सही । सत्य तुमको स्वतंत्र बनाता है, सत्य तुमको निर्भय और सम्पन्नशाली बनाता है । सत्य ही मनुष्य में आत्म-विश्वास पैदा करता है । जहां सत्य है, वहां विजय है । सत्य की शक्ति ही वास्तविक शक्ति है । प्रकृति ने अपनी पुस्तकों में साफ़ साफ़ लिखा है कि निर्बलता सबसे बड़ा पाप है, जो अज्ञानता से उत्पन्न होती है । सत्य का ज्ञान तुमको शहंशाह बनाता है और शरीर या चमड़े का बोध या देह अभिमान, चाहे वह ब्राह्मण या सन्यासी होने का ही अभिमान क्यों न हो, मनुष्य को चमार बना देता है । जिस किसी को भी यह देह अभिमान है, वह ही शूद्र है और जिसको सत्य का व्यावहारिक ज्ञान है, वही ब्राह्मण है चाहे वह किसी भी जाति में पैदा हुआ हो, जैसे वालमीक, शवरी, व्यास और रविदास इत्यादि । सत्य के पालन करने से घबराओ मत कि तुम्हारे अनेक विरोधी हैं । लाखों करोड़ों मनुष्यों में

शायद केवल कुछ अल्प-संख्यक लोग ही तुम्हारे विरोध में हो सकते हैं, किन्तु इससे क्या ? तुम अकेले ही सही। तुम सत्य का साथ पकड़े तो रहो। तुम्हारे यह विरोधी, वह चाहे जितने सबल और शक्ति-शाली क्यों न हों, सबके सब प्रातःकाल की ओस की बूंदों के समान हैं। तुम्हारे सत्य के सूर्य की गरिमा के सामने यह सब क्षण भर में लुप्त हो जायेगें। किन्तु तुम सत्य का साथ पकड़े तो रहो। सत्य पर तुम पूर्ण निश्चय के साथ अटल तो रहो। तुम अपने को अकेला मत समझो। पर्वतों की चट्टानें तुम्हारे साथ हैं। समस्त वृक्ष और नदियां, वायु, सूर्य और सितारे सबके सब तुम्हारे साथ हैं। क्या हुआ, यदि मुट्ठी भर मनुष्य तुम्हारे विरोधी है ? यह दिन तुम्हारे है। यह रातें तुम्हारी हैं। यह अनन्त काल और यह शाशत्व तुम्हारा ही है। यह समस्त प्रकृति तुम्हारी है। सत्य पर डटे रहो और निर्भयता से आगे बढ़ते रहो। विजय तुम्हारी ही है, क्योंकि ईश्वर तुम्हारे ही माध्यम से काम कर रहा है।

एक बात याद रहे कि, प्रत्येक अच्छी वस्तु को पाने के लिए उसकी कुछ क़ीमत अवश्य चुकानी पड़ती है। यदि तुम अपने जीवन को सच्चिदानन्द के ख़ज़ाने से माला-माल करना चाहते हो तो उसके बदले में अपनी अज्ञानता का त्याग करना पड़ेगा। तुमको अपने अहं-भाव (Ego) को तिलांजलि देनी होगी। अपने मलिन अहंकार को ब्रह्म के सर्वव्यापी शुद्ध अहंकार में विलीन करना होगा। अपने मोह को विश्व-प्रेम में परिणत करना होगा। अपने इस सीमित शरीर से ऊपर उठकर विश्व के विराट शरीर को अपना शरीर जानना होगा, तभी तुम आत्म-साक्षात्कार का पूर्ण आनन्द उठा सकोगे। बोलो, इस शाश्वत

सत्य के परम आनन्द की प्राप्ति के लिए क्या तुम यह तुच्छ मूल्य चुकाने के लिए तैयार हो या नहीं ? यदि हो, तो इस सत्य की अनुभूति तुमको इसी क्षण हो सकती है, अन्यथा इसमे अनेक जन्म भी लग सकते हैं। तुम्हारी सफलता तो तुम्हारी अपनी लगन की प्रगाढ़ता व प्रबलता (Intensity) पर निर्भर है। इस प्रकार की सच्ची व निरन्तर लगन को भक्ति की संज्ञा दी गई है। इसकी भावना मनुष्य में सत्संग एवं उपयुक्त शास्त्रों के अध्ययन से प्रेरणा पाती है। जो जो बातें हमारे विकास में बाधक होती हैं जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष, पक्षपात इत्यादि इत्यादि, यह सभी धीरे-धीरे सत्संग द्वारा हमसे स्वतः ही छूटने लग जाती हैं। यह सब विकार तो पशुत्व के चिन्ह हैं, किन्तु अब तुम पशु नहीं हो। अब तो तुम पशुओं की योनि से उठकर मनुष्य योनि में आ गये हो। अब तो तुम विवेक-शील प्राणी हो। ज़रा विचारो और समझो कि मनुष्य होकर पशुओं जैसे यह सब विकार अब तुम्हें शोभा नहीं देते।

अपने आध्यात्मिक विकास के लिए तुमको पाशविक मनोविकारों से ऊपर उठना होगा। अपने मन के विकारों को निरन्तर ज्ञान की अग्नि में तपा-तपा कर शुद्ध करना होगा। यह सब विकार अज्ञानता में ही पनपते हैं। स्वाध्याय एवं सत्संग की सहायता से, यह अज्ञानता दूर होकर, अन्तःकरण शुद्ध होने लगता है। ज्यों-ज्यों अन्तःकरण शुद्ध होता जाता है त्यों-त्यों उसमें पवित्रता आने लगती है।

आध्यात्म की उन्नति के लिए अन्तःकरण की पवित्रता परमावश्यक है। पवित्रता ही मनुष्य की उत्तम विशेषता है। पवित्रता

ही मनुष्य के जीवन का सात्विक तत्व है। पवित्रता ही स्त्री का भी अमूल्य आभूषण है और निश्चय मानो कि महान आत्माएं केवल पवित्र माताओं के गर्भ से ही जन्म लेती हैं। यदि हमारे देश की देवियां राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसामसीह, शंकराचार्य जैसे महात्माओं की माता बनने का सौभाग्य प्राप्त करना चाहती हैं तो उनको अपना चरित्र और जीवन शुद्ध एवं पवित्र बनाना होगा। पवित्रता ही धार्मिक उन्नति का सोपान है। पवित्र अंतःकरण में ही ईश्वर की अनुभूति होती है। जैसे जैसे मनुष्य में पवित्रता आती जाती है, वैसे ही वैसे उसकी विवेक बुद्धि भी अधिक प्रखर तथा तेज़ होती जाती है और तब मनुष्य को यह स्वयं ही निश्चय हो जाता है कि उसके हित में क्या है और क्या नहीं, क्या सत्य है और क्या असत्य ? ऐसी अवस्था में असत्य उससे अपने आप ही धीरे धीरे छूटता जायेगा। तुमको तो केवल सत्य की ओर चल पड़ना है और बराबर चलते रहना है। जो नदी बराबर बहती रहती है, वह अवश्य ही एक न एक दिन समुद्र से जा मिलती है। इसी प्रकार यदि तुम भी सच्ची लगन अर्थात् भक्ति से विवेक पूर्वक दृढ़ निश्चय से सतत लगे रहोगे तो एक न एक दिन अपने ध्येय को अवश्य ही प्राप्त कर लोगे। इसमें कोई संदेह नहीं है। हां, शर्त केवल इतनी ही है कि तुम सच्चे दिल से लगे रहो और आगे ही आगे बढ़ते रहो, जब तक कि अपने ध्येय को न प्राप्त कर लो।

अरे प्यारो ! सच जानो। इस दुनिया की तड़क-भड़क के प्रलोभनों का आकर्षण झूठा है। राम तुमको बार बार बतलाता है कि यह सब केवल धोखा है। कब तक इस देहाभिमान में फंस कर इस में क़ैद रहोगे ? दुनिया को सत्य मानकर उसमें व्यवहार करते हो ? यह तो नर्क की आग है, इसमें जानबूझकर क्यों कूदते हो ?

इसमें सुलग सुलग कर झुलस जाओगे, इसमें तुम्हारा कल्याण नहीं है। राम का कहना मानो। अज्ञानता के दलदल में फंसकर गल जाओगे। अपना यह लोक और परलोक दोनों ही खराब कर लोगे। अरे प्यारो! संसारी वस्तुओं का सहारा पकड़ना तो हवा पकड़ना जैसा है। सहारा ऐसे का पकड़ो, जो सदा सदा तुम्हारा साथ दे सके। अनित्य अथवा नाशवान वस्तु का सहारा क्या पकड़ना? इसमें तो धोखा ही धोखा है। फिर पीछे पछताना पड़े तो उससे कोई लाभ नहीं।

एक नवविवाहित युवती से उसकी ननदें उसके पति की बुराई कर रहीं थीं। उस नई दुल्हन ने उनसे कहा कि तुम लोग तो केवल चार दिन के लिए यहां आई हो और फिर अपने अपने घर चली जाओगी, किन्तु मुझको तो अपने पति के साथ यहां सारा जीवन बिताना है। तुमसे बुराइयों को सुनकर मैं अपने पति से बिगाड़ करके अपना जीवन दुःखमय नहीं बना सकती।

अरे प्यारो! इस नई दुल्हन की सी बुद्धि तो तुममें होनी ही चाहिये। तुमको तो अपना सारा जीवन उस शाश्वत सत्य परमात्मा के साथ ही बिताना है, जो नित्य है। इस अनित्य और परिवर्तनशील वर्तमान के लिए तुम अपनी नित्य आत्मा से अपना सम्बन्ध क्यों तोड़ते हो? वह परमात्मा तुम्हारे समीप से भी समीप है। उसी सत्य स्वरूप परम आत्मा को अपना पिता बनाओ उसी को अपनी माता समझो। उसीको अपनी पत्नी समझो या पति समझो। वह ही तुम्हारा असली मित्र है। घर बार, धन, सम्पत्ति और अपना सब कुछ उसी को समझो। वह तो तुम्हारे शरीर मन और बुद्धि के भी कण कण में समाया हुआ है। उस विश्वव्यापी सत्ता

से भला तुम अलग कैसे रह सकते हो ? उसी सत्य स्वरूप परमात्मा के नाते ही तुम अपने समस्त संसारी सम्बन्धों को अपना समझो। यदि तुम्हारा पिता इस सत्य को अपनाने में तुम्हारा बाधक होता है, तो उसे तुम ऐसे ही छोड़ दो, जैसे कि प्रहलाद ने अपने पिता को छोड़ दिया था। यदि तुम्हारी माता इस सत्य मार्ग में बाधक होती है, तो तुम उसे छोड़ दो, जैसे कि भरत ने अपनी माताको छोड़ दिया था। यदि तुम्हारा भाई बाधक होता है, तो विभीषण की तरह तुम भी अपने भाई को छोड़ सकते हो। यदि तुम्हारी पत्नी बाधक बनती है तो उसको भी छोड़ दो जैसे भर्तरी हरि ने किया था। यदि तुम्हारा पति सत्य मार्ग में साथ नहीं देता, तो तुम भी उसका साथ छोड़ दो जैसे मीरा बाई ने किया था। यदि तुम्हारा गुरु तुमको असत्य पर चलाना चाहता है, तो उसको भी छोड़ दो। किन्तु चाहे जो भी हो जाय, सत्यको कदापि मत छोड़ो। याद रहे कि यह सत्य स्वरूप परमात्मा ही तुम्हारा सब कुछ है। उसी परम सत्य को पकड़े रहो। उसी के प्रति अपना जीवन समर्पित कर दो। इस संसार के महा सागर से केवल सत्य नारायण ही तुम्हारी डगमगाती नैया को पार लगाएँगे। यह सत्य ही शाश्वत है। यह ही तुम्हारा पक्का साथी और सच्चा हितैषी है। यह सत्य तो एक ही है, किन्तु लोग उसे भिन्न भिन्न नामों से पुकारते है। कोई राम, कोई रहीम, कोई कृष्ण कोई करीम कहता है। कोई अल्लाह, खुदा या गाड कहता है। वेदान्त में उसे आत्मा या ब्रह्म कहते हैं। है वह एक ही। इसके सिवा कुछ है ही नहीं। उपनिषद की यह महान शिक्षा याद रहे कि सब कुछ ही ब्रह्म है, जो नित्य, अविनाशी अखंड और अनन्त है।

धन्य हैं वे लोग जो पूर्णरूप से यह तथ्य समझकर इस सत्य को आत्मसात कर लेते हैं। यह सब जो अलग-अलग सा प्रतीत होता है, वह केवल भ्रम मात्र है। जैसे स्वप्न में मनुष्य नाना रूप धारण करके अपने स्वप्न के संसार में पहाड़, नदी, समुद्र, वन एवं वस्ती सब कुछ स्वयं ही रच लेता है, वैसे ही जागृत अवस्था में भी ह जो सब कुछ है, वह वह नहीं है जो दिखलायी देता है। यह सब ब्रह्म ही ब्रह्म है। वेदान्त की भाषा में इस भ्रम को माया कहते हैं।

वास्तव में यह केवल एक ब्रह्म की ही सत्ता है जो विश्व भर में फैली हुई है। इस लिये प्रतीत होने वाले विश्व के कारणों में वह ब्रह्म ही आदि कारण है। ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं। इसी विचार को अपने कारण शरीर में दृढ़ करो। इस सत्य की व्यावहारिक अनुभूति ही वास्तविक ज्ञान है। सच्चे ज्ञानी इसी सत्य की अनुभूति में सतत तल्लीन रहते हैं। वह चाहे जो भी करें, चाहे जो खाएं-पियें, सोयें या जागें, वह अपने आपको उस एक विश्वव्यापी ब्रह्म की सत्ता से एक रहने की सतत अनुभूति रखते हैं। इस "सोहम अस्मि" का विचार उनके व्वयहार में अखण्ड रूप से बना रहता है। यही परमानन्द की अवस्था है और इसीमें परम शान्ति है। "यह सब एक ही एक है" और "इस प्रकार, जो इस तथाकथित "सब" के साथ अपनी एकता अनुभव कर लेता है, वही सबके साथ अपना जैसा निस्वार्थ प्रेम भी कर सकता है। उसके लिए कोई ग़ैर नहीं रह जाता, बल्कि यह सारा विश्व उसके लिए "अपना आप" हो जाता है। उसके प्रेम की परिधि अर्थात् उसके अपने आप का क्षेत्र बढ़ते बढ़ते असीम हो जाता है। वह अपना द्वैत भाव मिटाकर जीवन मुक्त हो जाता है। यही सत्यनारायण की यथार्थ पूजा है और यही शाश्वत सत्य है, जो तुम स्वयं ही हो।

ॐ ! ॐ ! ! ॐ ! ! !

जलवये-कुहसार

अर्थात

पर्वतीय छटा

(राग भैरों–ताल धुमार)

ऐ दिल ईंजा कूए-जानाँ अस्त अज़ जां दम मज़न ।
अज़ दिलो-जानो-जहाँ दर पेशे-जानाँ दम मज़न ।।१।।
जाँ नदारद क़ीमते-बिसियार अज़ जाँ वा मगो ।
गर चे जाँ दर बाख़्ती दर राहे-जानाँ दम मज़न ।।२।।
गर तुरा दरदे-स्त अज़ वै हेच अज़ दरमाँ मगो ।
दरदे-ओरा बिह ज़ दर माँदाँ ज़ दिरमाँ दम मज़न ।।३।।
चूं यक़ीं आमद रिहा कुन क़िस्सए-शक्को-ओ-गुमाँ ।
चूं अयाँ बिनमूद रुख़ दीगर ज़ बुरहाँ दम मज़न ।।४।।
इल्मे-बेदीना गुज़ारो-जह्ल रा हिकमत मख़्वाँ ।
अज़ ख़्यालातो-फ़सूनो-अहले-यूनाँ दम मज़न ।।५।।
बा लबे-मैगूं-व-रुए-ख़ूबो-ज़ुल्फ़े-दिलकशश ।
अज़ शराबो-शाहिदो-शमओ-शबिस्तां दम मज़न ।।६।।
कुफ़रो-ईमाँ रा ब पेशे-ज़ुल्फ़ो-रूयश कुन रिहा ।
पेशे-ज़ुल्फ़ो-रूए-ओ अज़ कुफ़रो ईमाँ दम मज़न ।।७।।
चूंकि बाओ-बरनयारी बूदन अज़ वसलश मगो ।
चूंकि ब-ओ-हम नमी बाशी ज़ि हिजराँ दम मज़न ।।८।।
मिहरे-ताबाँ-चूंकि हस्त अज़ अक्से-रूयश ताबिशे ।

मग़रबो दर पेशे-ओ अज़ मिहरे ताबाँ दम मज़न ।।९।।

अर्थ :—ऐ दिल। यहाँ प्यारे की गली है। यहाँ अपनी जान का दम भी मत मार (अर्थात् जान का घमंड मत कर या जान की परवाह मत कर), और अपने प्यारे के आगे जान और जहान और दिल का दम मत मार (अर्थात प्यारे के समक्ष इस प्राण इत्यादि का घमण्ड मत कर अथवा अपने प्यारे के सामने इनको प्रिय मत समझ)।

(२) जान (अपने प्यारे की अपेक्षा) अधिक मूल्य नहीं रखती है, इसलिए इस जान का शोक मत कर। यदि तू अपने प्यारे के रास्ते में जान पर खेलता है, तो चुप रह (तू इस काम पर भी शेख़ी मत कर)।

(३) यदि तुझको (अपने प्यारे की प्रीति में) कुछ कष्ट है, तो उसकी चिकित्सा के विषय में कुछ चर्चा न कर। उस के कष्ट को अर्थात् उसकी प्रीति में जो कष्ट हो उसको भी चिकित्सा से उत्तम समझ और चिकित्सा के विषय में चर्चा न कर (अर्थात चुप रह)।

(४) जब तुझको विश्वास हो गया तो संशय-संदेह की कहानी को छोड़ दे, जब उस (प्यारे) ने अपना मुखड़ा दिखा दिया, तो फिर हीला और हुज्जत न कर।

(५) जिनका कोई धर्म ही नहीं है, ऐसे लोगों का ख़याल छोड़ और मूर्खता को तत्वज्ञान मत कह ; एवं यूनान वालों के विचारों और उनके आख्यानों का दम मत मार।

(६) मदिरा-जैसे ओष्ठ, सुंदर मुखड़ा, मन हरण ज़ुल्फ़, मदिरा और प्रियतम और शमा और शयनागार के विषय में भी चर्चा न कर।

(७) कुफ़्र और ईमान को उसके मुखड़े और ज़ुल्फ़ के आगे छोड़ दे और उस प्यारे के ज़ुल्फ और मुखड़े के सामने कुफ़्र और ईमान की चर्चा न कर।

(८) क्योंकि तू उस (प्यारे) से आगे नहीं बढ़ सकेगा, इसलिए तू उसके मिलाप (दर्शन) की चर्चा मत कर, और इस हेतु कि तू उस (प्यारे) के बिना भी नहीं रह सकेगा, इसलिए वियोग की भी चर्चा न कर।

(९) क्योंकि प्रकाशमान सूर्य उस (प्यारे) के मुखड़े की ज्योति की एक चमक है, इसलिए, ऐ मग़रबी, उसके सामने प्रकाश-मान सूर्य की भी चर्चा न कर।।९।।

राग भैरवी-ताल-झग।

मयार ऐ बख़्त ! बहरे-ग़रक़े मा दर शोर दरिया रा।
परे- माही मगरदां बादबाने किश्तिए मा रा।।१।।
लिबासे-मा सुबक सारां तअल्लुक़ बर नमी ताबद।
बुवद हमचूं हुबाब अज़ बख़िया ख़ाली पैरहन मारा।।२।।
दमे-जाँबख़्शे-तो तारंगे-हैरत रेख़्त दर आलम।
ज़े मिहर आईना दर पेशे-नफ़स दीदम मसीहा रा।।३।।
अगर लब अज सुखन गोई फ़रो बंदेम जा दारद।
कि न बुवद अज़ नज़ाकत ताबे-बस्तन मानिए मा रा।।४।।
शवद अज़ शोलए-आवाज़े क़ुलक़ुल बज़्मे मै रोशन।
सरत गंरदम मकुन ख़ामोश साक़ी। शमए मीना रा।।५।।
ग़नी सागर व कफ़ जमशेद पेशे-मैफ़रोश आमद।
कि शायद दर बहाए बादागीरद मुल्के दुनिया रा।।६।।

अर्थ :–(१) ऐ नसीब ! हमारे डुबोने के लिए दरिया को तूफ़ान में मत ला (ऐ बख्त ! हमको डुबोने के लिए सांसारिक इच्छाओं की नदी में तूफ़ान मत बरपा कर), और ऐ मछली के पर ! हमारी नौका के बादबान को मत फेर।

(२) हम हल्के (सांसारिक संबंधो से मुक्त) लोगों का चोला संबंध की ताब नहीं ला सकता है (अर्थात् संबंधो की ओर चलायमान नहीं हो सकता है) और हमारा कुरता बुलबुले की तरह बख़िया से ख़ाली (संबंधहीन) है।

(३) जब से तेरे प्राणदाता दम ने संसार में आश्चर्य का रंग बिखेरा है (अर्थात आश्चर्यवत् किया है) उस समय से मैंने मसीहा को तेरे प्रेम के कारण (आईना दर पेशे नफ़स) विस्मय-पूर्ण देखा है (अर्थात् ऐ सच्चे माशूक़ ! तेरे प्राण का दान करने वाले दम (आश्वासन) ने प्रेम के रोगियों को स्वास्थ्य-दान किया है। इसलिए तेरे प्रेम के शरण अब मसीह (जिस में चमत्कार था कि वह मुर्दे को जिंदा कर देता था) विस्मित हो रहा है, क्योंकि अब उसका चमत्कार व्यर्थ हो गया।

(४) यदि तू कहे तो हम बात करने से ओष्ठ बंद कर रक्खें (चुप रहें), पर क्या यह उचित है ? क्योंकि तेरी सुकोमलता के कारण हमको अर्थ (रहस्य) छिपाने की शक्ति नहीं (अर्थात् स्वभावतः हमारे मुंह से तेरी प्रशंसा अवश्य ही निकलेगी और तेरा रहस्य प्रकट किए बिना हम न रहेंगे)।

(५) क्योंकि मदिरा पान की महफ़िल, मदिरा की सुराही (पात्र विशेष) के शब्द की अग्नि से प्रकाशित हो जाती है इसलिए

ऐ साक़ी (मद्य पिलाने वाले) ! मैं तुझ पर न्यौछावर होता हूँ, कि तू मदिरा के शीशे की ज्योति को मत बुझा (अर्थात् ऐ पूर्ण गुरु ! भगवत प्रेम की मदिरा का दौर (प्रेमलहर) जारी रहे, भगवान के लिए इसे पल भर के लिये भी बंद न कर।

(६) ऐ ग़नी ! जमशेद अपने प्याले (संसार दर्शक प्याले) को हथेली पर रक्खे हुए मदिरा-विक्रेता के पास आया कि कदाचित मदिरा के बदले वह सुरा व्यवसायी 'दुनिया के मुल्क' को ले ले, अर्थात् भगवत्प्रेम की मदिरा इतनी मूल्यवान है कि जमशेद उसके लेने में 'दुनिया के मुल्क' को या अपने उस प्याले को जिसमें कि सारे संसार का दृश्य दिखाई देता था, अकातर-मन से देता है।

गंगा। क्या वह तेरी ही छाती है जिसके दूध से ब्रह्म-विद्या का पोषण होता है ?

ऐ हिमालय ! क्या तेरी ही गोद है जिसमें ब्रह्म-विद्या (गिरिजा) खेला करती है ?

क्या तुम्हें भी वह दिन स्मरण है जब पहले पहल "राम" 'पांडुवर्ण-शीतल श्वास-अश्रुपूर्ण लोचन' के साथ तुम्हारी शरण में आया था ? अकेले इन पत्थरों पर पड़े-पड़े रातें कटती थीं। आसुओं से यह शिला तर-ब-तर होती थी, हिचकियों का तार बंधता था। हाय ! वह परम आनन्द कहाँ है 'जिसकी मस्ती में न कोई कल है न आज (अर्थात् जिसकी मस्ती में आज व कल की सुध नहीं रहती) ?

हाय ! वह आनन्द सागर कब मिलेगा जो सांसारिक भोगों को तृण और कूड़ा-कर्कट की तरह बहा ले जाता है ! ज्ञान का

प्रचंड मार्तंड कब मध्याकाश पर आयेगा ! शारीरिक प्रयोजन (स्वार्थ) और इन्द्रियों के विषय, धुंध और अंधकार के समान कब साफ़ उड़ जायेंगे ! गंगा का जल (अर्थात् कहीं पर भी, या कभी भी) गरम नहीं होता । हे भगवन ! वह समय कब आएगा कि ब्रह्म-ज्ञान के उन्माद (नशा) की बदौलत राम के दिल पर स्वप्न में भी स्नेह और विराग (Favours & Frowns) अधिकार पाने के अयोग्य हो जायेंगे ! पाप और शोक (Sin & Sorrow) भूत-काल की तरह कब गए बीते होंगे । तुरिया अवस्था क्य ग्रंथों में ही लिखी जाने को है, अन्यथा वह तुरिया कहाँ है ? नंगे सिर, नंगे पैर, नग्न शरीर, उपनिषदें हाथ में लिए दीवानावार (पागल सा) "राम" पहाड़ी जंगलों में फिर रहा है–

ख़ूने-जिगर शराब तरश्शोह है चश्मे-तर ।
साग़र मेरा गिरौ नहीं अबरे-बहार का ।।

अर्थ :– मेरे जिगर का ख़ून तो मेरी शराब है और छलकता हुआ जल (वर्षा) मेरे अश्रुपूर्ण लोचन हैं ।

नाला हाए कुल्बा-ए-अहज़ां तसल्ली बख़्श नेस्त ।
दर बियाबाँ मीतवाँ फ़रयाद ख़ातिर ख़्वाह कर्द ।।

अर्थ :– शोकघर में रुदन संतोषजनक नहीं है, जंगल में जाकर मन मानी पुकार कर सकते हैं (अर्थात् वन में खुले दिल से अपने प्यारे की याद में रुदन हो सकता है) ।

बर्गे-हिना पे जा के लिखूं दर्दे दिल की बात ।
शायद कि रफ़्ता-रफ़्ता लगे दिलरुबा के हाथ ।।

पहाड़ की खोह का, पर्वत की कंदरा का पीड़ापूर्ण आर्त्त-नाद को सहानुभूति-पूर्ण उत्तर देना कभी नहीं भूलेगा।

इश्क़ का मनसब लिखा जिस दिन मेरी तक़दीर में।
आह की नक़दी मिली सहरा मिला जागीर में।।

"बस तख्त या तखता (अर्थात् राजसिंहासन या चिता) माता-पिता! तुम्हारा लड़का अब लौटकर नहीं जायेगा। विद्यार्थी लोगों! तुम्हारा विद्या-गुरु अब लौटकर नहीं जायेगा। गृहस्थो! तुम्हारा नाता कब तक निभेगा। 'बकरे की मा कब तक खैर मनायेगी'? या तो सब संबंधों से रहित होगा या तुम्हारी आशाओं के शिर पर एक साथ पानी फिर जायेगा। या तो राम की आनन्दमय तरंगों में घर-बार (क्यों-कब) निमग्न होगा (तुरिया अतीत), या राम का शरीर गंगा की लहरों के समर्पण होगा, मरकर तो हर एक की हड्डियाँ गंगा में पड़ती हैं। यदि अपरोक्ष न हुआ और यदि शरीर-भाव की गंध बनी रह गई तो रामकी हड्डियाँ और माँस जीते जी मछलियों की भेंट होंगे"।

बन के परवाना तेरा आया हूँ मैं ऐ शम्मए तूर।
बात वह फिर छिड़ न जाए यह तक़ाज़ा और है।।

राग आसावरी ताल यक्का

नैन मेरे सुख क्यों नहीं सौदे।
कढ़ पाँधा पत्री देख दिन मेरे।।
काग मेरे घर नित उठ लौंदे।
नैन मेरे सुख क्यों नहीं सौदे।।

अगर राम के चरणों में गंगा न वही तो राम का शरीर गंगा पर अवश्य वहेगा ।

करे रथांगश्यने भुजंग-याने विहंगं चरणेम्बुगांगम् ॥

आंख जल बरसा रही है । ठंडी और लम्बी सांस मानो तीक्ष्ण वायु के समान मेघ का साथ दे रही है, बाहर बरसात ज़ोर पर है । कातरता और क्रंदन (अधीरता व रुदन) के साथ राम के अन्तः हृदय से यह ध्वनि निकल रही है—

राग जंगला-ताल तीन

गंगा तेथों सद बलहारे जाऊं । (टेक)

हाड़-चाम सब वार के फेकूं, यही फूल बताशे लाऊं । गंगा०
मन तेरे बन्दरन को दे दूं, बुद्धि धारा में बहाऊं । गंगा०
चित्त तेरी मछली चब जावें, अहं गिरि-गुहा में दबाऊं । गंगा०
पाप-पुण्य सभी सुलगाकर, यह तेरी ज्योति जगाऊं । गंगा०
तुझ में पड़ूं तो तू बन जाऊं, ऐसी डुबकी लगाऊं । गंगा०
पंडे जल थल पवन दशो दिक्, अपने रूप बनाऊं । गंगा०
रमण करूं सत धारा माँहीं, नहीं तो नाम न **राम** धराऊँ । गंगा०

गंगा किनारे के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष खड़े हुए मानो संध्या कर रहे हैं और मनोहर लता-पता में रंग-रंग के फूल खिले हुए नन्हें बच्चों की भाँति मुसकरा रहें हैं । हवा आन कर उन्हें झूले झुला रही है । ठंडी-ठंडी पवन नन्द स्पंद से दिल लुभा रही है ।

वादे-सबा के झोंको से, शाखों का झूमना ।
और झूम-झूम कर वह रुखे-गल को चूमना ॥

चारों ओर यह दशा है कि राम चिंतित है कि "पीठ किस ओर करके बैठूं"। एक से एक बढ़कर सुहाना है। पर्वतों के ढलवान पर हरे-हरे बासमती के खेत लहलहा रहे हैं। इन खेतों में पहाड़ों से उतरता हुआ निर्मल जल बह रहा है। यह जल मुक्त पुरुषों की भाँति ब्रह्मस्वरूप श्रीभागीरथी में मिलकर उससे अभेद हो रहा है। श्री भागीरथी की शोभा कौन वर्णन करे। क्या विराट भगवान् का हृदय-स्थान यही है? उसका गंभीर और शीतल स्वभाव और उसकी ओंकार, अनहद रूपी ध्वनि चित्त की चुलबुलाहट और मलिनता को स्वच्छ कर रहे हैं। किन्हीं-किन्हीं स्थानों पर गंगा-जल के विचित्र शांति भरे कुंड बन रहे हैं। उजियाली में तो चमकती दमकती गंगा है कि कोटानुकोट हीरे मोती कूट-कूट कर भरे हैं। मेरी जान! यह मिर्जानि वाला सुरमा आँखों में क्या ठंडक देता है, हृदय की आँखों को भी प्रकाशित करता है। गंगा अपनी महाशीतलता और निर्मलता से विष्णुपन दिखाती और महाशक्ति ज़ोर शोर से सिंह की भांति गरजने और अस्थियों को चबाने (बहा ले जाने) से शाक्तपन प्रकट करती है, विष्णु और शिव दोनों की झलक मारती हुई बाबापुरी (जगत) को कृतार्थ करने जा रही है। गंगा के तरंग इस स्थान पर निहंग के समान रव करते और वेग से छलाँग भरते चले जा रहे हैं। यहां तह पर बहुत बड़े-बड़े पत्थर होंगे। लहरें झाग-झाग हुए जाती हैं। मौजें किस बला के पेंच खाती हैं। वह देखो, गंगा की धारा भयानक झरना बन रही है, पानी सबका सब एकदम गिरा, फिर उछला। गंगा के आवेश-उन्मत्तता को जतलाने वाली फेन नाच रही है कि

गर्जन कर रहे सिंह के बाल (Mane) लहरा रहे हैं। इस

आवेश के साथ मानो गंगा यह कह रही है कि ऐ अहंकार (मृग) आ, मैं तेरा शिकार करूं। ऐ अज्ञान (गीदड़)! तेरे देहाध्यास और अहंता की हड्डियाँ चबा जाऊंगी, पसलियाँ अलग-अलग कर दूंगी। ऐ मोह रूपी पत्थर! आ, मैं तुझे चीर डालूं, पहाड़ों को काटकर आई हूं, अब तेरी बारी है।

पर इस समय कुल अज्ञान की सेना न मालूम कहाँ अन्तर्ध्यान हो गई है, न अंधेरे का कहीं पता लगता है, न अविद्या-तिमिर का। इन हरे-भरे पहाड़ों का प्रकाश और आनन्द से यूं भरपूर होना किस का संकेत करता है, यह ठंडक और आनन्द क्या शुभ-संवाद सुना रहे हैं? 'राम' की मनोकामना यहाँ पूर्ण हो जायेगी, सब कामनाएं तिरोहित हो जायेंगी।

मुज़्दा ऐ दिल की मसीहा नफ़से-मी आयद।
कि ज़े इनफ़ासे-खुशश बूए-कसे मी आयद॥

अर्थ: ऐ दिल! खुश हो कि कोई मसीहा-नफ़्स (परम ज्ञानी) आ रहा है कि उसके खुश श्वासों से किसी ब्रह्मवित की गंध आ रही है।

किस आनन्द के साथ 'राम' स्नान करता है, जल उछालता है और आनन्द-ध्वनि करता है।

(राग-सिंधुरा-ताल तीन)

नदियाँ दी सरदार, गंगारानी। छींटे जल दे देंन बहार, गंगारानी।

सानूं रख जिंदड़ी दे नाल, गंगारानी। कदे वार कदे पार, गंगा रानी० सौ-सौ ग़ोते गिन-गिन मार, गंगारानी। तेरियाँ लहराँ राम असवार,

गंगारानी०

Mother of mighty rivers,
Adored by saint and Sage !
The much beloved peerless Ganga,
Famous from age to age.

अर्थ :—शक्तिशाली नदियों की जन्मदात्री !
ऋषि मुनियों ने तेरी आराधना की है।
अत्यन्त प्रिय तथा अनुपम गंगे !
कीर्ति तेरी चिरकाल से व्यापक है।

Unconscious roll the surges down,
But not unconscious thou.
Dread Spirit of the roaring flood,
For ages worshipp'd as a God.
And worshipp'd even now,
Worshipp'd, and not by serf or clowa,
For sages of the mightiest fame;
Have Paid their homage to thy name;

अर्थ :—तेरी हिलोरें अचेतन रूप से लुढ़कती फिरती हैं।
परन्तु उनके समान तू भी अचेतन नहीं है ।।
(क्योंकि) तेरे गरजते हुए प्रवाह का यह भयानक रूप।
चिरकाल से ईश्वर तुल्य पूजा गया है ।।
और अब भी पूजा जाता है।
उसकी पूजा मूढ़ और दासों ने नहीं।

वरन् सर्वोच्च प्रतिष्ठा वाले ऋषि मुनियों ने भी की है।
कि जो तेरे नाम के प्रेमी या भक्त हैं ।।

(रमेश चन्द्र दत्त)

Sacred Ganga ample bosowed,
Sweeps along in regal pride.
Rolling down her limpid waters.
Through high banks on either side.

विशाल वक्ष:स्थल (भारी पेटे) वाली पुनीत गंगा अपने निर्मल जल को दोनों ओर के ऊंचे तटों से उछालती हुई महानता के गौरव में बह रही है।

संध्या होने को है। एक छोटी सी पहाड़ी पर राम बैठा है। विचित्र दशा है। न तो उसे उदासी नाम दे सकते हैं, न शोक और दु:ख ही है। सांसारिक लोगों वाला हर्ष भी यह नहीं है। उसे जागता नहीं कह सकते, सोया भी नहीं ; क्या मालूम उन्मत्त (मख़मूर) हो। पर यह तो कोई सांसारिक उन्माद नहीं है। क्या रसभीनी अवस्था है। दूर पेड़ों (पादपों) में से घड़ियाल और शंख की ध्वनि आने लगी। कदाचित् कोई मंदिर है। आरती हो रही है। ऐ-लो। सामने ऊंची पहाड़ी चोटी से दो तीन फ़ीट की ऊंचाई पर त्रयोदशी का चन्द्रमा भी अपना चाँद सा मुखड़ा लिए आ रहा है। क्या यह आरती में सम्मिलित होने आया है ? सम्मिलित क्यों, यह तो अपने दमकते हुए प्रकाशमान शरीर की ज्योति बना कर अपने आप को सदा शिव पर वार रहा है। आरती-रूप बन रहा है। आहा ! सारी प्रकृति आरती में सम्मिलित हो गई। चारों ओर से कैसी आवाज़ (ध्वनि) आने लगी। ऐ चाँद !

तू आगे बढ़ जाने वाला कौन है ? प्यारे ! अकेला मत रह। अपनी हड्डियों को और तन बदन को आग की तरह सुलगाकर तेरी तरह "राम" अपने आपको इस आरती में क्यों न वार डालेगा ?

उन दिनों 'राम' की खोज करता-करता एक पत्र पहाड़ों में आ मिला, उसका उत्तर--

सर्रे-बेसर नामा रा पैदा कुनम ।
आशिक़ां रा दर जहाँ शैदा कुनम ।।

अर्थ : (यदि) मैं भेद उसी पत्र का जिस पर पता नहीं लिखा, बताऊं (तो) संसार में लोगों को आशिक़ बनाऊं ।

एक पत्र मिला जिसमें (१) घर आने के विषय में प्रेरणा थी। यह पत्र तत्काल परमधाम को रवाना कर दिया गया, अर्थात् श्री गंगा जी में प्रवाह दिया गया।

(राग आसावरी)

रे रंग नहीं मेरा कतने दा।
जोरी बन्ह के मोरे न घत माए ।।
पीड़ा पीड़ के जान न पीड़ लीती ।
मासा मास नाही रत्ती रत्त माए ।।
चरखा देख के रंग कुरंग होया ।
सइयाँ बिच बांहा केढ़ी वत माए ।।
मत्ती इश्क हुसैन न मत सुझे ।
मत्ती ददियाँ दी मारी मत माए ।।

भावार्थ : हे माता। गृहस्थ रूपी चरखा कातने की मेरी दशा नहीं, मुझे ज़बरदस्ती से इस बंधन में मत डाल। गृहस्थ के दुःख दे दे कर मेरे प्राण निचोड़ लिए हैं, अब तो शरीर में माशा भर मांस नहीं है और रत्ती भर खून नहीं है। गृहस्थ रूपी चरखे को देखकर तो मेरा रंग कुरंग (पीला) हो जाता है, अब तू ही बतला कि मैं इन गृहस्थी मित्रों में कैसे बैठूं। प्रेम में, ऐ हुसैन ! कोई मति नहीं सूझती, बल्कि मति देने वालों की अपनी मति मारी जाती है।

(२) लोगों के गिल्ले-उलाहनों का डर दिखाया था। सो भगवन् ! अब तो हम हैं और गंगा--

कफ़न बांधे हुए सर पर किनारे तेरे आ बैठे।
हज़ारों ताने अब हम पर लगा ले जिसका जी चाहे॥
तीरों-ऐसे लांछन यहाँ कुछ नहीं असर कर सकते।
गर न मानद दर दिलम पैकाँ गुनाहे तीरे नेस्त।
आतिशे-सोज़ाने-मन आहन गुदाज़ उफ़्तादा अस्त॥

अर्थ : यदि मेरे दिल में तीर का पैकां (फल्टा) नहीं चुभता तो तीर का दोष नहीं, क्योंकि मेरे हृदय में जो इश्क़ (प्रेम) की आग भड़क रही है, वह लोहे को गला देती है, उसने फल्टे को भी गला दिया।

ता न ख्वाहद सोख्त अज़ मा बर न ख्वाहद दाश्त दस्त।
इश्क़ बस मारा चो आतिश दर कफ़ा उफ़्तादा अस्त॥

अर्थ : प्रेमाग्नि जब तक जला न लेगी, मुझको न छोड़ेगी, क्योंकि इश्क़ की आग मेरे पीछे लगी है।

तुम्हारा (राम) तो अब हो गया पूरा। न घर का न घाट का (यद्यपि मालिक मलिका लाट का)

(३) किसी घर के मामले के शोक के विषय में पूछो तो महा आश्चर्य है कि तुम्हें वास्तविक घर से ग़ाफ़िल रहने का शोक नहीं।

(४) आपने सब लोगों के सांसारिक काम-काज में तन-मन से लगने का संकेत करके बुलाना चाहा है। अच्छा, यदि लोगों की बहुमति पर ही सच्चाई का निर्णय करना स्वीकार हो, तो बताइये आदम से लेकर ईदम (अब) तक बहुमति (Mojority) उन लोगों की है जो वर्तमान जीवन के काम-धंधे को अपने व्यवहार से सच कहने वाले हैं या उनकी जो पृथ्वी-तल की धूलि के लगभग प्रत्येक परमाणु में अपनी जिह्वा से बोल रहे हैं कि संसार झूठा है।

> अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्त मध्यानि भारत।
> अव्यक्त निधनान्येव तत्र का परिवेदना॥

अर्थ : जिसका आदि और अंत अव्यक्त है, केवल मध्य ही व्यक्त है ऐसे के लिए रोना धोना किस काम का?

(५) भगवन! आप ही की आज्ञा पालन हो रही है। अर्थात् आपसे तुरन्त (बहुत शीघ्र) मिलने का प्रयत्न हो रहा है। शरीर की दृष्टि से तो वियोग कदापि दूर नहीं हो सकता, चाहे कितने ही निकट हो जायें, फिर भी जहाँ एक शरीर है वहाँ दूसरा शरीर नहीं आ सकता, अतः शरीर की पृथकता अनिवार्य है।

वस्तुत: वियोग के दूर करने के लिए "राम" अहर्निश यत्नवान है, द्वैत का नाम और चिन्ह नहीं रहने देगा, आप का अंतरात्मा, आप के हृदय में आप की आंखों में, वरन् सबके हृदय में सबके जिगर (यकृत) में राम अपना घर देखे बिना चैन नहीं लेगा। आओ, आप भी पाँच नदियों (रक्त, मूत्र, स्वेद, वीर्य और राल) के कीचड़ अर्थात् शरीर से अपने निज धाम (वास्तविक स्वरूप) की ओर प्रस्थान करो। इस पंचनद से उठकर सच्चे धाम (असली स्वरूप) की पहाड़ियों पर खिच-खिच कर पधारिएगा। मिलना अब केन्द्र ही पर उचित है, जहाँ पर मिले फिर जुदाई नहीं हो सकती। वृत्त पर (hide and seek) छुपन लुकन खेलते-खेलते कहाँ तक निभेगी। "राम" ने तो यदि स्वयं गंगा को अपने चरणों से निकलती हुई न देखा तो लोग उसका शरीर गंगा के ऊपर बहता हुआ अवश्य देखेगें।

मैं कुश्तगाने-इश्क़ में सरदार ही रहा।
सर भी जुदा किया तो सरे-दार ही रहा॥

सीप से निकला हुआ मोती फिर सीप में वापस नहीं आता।

फिर ज़ुलेख़ा न नींद भर सोई।
जब से यूसुफ़ को ख़्वाब में देखा॥

गंगा में पड़ी हुई हड्डियाँ वारिसों को वापस कैसे मिल सकती हैं? हाँ, मिलने की इच्छा रखने वाले अपनी हड्डियाँ भी गंगा के समर्पण कर दें तो कदाचित् मेल हो जाय। कुछ कठिन तो नहीं, नित्य प्राप्त की प्राप्ति है, नित्य तृप्त की तृप्ति।

इश्क़ का मनसब लिखा जिस दिन मेरी तक़दीर में ।
आह की नक़दी मिली सहरा मिला ज़ागीर में ।।
कब सुबुकदोश रहे क़ैदिए-ज़िदाने-वतन ।
बूए-गुल फाँदती है बाग़ की दीवारों को ।।
ख़ूने-आशिक़ चे कार मी आयद ।
न शवद गर हिनाए-पाए-दोस्त ।।

अर्थ : आशिक़ का ख़ून (अर्थात् प्रेमी का रुधिर) किस काम में आए यदि मित्र (प्यारे) के पैरों में मेंहदी की जगह न लगे। (अर्थात् मित्र के पैरों में लगे, इससे बढ़कर आशिक़ के ख़ून का और कोई प्रयोग नहीं) ।

शुद फ़िदाए-पाए-जानाँ जाने-मन ।
मुसहिफ़े-रूयश बुवद कुरआने-मन ।।१।
दर सरम हरदम सरे-आज़ादगीस्त ।
क़ैदे-तन बाशद कुनूं ज़िदाने-मन ।।२।।
सिजदए-मस्ताना अम बाशद नमाज़
दर्दे-दिल बा ओ बुवद ईमाने-मन ।।३।।

अर्थ : (१) मेरी जान ! प्यारे के पैरों पर फ़िदा (न्यौछावर) हो गई, इसलिए उसके चेहरे की किताब (उसके मुखमंडल का दर्शन) मेरा क़ुरान है ।

(२) मेरे मस्तिष्क में हर समय स्वतंत्रता का ख़याल है, शरीर की क़ैद (बंधन) अब मुझे जेल-घर मालूम होती है ।

(३) मेरी नमाज़ मेरा मस्ताना सिजदा है, और उसके साथ दिल का दर्द मेरा ईमान है, अर्थात् उसके प्रेम में हृदय की पीड़ा मेरा ईमान है ।

ज़िकरे-ख़ुदा व फ़िकरे-नान् मीशवद ईं नमीशवद ।
इश्क़े-सनम व बीमे-जाँ मीशवद ईं नमीशवद ।।

अर्थ : ऐ प्यारे ! मेरे से ईश्वर का भजन तो हो पर उदर भरण की चिन्ता कभी न हो। ऐसे ही मेरे से प्यारे का इश्क़ (प्रेम) तो हो, पर उसमें प्राणों का भय कभी न हो।

मी-रसी दर काबा ज़ाहिद-ज़ूद अज़ राहे-तरी ।
जुहदे-खुश्को सौमे तो बे दीदए-गिरियाँ अबस ।।

अर्थ : ऐ ज़ाहिद (तपस्वी) ! तू जल के मार्ग से काबे तक शीघ्र पहुंचेगा, रोज़ा रखना और शुष्क तपस्या से कुछ न होगा जब तक कि प्रेमाश्रुओं से तेरे नेत्र पूर्ण न हों।

दर दबिस्ताने-मुहब्बत अबजद अज़ख़ुद रफ़्तगी अस्त ।
मानिए बिसमिल्ला आँ फ़हमद कसे कू बिस्मल-अस्त ।।१।।
रह-नवर्दाने-मुहब्बत रा पयाम अज़ मा रसाँ ।
काँदरीं रह यक क़दम अज़ ख़ुद गुज़श्तन मंज़िल अस्त ।।२।।

अर्थ : (१) प्रेम की पाठशाला मे अ ब ज द (क, ख) क्या है ? आपे से बाहर अर्थात् आत्म विस्मृत हो जाना। बिस्मिल्ला के अर्थ वह जानता है जो पहले स्वयं बिस्मिल (घायल) हो चुका हो।

(२) प्रेम मार्ग पर चलने वालों (प्रेमियों) को हमारी ओर से संदेशा पहुँचा दो कि इस मार्ग में अपने से एक क़दम गुज़रना ही मंज़िल है।

नहीं कुछ ग़र्ज़ दुनियाँ की न मतलब लाज से मेरा ।
जो चाहो सो कहो कोई बसा अब तो वही मन मं ।।

एक काले साप का पैरों तले आना, व्याल भूषण 'राम' प्यार करने को हाथ बढ़ाता है।

मेरे प्यारे का यह भी प्यारा है ।
मेरी आँखों का यह भी तारा है ।।

साँप का दौड़ जाना ।

अपरोक्ष--घना जंगल, जल का किनारा, वनोपवन खिला हुआ, एकांत, कुछ उपनिषद समाप्त ।

ऐ वाक् शक्ति ! तुझ में है बल उस आनन्द को बयान करने का, धन्य हूँ मैं। कृत कृत्य हूँ मैं !

जिस प्यारे का घूंघट में से कभी हाथ, कभी पैर, कभी आँख, कभी कान कठिनता के साथ दिखाई देता था, दिल खोलकर उस दुलारे का एकत्व लाभ हुआ । हम नंगे वह नंगा, छाती छाती पर है। ऐ हाड़-चाम के जिगर-कलेजे ! तुम बीच में से उठ जाओ । भेद-भाव ! हट। फ़ासिले ! भाग। दूरी ! दूर हो। हम यार, यार हम। यह शादी है कि शादी-मर्ग । आंसू क्यों छमाछम बरस रहे हैं ?

.......क्या यह विवाह के अवसर पर की झड़ी है कि मन के मर जाने का शोक (मातम) है ? संस्कारों का अंतिम संस्कार हो गया । इच्छाओं पर मरी पड़ी । दुःख - दरिद्र उजाला आते ही अंधेरे की तरह उड़ गये । भले-बुरे कर्मों का बेड़ा डूब गया ।

बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिल का ।
जो चीरा तो इक क़तरए-खूं न निकला ।।
शुक्र है, आई खबर यार के आ जाने की ।
अब कोई राह नहीं है मेरे तरसाने की ।।
आप ही यार हूँ मै खत-ओ-किताबत कैसी ।
मस्ती-ए मुल हूँ मैं हाजत नहीं मयख़ाने की ।।

वह तुरिया जो उनका (पक्षी) की भांति तिरोहित (अदृष्ट) थी, हम स्वयं ही निकले ; जिसको अन्य पुरुष की भाँति स्मरण करते थे, वह उत्तम पुरुष अर्थात् मैं ही निकला । अन्य पुरुष अब अर्न्तधान । ॐ हम, हम ॐ । हम न तुम दफ़तर गुम ।

ॐ ! ॐ !! ॐ!!

आसुओं की झड़ी है कि अभेदता का आनन्द दिलाने वाली बरसात ? ऐ सिर ! तेरा होना भी आज सफल है । आँखों ! तुम भी धन्य हो गईं । कानों ! तुम्हारा भी पुरुषार्थ पूरा हुआ । यह शादी (मिलाप, या अभेदता) मुबारक हो, मुबारक हो, मुबारक हो । मुबारक का शब्द भी आज कृतार्थ हुआ ।

शाद बाश ए अशअ़शे-सौदाये-मा ।
ऐ दवाए-जुम्ला इल्लतहाय मा ।।
ऐ दवाए नख़वतो नामूसे-मा ।
ऐ तो अफ़लातूनो जालीनूसे मा ।।१।।

अर्थ : (१) ऐ मेरे पगलेपन के कारण ! ऐ मेरे समस्त रोगों की औषधि ! ऐ मेरे अभिमान और मान की औषधि (दवा) । ऐ मेरे लिए जालीनूस और अफलातून ! तू आनन्दवान हो ।

(२) ऐ मेरी विक्षिप्तता (या पगलेपन) के कारण! आनन्दवान हो। तू ही तो मेरे समस्त रोगों की औषधि है।

तू ही मेरे अभिमान और मान की औषधि है; तू ही मेरे लिए अफ़लातून और जालीनूस है।

अहंकार का गुड्डा और बुद्धि की गुड़िया जल गए। अरे नेत्रो! तुम्हारा यह काला बादल बरसाना धन्य हो। यह मस्ती भरे नैनों का श्रावण धन्य (मुबारक) हो।--

यार असाडे ने अगिया सिलाया
असां खोल तनी गल ला लिया॥
असां घुट जानी गल ला लिया।
मस्त दिहाड़े सावन दे आए।
सावन यार मिलावन दे आए॥

भाग ले ओ यार! भाग। कहाँ भागेगा, आकाश पर छुपेगा? मैं वहाँ मौजूद। कैलाश पर नट जा, मैं वहाँ उपस्थित। समुद्र में जा लेट, तुझ से पहले पहुँचा हूँ। अग्नि में घुस जा, मेरा ही मुख है। समस्त शरीरों में मैं, समस्त नाम और रूपों में मैं, सारे शरीर और नाम-रूप यह स्वतः मैं। कौन बोले? कौन कहे? गूंगे का गुड़। अहा, हा, हा, हा, हा! मैं कैसा सुन्दर हूँ। मेरी सोहनी सूरत, मेरी मोहनी मूरत, मेरी झलक, मेरी डलक, मेरा सौन्दर्य, मेरा लावण्य! इसको मेरी आँख के सिवा कोई आँख देखने की ताब नहीं ला सकती।

मैं अपनी महिमा में मस्त पड़ा हूँ। पर हाय मेरे सौन्दर्य का कोई ख़रीदार नहीं, मेरे यौवन का कोई ग्राहक नहीं। इस अनमोल हीरे को कौन ख़रीदे?

मुल धत सी आन के कौन केहड़ा,
नहीं दिसदा दूसरा होर कोई ।

मैं स्वयं ही आशिक़ हूं, स्वयं ही माशूक़ । आशिक़ हूँ कि माशूक़ हूँ? मैं तो इश्क़ हूँ ।......................
बाहर जब दृष्टि जाती है, हर पत्ती और फूल 'तू ही' 'तू ही' के स्वर से स्वागत करता है। भीतर से आनन्द के बादल अपनी गरज में सब कुछ निमग्न कर रहे हैं। धीरे-धीरे अंग ढीले (गतिहीन)। देश-काल कहाँ चले गये ? फ़ासला, दूरी और भीतर-बाहर कैसे ? अब आगे वर्णन कौन करे ?
....
....

कई दिन इसी दशा में बीत गए, किन्तु रात-दिन, दिन-रात किसके ?

जित वल देखाँ तूं ही तूं। ताना पेटा रूँ।

तीसरे पहर का समय होगा। एक काठ के झूले पर ठीक बीच में राम नग्न बैठा है और मेघ के स्वरूप में मेघनाद की भाँति ऊपर से कड़क रहा है; बिजली बनकर अपने तेज की चमक से जल और पाषाण पर दमक रहा है; पानी बन कर अपनी बौछार से समस्त प्राणियों को अपने-अपने घोंसलों में घुसेड़ रहा है। आकाश, भूमि और पहाड़ कोई दृष्टिगोचर नहीं होता। जल ही जल है। मानो गंगा भी भूमि से उठकर आकाश तक जा चढ़ी है जिससे कि अपने घर, 'राम' में आराम करे ? इन सबको तो घर मिल गए, अब घर हीन राम कहां विश्राम करे ?

न निशेमने की कुनम मकां, न परे कि बर परम अज मियाँ ।

अर्थ : न घर है कि जहाँ मैं विश्राम करूँ और न पर है कि जिससे मैं अपने भीतर से बाहर आऊं।

राम, जल शयन नारायण उस जल में व्याप रहा है। बादलों पर चल रहा है, समुद्र को रम्य बना रहा है। कभी वर्षा आती है कभी धूप, किन्तु राम के यहाँ न कुछ चढ़ता है न उतरता।

जद पाया भेद कलंदर दा ।
राह खोजिया अपने अंदर दा ।।
सुखबासी हो उस मंदिर दा ।
जित्थे कदे न चढ़दी लहँदी दा ।।
मुंह आई बात न रहेंदी है ।।१।।

दुनियाँ नहीं पार्वती है, भंग बूटी हर समय घोट रही है। शिव की आंख खुली, चट प्याला हाज़िर (उपस्थित)। ज़रा होश आया, नशे में बहाया।

आ मेरे भंगड़ा! तू आ, भंग पी जा ।
आ मेरे भंगड़ा! निशंग भंग पी जा ।।१।।
भर-भर देनियाँ मैं भंग दे प्याले ।
निशंग भंग पीजा, निहंग भंग पीजा ।।२।।

भंग घोटने वाली प्रकृति नहीं, यह तो स्वयं भंग और मदिरा है। भंग और मदिरा नहीं, यह तो भंग और मदिरा का मद (नशा) और मस्ती है, यह तो स्वयं मैं हूँ

न है कुछ तमन्ना न कुछ जुस्तजू है ।
कि वहदत में साक़ी न साग़र न बू है ।।

मिलीं दिल को आँखें जभी मारफ़त की ।
जिधर देखता हूं, सनम रू बरू है ।।
गुलिस्तां में जाकर हर इक गुल को देखा ।।
तो मेरी ही रंगत व मेरी ही बू है ।।
मेरा तेरा उट्ठा, हुए एक ही हम ।
रही कुछ न हसरत न कुछ आरज़ू है ।।
भर दे नी कटोरा भंग दा ।
तेरा कहेड़ी गल्लूं जिया संग दा ।।

एक अनूठा स्वप्न : गोल चंद (जिसको सर्व साधारण कृष्ण परमात्मा कहते हैं) राम से छुप्पन-लुक्कन (Hide and seek) खेलता है। ढूढ़ते-ढूढ़ते हार कर :—

राम—"अरे कहां छुप रहा ? न बाहर है न भीतर है। अतंर्धान कहाँ हो गया ? बड़ा अंधेर है। हाय हाय।....

हां ! हां !! हां !!! अब लगा पता। किवाड़ की आड़ में घुसे खड़े थे आप। बाहर निकल गोलू ! अब जाता कहाँ है ? कान खींचकर चपत जड़ा। मुंह फेर दूंगा" !

इतने में झट आँख खुल गई। अपना कान दर्द कर रहा था, और अपने ही गाल पर (थप्पड़ मारता हुआ) हाथ था। इस स्वप्न का वर्णन जो बताए (अर्थात् इस स्वप्न का रहस्य जो बूझे) वही यूसुफ़।..

....

एक पर्चा कुछ प्रश्न उठाए हुए इस आनन्द-गंगा में स्नान करने आ गया।

सवालों के उत्तर :--

"क्या राम अकेला है ?"

(१) कोई विद्यार्थी साथ नहीं, नौकर पास नहीं। बस्ती बहुत दूर है, आदमी का नाम क़ाफूर है। तारों भरी रात आधी इधर है आधी उधर है। बिल्कुल सुनसान है, बियाबान है, सन्नाटे की अवस्था है। पर क्या हम अकेले है ? अकेली हमारी बला। अभी वर्षा बाँदी स्नान कराकर गई है, हवा लौंडी चारों ओर दौड़ रही है, सामने गंगा अपनी गंग गंग गंग की रागनी अलाप रही है, सेकड़ों सेवक चहुँ ओर की झाड़ियों में आराम कर रहे हैं। लो, यह शब्द किधर से आया ? कोई वनपशु झाड़ियों में से बोल उठा है--"उपस्थित"। हम अकेले क्यों ? पर हाँ हम अकेले ही हैं। यह सेवक वेवक और नहीं, हम ही हैं। गहन वृक्ष (तरुवर) नहीं, हम ही हैं। हवा नहीं हम हैं। गंगा कहां ? हम हैं। तारे-वारे और चाँद नहीं, हम हैं। खुदा, नहीं हम। माशूक़ और वस्ल (मिलाप) कैसा ? प्यारी और प्रणय कैसा ? हम ही हम। अरे एकांत का ख़याल भी हम से भाग गया, अकेले का शब्द भी अकेला छोड़ गया।--

तनहास्तम तनहास्तम चि बुलअजब तनहास्तम।
जुज मन न बाशद हेच शे यक़तास्तम तनहास्तम॥

अर्थ--: मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, कैसे आश्चर्य की बात है कि मैं अकेला हूं। मेरे विना कोई वस्तु नहीं है, मैं अद्वितीय हूँ, अकेला हूँ॥

ईं नारा ओ ईं नारा जनव नीज़ ईं सरा।
अशजारो-कुहिस्तानो-शबो रोज़ निगारा॥१॥

वाद अंजमो-गंगाजलो-अबरो-महे-तावां ।
माशूक़ो-ख़ुदा ख़ास विसालो दमे-हिजरां ।।
क़ागज़-क़लम चश्मतो-मजमूनों-तो ख़ुद जाँ ।
"राम" अस्त हमा, नेस्त दिगर, ओस्त, हमा आं ।।

अर्थ : यह गरज, यह गरजने वाला, और साथ इसके यह वन, वृक्ष, पर्वत, दिन-रात, पवन, तारे, गंगाजल, मेघ व प्रकाशमान् चन्द्रमा, माशूक़ (प्रिय) व स्वयं परमात्मा, मिलाप व वियोग, क़ाग़ज़, लेखनी, नेत्र, विषय और तू स्वयं यह सब 'राम' है, इतर कुछ नहीं है, वही है, सब वही है।

क्या राम बेकार है ?

(२) मन का मानसरोवर अमृत से लबालब हो रहा है। आनन्द की नदी हृदय में से बह रही है। अंतःकरण कृतकृत्य और गद्गद् है। विष्णु के भीतर सतोगुण इतना भरा कि समा न सका। उस सतोगुण के स्रोत से पैरों की राह सतोगुण की गंगा जारी हो गई। ठीक इस भाँति परम आनन्द से भरपूर राम भगवान जिस का ब्रह्मानन्द समेटे से सिमटता नहीं, पूर्ण आनन्द का स्रोत बन कर आनंद की नदी संसार को भेज रहा है। प्रफुल्लता और विश्रांति का प्रभात पवन प्रेषित कर रहा है। कौन कहता है, वह बेकार बैठा है?

(राग बरवा-ताल दादरा)

अलाया ईह-उस्साक़ी मये बाक़ी बचश अज़ मा ।
कि रोज़ अफ़जूं शवद इशक़त कुनद आसाँनत मुश्किलहा ।।१।।
व हुस्न-माज़ रोशन कि शुद तुर्फा नक़ाबे-मन ।

ज़ मौजे-ख़ूबी ए वरहम चे शोर उफ़्ताद दर दिलहा ।।२।।
शबे-महताबोवादे-ख़ुश लबे-दरिया सनम दर बर ।
चसाँ दानंद हाले-मा ग़रीक़ाने तमव्वजहा ।।३।।
मरा दर मंजिले-जानाँ हमा ऐशो हमा शादी ।
जरस बेहूदा मी नालद कुजा बंदेम महमिलहा ।।४।।
हमा कारम ज़े बे-कामी व ख़ुश कामी कशीद आख़िर ।
निहाँ चूं मानद ईं राज़े कि बूदा शमए-महफ़िल हा ।।५।।
हुज़ूरी चे हमी ख्वाही ? अज़ो ग़ायब नई ऐ जाँ ।
तुई उक़बा, तुई मौला, तुई दुनिया व माफ़ीहा ।।६।।
ब सिदक़े-दिल अनलहक़ गो, चुनीनत् राम फ़रमायद ।
कि दर यक दन ज़दन गर्दद विसालो-क़ितए-मंजिलहा ।।७।।

अर्थ : (१) सावधान ऐ सुरा पिलाने वाले ! (अमर) मदिरा हम से चख जिसमें तेरा प्रेम नित्य प्रति उन्नति करता रहे और तेरी कठिनताओं को सरल कर देवे (यहाँ ईश्वर-प्रेम में निमग्न पुरुष अपने गुरु से कहता है कि हम से प्रेम-बूंद चख जिसमें हृदय की सब ग्रंथियाँ खुल जायें और सच्चा रहस्य प्रकट हो जाय) ।

(२) मेरी लहराती हुई सुन्दरता के कारण, जो कि मेरा एक विचित्र पर्दा बन गई है, और मेरे प्रेम-सागर की सुन्दरता की लहर से दिलों में कितना शोर उपस्थित हो गया है, अर्थात् कितने दिल व्याकुल हो गये हैं।

(३) जब उजाली रात और मन भावती वायु, नदी का तट और प्यारा पहलू में हो, तो हमारी ऐसी दशा को लहरों में डूबे हुए लोग (संसार की कामनाओं और प्रलोभनों में व्यथित लोग) क्या जानें।

(४) मुझको प्यारे की मंज़िल में अत्यन्त सुख और अत्यन्त प्रसन्नता है। घंटा व्यर्थ कोलाहल करता है, हम चलने को ऊंट कहाँ बाँधें? (अर्थात् हमको तो यहाँ ही प्यारे का मिलाप हो गया, इसमें हमें अत्यन्त प्रसन्नता है, अब नाना उपदेश का कोलाहल मुफ़्त में है, हम यहाँ से नहीं टल सकते अथवा अब श्वाँस का कोलाहल व्यर्थ है, हमको जाना-आना शेष नहीं रहा)।

(५) मेरे सब काम जो अपूर्ण थे, अब पूर्ण हो गये। यह भेद क्योंकर छिपा रह सकता है, क्योंकि यह अब महफ़िलों की शमा (सभाओं का दीपक) हो गया है अर्थात् मेरी सब कामनाएं प्यारे के मिलने से पूरी हो गई हैं, यह बात छुपी नहीं रह सकती।

(६) ऐ प्यारे! तू प्रभुत्व क्या चाहता है? तू उससे दूर नहीं (क्योंकि वह हर एक के भीतर मौजूद है), तू ही आखिरत है, तू ही मौला है, तू ही दुनिया (लोक) है, तू ही माफ़ीहा (परलोक) है।

(७) राम यह आज्ञा (तुझे) देता है कि सच्चे चित्त से शिवोऽहं कहो, क्योंकि थोड़ी सी देर में शिवोऽहं का एक दम मारने से (अर्थात् एक बार शिवोऽहं कहने से) प्यारे का मिलाप हो जायेगा और मंज़िलें (मुरादें) तय हो जायेंगी।

No sin, no grief, no pain,
Safe in my happy self.
My fears are fled my doubts are slain,
My day of triumph come.

मैं अपने आनन्द स्वरूप आत्मा में सुरक्षित हूं।

वहा न पाप है, न दुःख है, न दर्द है।

मेरा भय भाग गया, मेरे संशय नाश हो गये ।
(इस प्रकार) मेरी विजय प्राप्ति का दिन आ गया ।

O Grave ! where is thy victory ?
O Death ! where thy sting ?

ओ चिता ! (अब बता) कहाँ है तेरी जय ?
ओ मृत्यु ! (अब बता) कहाँ है तेरी वेदना ?

My Self to me my kingdom is
Such perfect joy therein I find.
No worldly wave my mind can toss.
To me no gain, to me no loss
I fear no foe, scorn no friend,
I dread no death, I fear no end.

मुझे मेरा आत्मा मेरा साम्राज्य है ।
इस प्रकार पूर्ण आनन्द मैं उसमें पाता हूँ ।
कोई सांसारिक तरंग मेरे चित्त को विचलित नहीं कर सकती ।
मेरे नज़दीक न लाभ है न हानि (हानि-लाभ समान हैं) ।
मुझे किसी शत्रु का त्रास नहीं, किसी मित्र से घृणा नहीं ।
न मुझे नाश का डर है, न मृत्यु का भय ।
मैंने कहा कि रंजो-ग़म मिटते है किस तरह कहो ।
सीना लगा के सीने से मह ने बता दिया कि यूं ।।

राम बेकार कभी नहीं, संसार भर में निकम्मे काम राम ही करता है ।

महर सरगश्ता कि आफ़ताव कुजास्त ।
आव हर सू दवां कि आव कुजास्त ।।१।।
ख्वाबे दोशम ज़ दीदा मा पुरसीद ।
कि ऐ जहाँ बीं वगो कि ख्वाब कुजास्त ।।२।।
मस्त पुरसाँ कि मस्त रा दीदी ?
या रब ! आँ बे। ख़ुदो-ख़राब कुजास्त ।।३।।
बादा दर मयक़दा हमी गरदद ।
गिरदे-मजलिस कि गो शराब कुजास्त ।।४।।
यारे-खुद बेनक़ाब मी गरदद ।
कि मेरा यारे-बेनक़ाब कुजास्त ।।५।।

अर्थ : (१) भास्कर व्याकुल हो रहा है कि सूर्य कहाँ है, पानी हर तरफ भाग रहा (बहता फिरता) है कि पानी कहाँ है ?

(२) कल रात मेरी नींद मेरी आँख से पूछती थी कि ऐ जगत की देखने वाली (आख) ! तू बता कि नींद कहाँ है ?

(३) मस्त लोग पूछ रहे हैं कि तुमने मस्त को देखा ? हे ईश्वर ! वह बेख़ुद और ख़राब (बदमस्त) कहाँ है ?

(४) मदिरा मद्यालय में सभा के चारों ओर दौड़ती हुई पूछती फिरती है कि मदिरा कहाँ है ?

(५) अपना यार (प्राप्तव्य) यद्यपि बेनक़ाब (बेपरदा) फिरता है, किन्तु फिर पूछता है कि वह बेनक़ाब कहाँ है ?

चूंकार मरदुम मी कुनंद अज़ दस्तो पा हरकत कुनंद ।
बेकार माँदम जाय-हरकत हम मनम हर जा स्तम ।।१।।
अज खुद चहा बेरूँ जहम, गो मन कुजा हरकत कुनम ।
अज़ बहरचे कारे-कुनम, मन रूहेमतलबहास्तम ।।२।।

अर्थ–: (१) लोग जब कोई काम करते हैं, तो हाथ और पैर चलाते है, मैं हाथ-पैर चलाने से बेकार हूँ, क्योंकि हर जगह मैं खुद ही मौजूद हूँ। अर्थात् जब मनुष्य काम करता है, तो चेष्टा करता है, आता जाता है, किन्तु मैं कहीं आता जाता नहीं इसलिए कि हर जगह मौजूद हूँ।

(२) मैं अपने से बाहर क्यों कूदूं और चेष्टा करूँ ? किस लिए कोई काम करूँ ? इसलिए कि समस्त आशाओं की जान तो मैं हूँ।

क्या यह अहंकार (अनानीयत) है ?

घमंडी और अहंकारी कौन है ? जो अविद्या (गाढ़े अन्धकार) में फँसा हो।

आँ कस कि नदानद व नदानद कि नदानद।

अर्थ –: वह मनुष्य जो नहीं जानता और इस बात को भी नहीं जानता है कि मैं नहीं जानता हूँ।

अहंकारी वह है जो पद से, कुल से, रुपया से, विद्या से या चमड़े की रंगत से या श्रेणी से फटी-पुरानी बड़ाई की ख़िलअत (उपाधि) उधार मांगकर पहन रहा हो और उस पर मुग्ध हो। अर्थात् हो तो वास्तव में भीख मांगने वाला, पर इस अपनी वास्तविक दरिद्रता को सम्मान का कारण खयाल कर बैठा हो। फ़रऊन और नमरूद ने ख़ुदाई दावा किया था। नास्तिकता और भूल के होते हुए भी वह धन्य थे कि एक बेर महावाक्य "शिवोऽहं" "अनलहक़" तो बोल उठे। उनकी नास्तिकता और भूल केवल

यह थी कि उन्होंने अपने पवित्र स्वरूप को लाँछन लगाया, अपने आप को परिच्छिन्न बनाया, अपने आप को "वहदहु ला शरीक" (एक मेवाद्वितीयं) न जाना, सच्ची मंजिलत (पराकाष्ठा) को न पहचाना, अपना साझीदार एक दूसरा ईश्वर कल्पना करके उसकी नक़ल उतारना या बराबरी करना चाहा, सच्ची बड़ाई को छोड़-कर बनावटी घमंड स्वीकार किया, शरीरत्व में फँसे, पैर के जूते को सिर पर चढ़ाया, अपने पैरों आप कुल्हाड़ा मारा, और अपन आप ईश्वर के साथ दूसरे को सम्मिलित करने वाले और सन्मार्ग से फिरने वाले बने। किन्तु "राम" जो स्वयं गुलों (पुष्पों) की श्वास, अरुण कपोल वालों में प्राण की श्वास फूंकने वाला और मंसूर को सरदार तथा विजयी बनाने वाला है। इस "राम" को क्या पड़ा है कि अपनी निजी ज्येष्ठता तथा तेज और प्रताप को छोड़कर भिक्षा-वृत्ति अर्थात् घमंड और अहंकार स्वीकार करे।

नमरूद शुद मरदूद चूं बूदश निगह महदूद चूं।
मारा तकब्बुर कै सज़द चूं किबरिया मौला-स्तम ॥

अर्थः—नमरूद की दृष्टि जब परिच्छिन्न हुई तो वह मरदूद हो गया, हमें भला यह घमंड कैसे उचित है जब कि हम स्वयं ज्येष्ठ, (सर्व शिरोमणि) और ईश्वर वास्तव में हैं।

यह पागलपन न हो।

प्रायः बुद्धिमानों के द्वारा यह शिकायत सुनने में आई कि 'राम' को सन्निपात (मालीखूलिया) की बीमारी हो गई है, विक्षिप्तता (पागलपन) का रोग हो चला है। वर्तमान काल के तर्कशास्त्रियों का अग्रगण्य "जे० एस० मिल" लिखता है कि

दो बातों में एक को दूसरे से श्रेष्ठ सिद्ध करने का अधिकार केवल उस व्यक्ति को होता है जो दोनों विषयों से भलीभाँति परिचित हो। केवल एक ही ओर का ज्ञान रखने वाला दोनों की तुलना करने की योग्यता नहीं रखता। ऐ **मिल** (Mill) **तथा डेविड ह्यूम** (David Hume) के अनुयाइयो! अर्थात् बुद्धि और तर्क सम्पन्न व्यक्तियों! क्या तुमने कभी इस दीवानेपन का आनन्द चखा? इस पागलपन का अनुभव किया? इस सौदाईपन का स्वाद लिया? कभी नहीं।

दिल के जाने की ख़बर आक़िल की क्या जाने बला।
किस तरह जाता है दिल बेदिल से पूछा चाहिए॥

अतः तुम्हें कोई अधिकार नहीं इस सदाशुभ पागलपन पर अक्षर रखने का (अर्थात् कोई लांछन लगाने का)। ऐ आनंद (Ecstasy-बेख़ुदी) पर आसक्त लोगों! जाओ मदिरा तुम्हें स्मरण कर रही है, संगीत-श्रवण बुला रहा है, सुस्वादु भोजन तैयार पड़े हैं, सुन्दरी रमणियां प्रतीक्षा में खड़ी हैं। जाओ, पर सुनो तो सही, सुन्दरियों में, संगीत-श्रवण में, शराब और कबाब में, मद्यमांस में, या अन्य विषयों में वह क्या है जो रात-दिन तुम्हें अपना दास बनाए रखती है? प्यारों! वह 'राम' के पागलपन की ज़रा सी झलक है और बस। तुम्हें लज्जा नहीं आती, कीकर के भूत (मदिरा) से कृत्रिम उन्माद (पागलपन) उधार माँगते हो। क्षण-भर के आनंद (बेख़ुदी, दीवानेपन) के लिए रक्त और हाड़ चाम के वारे न्यारे जाते हो, स्त्रियों के निकम्मे होते हो, भाँति-भाँति के विषयों में फँस जाते हो। आओ! जगत् के सम्राट को जो मस्ती (दीवानापन) नसीब नहीं है, राम उसका दान करता है।

राम दीवाना है व लेकिन बात कहता है ठिकाने की।

जामे-शराब वहदत वाला।
पी-पी हरदम रह मतवाला।।
पी मैं वारी लाके डींक।
अल्ला शहरग थें नज़दीक।।
सुन सुन सुन ले 'राम' दोहाई।
बे अंता! क्यों अंत है चाई।।
जात पात नूं ला न लीक।
अल्ला शहरग थें नज़दीक।।।

रो रो कर रुपया को इकट्ठा करना और उससे जुदा होते समय फिर रोना, यह रुपया के पीछे पागल बनना अनुचित है। अपने स्वरूप के धन को संभालो। बात-बात में लोग क्या कहेंगे "हाय! अमुक व्यक्ति क्या कहेगा?" इस भय से सूखते जाना, औरों की आँखों से हर बात का अंदाज़ा लगाना, केवल जनता की बुद्धि से (सम्मति से) सोचना, अपनी निजी आँख और निजी समझ को खोकर मूर्ख और पागल बनना अनुचित है। मिटाओ द्वैत का नाम और चिन्ह, और अपने आपको बहाल करो। क्लाक (घंटा घड़ी) के पेन्डुलम के अनुसार दुःख और सुख में कंपित और थरथराते रहना, हताश कर देने वाला पागलपन है। इसे जाने दो। अपने अकाल स्वरूप में स्थित होने दो। हा, 'राम' दीवाना है अर्थात् बुद्धि से परे उसका निवास है। व्यर्थ जगत पड़ा रचना और उसमें स्वयं लुप्त हो जाना, ऐसी चेष्टाएं दीवानों का काम नहीं तो और किस का है?

दीवाना अम दीवाना अम बा-अक्लो हुश बेगाना अम ।
बेहूदा आलम यी कुनम ईं करदमो मन ख़ास्तम ।।

अर्थः—मैं पागल हूँ, मैं पागल हूँ, बुद्धि और होश से परे हूँ । व्यर्थ संसार रचता हूँ, और इसे रच कर इससे पृथक रहता हूँ ।

सौदाई नहीं, सौ-दाई (सौ दाँव जानने वाला) है ;
पागल नहीं, पा-गल (रहस्य का पाने वाला) है ।
मीरा ,राम, की दीवानी, दुनिया बावरी कहे ।
होशो-ख़िरद से हमको सरोकार कुछ नहीं ।
इन दोनों साहिबों को हमारा सलाम है ।।

अर्थ :—चेतना और बुद्धि से हमारा कोई संबंध नहीं, इन दोनों व्यक्तियों को हमारा नमस्कार है ।

गर तबीबे रा रसद ज़ीं साँ जिनूं ।
दफ़्तरे-तिब रा फ़रोशोयद व ख़ूं ।।
जनूने कू कि अज़ क़ैदे-ख़िरद बैरूं कशम पा रा ।
कुनम ज़ंजीरे-पाए ख़्वेश्तन दामाने-सहरा रा ।।

अर्थः—(१) यदि वैद्य को इस पागलपन का भेद मिल जाय तो अपने वैद्यक के दफ़्तर को अपने रुधिर से धो डाले ।

(२) वह पागलपन कि जिससे मैं अपने पांवों को बुद्धि के बंधन से छुड़ा लूं और जंगल के पल्ले (छोर) को अपने पांवों की ज़ंजीर बना लूं अर्थात् नित्य जंगल में ही रहूँ ।

(राग जोग–ताल तीन)

ग्रावे मुक़ाम उत्ते ग्रा, मेरे प्यारिया ! टेक

पा गल्ल ग्रसली पागल हो जा,

मस्त ग्रलस्त सफ़ा, मेरे प्यारिया !

ज़ाहिर सूरत दौला-मौला

बातिन ख़ास ख़ुदा, मेरे प्यारिया !

पुस्तक-पोथी सुट गंगा-विच

दम-दम ग्रलख जगा, मेरे प्यारिया !

सेहली-टोपी लाह दे सिर तो,

रूँड मुंड हो जा, मेरे प्यारिया !

इज्ज़त फोकी फूक दुनी दी,

ग्राक धतूरा खा, मेरे प्यारिया !

झगड़े झेड़े फ़ैसल तेरे,

लेखा पाक चुका, मेरे प्यारिया !

परदे फाड़ दुई दें सारे,

इक्को एक लखा, मेरे प्यारिया !

ग्रापे भुल्ल भुलावें ग्रापे,

ग्रापे बनें ख़ुदा, मेरे प्यारिया !

बुक्कल विच तेरा प्यारा लेटे,

खोल तनी गल्ल ला, मेरे प्यारिया !

दिल ब इस्तदलाल वस्तम माँदम ग्रज़ मक़सूद दूर ।

नदबी कदम तसव्वर राहे-[illegible] रा ।।

अर्थ :–युक्ति और तर्क में मैंने अपने मनको बाँध दिया (प्रवृत्त कर लिया) है और इस तरह लक्ष्य से दूर गया हूं। और इस तर्क रूपी टेढ़े मार्ग को मैंने (अपने लक्ष्य के पहुंचने की) सीढ़ी मान ली है।

अक़ल नक़ल नहीं चाहिए, हमको, पागलपन दरकार।
हमें इक पागलपन दरकार॥
छोड़ पवाड़े झगड़े सारे, ग़ोता वहदत अंदर मार।
हमें इक पागलपन दरकार॥
लाख उपाव करले प्यारे, कदी न मिल सी यार।
हमें इक पागलपन दरकार॥
बे ख़ुद होजा देख तमाशा, आपे ख़ुद दिलदार।
हमें इक पागलपन दरकार॥

———

कश्मीर-पर्यटन

हवाए खुश, फ़िज़ाए खुश, सदाए-आबशारे खुश ।
बहारे खुश, निगारे खुश, चनारे-सायादारे खुश ।।

अर्थ : उत्तम पवन है, उत्तम खुला मैदान है, उत्तम शब्द झरनों का है, उत्तम ऋतु है, उत्तम भाँति-भाँति के रूप रंग हैं, और उत्तम छायादार चुनार के पेड़ हैं।

ऐ राम ! यह निर्दयता ठीक नहीं । प्रकृति ने तेरे लिए विविध वर्ण के दुपट्टे रंगवाये हैं, नए-नए पहनावे (वस्त्र) पहने हैं, और तू उसकी ओर अर्द्ध-दृष्टि भी नहीं डालता । यह ज़ुल्म (निर्दयता) मत कर। चल दर्शन दे।

हमा आहुवाने-सहरा सरहा निहादा बरकफ़ ।
व उमेदे-आँकि रोजे व शिकार ख्वाही आमद ।।

अर्थ : जंगल के समस्त मृग शिरों को हाथ पर लिए हुए इस आशा से खड़े हैं कि कदाचित् तू किसी दिन उनकी ओर शिकार के लिए आयेगा ।

अज़ीज़ां वक़्तो-साअत मी शुमारंद ।
रफ़ीकाँ चश्मो-दिल दर इंतज़ारंद ।।

अर्थ : प्रियजन समय और घड़ियाँ गिन रहे हैं और मित्रगण हृदय और नेत्रों से (उनके आगमन की) प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सर्व क़दा चमाँ, चमां बर लबे जू रवां रवां ।
फ़रशे-रहे तो, कमरियाँ, तालए-शाँ बः पा कुशा ।।३।।

अर्थ : ऐ नदी तट पर ठुमक-ठुमक चलने वाले सरू पेड़ जैसे कद वाले प्यारे ! तेरी राह का बिछौना (बुलबुल) बन गई हैं, उनके भाग्य के तारे को तू अपने पाँवों से प्रकाशित कर।

प्रथम दृश्य

पहाड़ी खेत थिएटर की बेंचों के ढग से सुसज्जित हैं। एक के पीछे दूसरा अधिक ऊंचाई पर बिछा हुआ है। पानी ऊपर से गिरता हुआ सारे के सारे एक बेंच पर एक सा फिर जाता है। वहाँ के हरित धानों को सिचन करने के बाद दूसरी बेंच पर उतरता है, और इसी प्रकार तीसरी पर। प्रातःकाल में हरे-भरे खेत में पानी की सफ़ेद झलक इस प्रकार मालूम देती है जैसे किसी प्यारे प्रेमपात्र के गोरे शरीर का हरित वस्त्रों में दृष्टिगोचर होना। किन्तु दोपहर को दूर से देखा जाये तो सफेद पानी ही पानी दिखाई देता है और पहाड़ चाँदी का सा बन जाता है।

एक हरे तख़्ते पर से राम जा रहा है। स्वच्छ निर्मल हरा मैदान है। प्रफुल्लित करने वाली वायु अविराम गति से हर समय चलती रहती है। विस्तृत मैदान आकाश मंडल (Horizon) के सदृश नहीं है वरन् उस सुन्दरी के मस्तक की भांति गोलाकार है जो सौंदर्य-मद में मस्त होकर चन्द्रमा को आँखें दिखा रही हो। घास क्या है, अत्यन्त नरम साफ़ चादरें बिछी हैं। जान पड़ता है, परियां (अप्सरायें) इसी स्थान पर नाचकर देवराज इन्द्र के "ख़ुशनूदिये-मिज़ाज के परवाने" (प्रसन्न करने के प्रमाण पत्र) प्राप्त किया करती हैं।

(राग भैरवी-ताल शूल)

भला हुआ हरि वीसरो, सिर से टली वलाय । (टेक)
जैसे थे वैसे भये अब कछु कहा न जाय ।।
मुख से जपूं न कर जपूं उर से जपूं न राम ।
राम सदा हमको भजे, हम पावें विश्राम ।।
राम मरे तो हम मरे ? हमरी मरे बलाय ।
सत्त पुरुष लियो जान जब, मरे न मारा जाय ।।
हद टप्पे सो औलिया, बेहद टप्पे सो पीर ।
हद बेहद दोनों टप्पे, ताका नाम फ़कीर ।।
हद हद करते सब गए बेहद गया न कोय ।
हद बेहद मैदान में, रह्यो कबीरा सोय ।।
मन ऐसो निर्मल भयो, जैसे गंगा-नीर ।
पीछे-पीछे हरि फिरें, कहत कबीर कबीर ।।

द्वितीय दृश्य

सुरा के प्याले के रूप में पहाड़ों की आकृति, ठीक बीच में शुद्ध शीतल जल, पानी अत्यन्त मीठा स्वाद, अमृत का स्रोत। वृक्ष अत्यन्त ऊंचे घन के छाया वाले। बेल, प्राकृतिक हिंडोला की शोभा दे रही है। आनन्द-दायक झूलने लटक रहे हैं। राम झूलता है और गाता है।

(राग पीलू-ताल धमार)

दरिया से हुबाब की है यह सदा,
तुम और नहीं हम और नहीं ।
मुझको न समझ अपने से जुदा

तुम और नहीं हम और नहीं !!

जब ग़ुंचा चमन में सुबह को खिला,

तब कान में गुल के यह कहने लगा ।

हाँ, आज यह उक़दा है हम पे खुला,

तुम और नहीं हम और नहीं ।।

आईना मुक़ाबिले-रुख़ जो रखा,

झट बोल उठा यों अक्स उसका ।

क्यों देखके हैरां यार हुआ,

तुम और नहीं हम और नहीं ।

नासूत में आके यही देखा,

है मेरी ही ज़ात से नश्वोनुमा ।

जैसे पुम्बा से तार का हो रिश्ता,

तुम और नहीं हम और नहीं ।।

तू क्यों समझा मुझे ग़ैर बता,

अपना रुख़े-ज़ेबा न हम से छुपा ।

चिक पर्दा उठा टुक सामने आ,

तुम और नहीं हम और नहीं ।।

दाने ने भला खिरमन से कहा,

चुप रह इस जा नहीं चूं-व-चिरा ।

वहदत की झलक कसरत में दिखा,

तुम और नहीं हम और नहीं ।।

इधर-उधर राम की सेना कलोल कर रही है । छोटे-छोटे मुमूलों ऐसे वर्ण-वर्ण के विहंग (परिन्दे) बेल बूटों पर फुदक रहे हैं और प्रसन्नतापूर्ण ध्वनि में चहचहा रहे हैं ।

सफ़ेद-सफ़ेद झाग के भीतर से नीला पानी इस तरह झलक रहा है जैसे गोरे रंग पर नीली नीली रगें। किसी किसी स्थान पर पानी के नीचे पत्थरों की यह चमक है कि यदि "सर्वत्र अपना घर न समझने वाला" कोई मनुष्य यहाँ हो, तो तत्काल उसके चित्त मे यही आये कि जैसे बने इन पत्थर के टुकड़ों को चुरा कर घर अवश्य-अवश्य ले जाऊं। किन्तु घर कैसा ? यह वह स्थान है कि जब एक बेर देखा, तो यहीं घर कर बैठने की इच्छा होती है, छोड़ने को जी नहीं चाहता। हाय रे संसार की कामना और वासना ! तेरे रस्से कैसे दृढ़ हैं, ऐसे आनन्द के अंक (आलिंगन या चुंगल) से भी लोगों को खींच ले जाती है; फिर गरमी में रुलाती है और मिट्टी में मिलाती है।

प्रश्न—यहां लोक परलोक लुप्त है, आनन्द ही आनन्द है। स्वर्ग या बहिश्त कहीं इसी का नाम न हो ?

राम—हाँ ! खूब समझे। शुभ कर्मों वाला भाग्यशाली जगत-जंजाल से छुट्टी पाकर कहीं इधर आता है, कुछ देर आराम करता है, फिर पूर्वले संस्कारों से खिचा हुआ गिर जाता है। अतएव यही स्वर्ग है।

अगर फ़िरदोस बर रूए-ज़मीन अस्त ।
हमीनस्तो - हमीनस्तो - हमीनस्त ।।

अर्थ : यदि स्वर्ग भूमि पर हो तो यही है, यही है।

किन्तु मेरा स्थान (परम धाम) यह नहीं, क्योंकि मेरे आनन्द का वह आकर्षण है कि संसार की कोई कामना उस पर अधिकार नहीं जमा सकती और उससे नहीं हटा सकती; वहां से लौट आने के क्या अर्थ ?

रुख़सत दे बाग़वाँ कि ज़रा देख लें चमन ।
जाते हैं वाँ जहाँ से फिर आया न जायेगा ।।

(राग सोरठ—ताल तीन)

मान मान मान कहा मान ले मेरा ।
जान जान जान रूप जान ले मेरा ।।
जाने बिना स्वरूप ग़म न जायेगा कभी ।
कहते हैं वेद बार बार बात यह सभी ।।
नैनन के नैन जो है सो बैनन के बैन है ।
जिसके वग़ैर शरीर में न पलक चैन है ।।
ऐ प्यारी जान ! जान तू भूपों का भूप है ।
नाचत है प्रकृति सदा मुजरा अनूप है ।।

तृतीय दृश्य

कूकरनाग के समीप एक पहाड़ी चोटी पर "राम" आसन जमाए बैठा है। चारों ओर पहाड़ों पर क्यारियों के ऊपर क्यारियाँ हैं कि कुर्सियां बिछी हैं। उन कुर्सियों पर पवन, वरुण, आदित्य, कुबेर आदि देवता गण विराजमान हैं। शहंशाह राम का इजलास (दरबार) लगा है। नीचे मैदान में धानी, हरे, लाल, पीले रंगों के क़ालीन और ग़लीचे (घास) बिछे हुए हैं। इस कौतुकालय में कंचनियां (नदियाँ) विचित्र बांकपन से नाच रही हैं और कृतज्ञता-सूचक कल-कल नाद (शब्द) करती हुई मन लुभा रही हैं। बाहरी मनोहरता ! जिसने निकट जाकर आँख लड़ाई उसी से यह सौहार्द (मित्रता) कि हाँ मेरे हृदय, यकृत में

तेरा स्थान है (स्वच्छता)। वेलों के हार डाले, लाल पीले नीले फूल कानों में पहने झूम-झूम कर ये ऊंचे-ऊँचे वृक्ष क्या कर रहे हैं? नदियों के सौंदर्य की प्रशंसा कर रहे हैं (या नदियों के सौन्दर्य की शोभा बढ़ा रहे हैं)।

दिलवर दिलरुबाए-मन मीकुनद अज़ बराय-मन ।।
नक्शो-निगारो-रंगो-बू ताज़ाबताज़ा नौ बनौ ।।

अर्थ : दिल का लेने वाला मेरे लिए नए-नए बनाव-शृंगार करता है जिससे दिल को ले ले।

ठीक नहीं कहा, जिनको हम (नदियाँ) चतुर कंचनियाँ समझे थे, वे नाग और नागिनियाँ हैं; काट खाने वाले (अत्यन्त शीतल) सर्प हैं कि लहराते-लहराते, बल खाते, साँ-साँ मचाते चले जा रहे हैं। शंकर (अमरनाथ) ने अपने साँप भेजे है कि राम आगे नाच दिखाएं।

सैर कर और दूर से गुल देख उस गुलज़ार के ।
पर बना अपने गले का इनको मत ज़िन्हार हार ।।
बाज़ीचा-ए-अतफ़ाल है दुनिया मेरे आगे ।
होता है शबो-रोज़ तमाशा मेरे आगे ।।
होता है निहां खाक़ में सहरा मेरे होते ।
घिसता है जबीं ख़ाक पै दरिया मेरे आगे ।।
जुज़ नाम नहीं सूरते-आलम मेरे नज़दीक ।
जुज़ वहा नहीं हस्तिए-अशिया मेरे आगे ।।

चतुर्थ दृश्य

सड़क के दोनों किनारों पर आमने-सामने पंक्तियों में शम-शाद [वृक्ष विशेष] आकाश से बातें करते हुए खड़े हैं; मानों लम्बे क़द वाले प्यारे (प्रेम पात्र) हैं कि हरित वस्त्र धारण किए हुए शरीर से शरीर मिलाए राम की प्रतीक्षा में पंक्ति बाँधे हैं। विचित्र दृश्य है। किन्हीं,-किन्हीं स्थानों पर तो शमशाद ऐसे सटे खड़े हैं कि बेचारों का कंधे से कंधा छिलता है, और यूं आकाश में सिर किए हैं कि यदि उदयाचल निर्मल हो और सड़क पर ठहर कर आकाश की ओर दृष्टि उठाई जाये, तो रोजे-रौशन में, दिन-दोपहर के समय तारों का दिखाई देना कुछ बड़ी बात नहीं है।

एक दिन ऐसी सड़क पर अन्नत-नाग के निकट घोड़े पर सवार "राम" जा रहा था। बादल घिर रहे थे। हवा शमशादों की ज़ुल्फ़ों से अठखेलियां कर रही थी। एका-एक घटा समस्त आकाश में छा गई।

वह आई, वह आई, वह आई घटा ।
गुलिस्ताने-आलम पै छाई घटा ।।
घटा काली-काली धनुष लाल-लाल ।
कन्हैया के अबरू पै जैसे गुलाल ।।

पीछे से एक खुश ध्वनि की आवाज़ निकली वायु पर सवार हो कर फैलने लगी। बादलों तक गुंजार से समस्त लोक भर गया। यह एक पर्वतीय बालक बांसुरी बजा रहा था। कैसा समा बंध गया। अहा, हा, हा ! दिल के सातवें परदे तक वह

सुरें धंस गईं। अब किस में शक्ति थी कि घोड़ा बढ़ाकर आगे निकल जाय। ध्वनि की ताल के साथ घोड़े का पग उठने लगा। मील एक चले गए और ख़याल तक नहीं आया।

अब ज़रा ग़ौर कीजिए, उस बाँसुरी से गोलचंद (कृष्णचन्द्र) का गोपियों को साप की तरह बिलों से खींच लाना और दीवार पर चित्रवत् बनाए रखना क्या कठिन था ?

एक दिल था सो वह भी खो बैठे।
अच्छे ख़ासे फ़कीर हो बैठे।।
अब बिठायेंगे आप को किस जा।
एक मुद्दत के दिल को रो बैठे।।

आँ शोलारू ब ग़मज़ा दिलम रा कबाब कर्द।
मारा चिः कर्द? ख़ानए-ख़ुद रा ख़राब कर्द।।

अर्थ: उस प्रकाश स्वरूप प्यारे ने अपने एक संकेत (इशारे) से मेरे चित्त को जला दिया। इससे हमारा क्या किया, (उल्टा) अपना ही घर उसने बरबाद कर दिया।

पंचम दृश्य

दोनों ओर हरे-भरे पहाड़, घन की छाया, बीच में नहर के तट पर राम जा रहा है। हरी-हरी कोपलों, प्यारी-प्यारी पत्तियों, मनोहर बालछड़ (सुंबुल) और नरम-नरम घास से आँखें कृतार्थ हो रही हैं, और चित्त प्रफुल्लित। पग-पग पर झरनों की बहार में और टेढ़े-तिरछे प्राकृतिक बग़ीचे निजानन्द के नशे में भरपूर कर रहे हैं। हरे-भरे वृक्षों के झुरमुट कानों में फूल, गले में बेलों के हार डालकर चढ़ती जवानी के ख़ुमार में बारातियों का सा शृंगार कर रहे हैं।

वर लवे-जूए-जहाँ बा साज़ो-वर्गे ताज़ाए ।
हर ज़मां ग्रायद ख़रामां यारे-खुश रफ़्तारे मा ।।

ग्रर्थ : संसार की नहर के किनारे नयें नयें सामानों के साथ हर समय मेरा ग्रच्छी चाल वाला मित्र ठुमक ठुमक ग्राता है।

प्राकृतिक सुन्दर पुष्प राम की एक मधुर दृष्टि पर ग्रपना यौवन बेचने को मीना बाज़ार लगाए परे के परे जमाए जमा है।

यूनानी मयिथालोजी से सुना है कि सौंदर्य की परी फेन में से उत्पन्न हुई थी। किन्तु "शुनीदा कै बुवद मानिंदे-दीदा" (ग्रर्थात् सुना हुग्रा कैसे देखा हुग्रा हो सकता है), यहाँ झरनों की फेन प्रत्यक्ष नृत्य करती देख लो।

पानी इतना तो गहरा किन्तु निर्मल ऐसा कि प्यारी गंगी (गंगा जी) स्मरण ग्राती है। गोपियाँ यदि यहाँ नहातीं, तो गोलचंद को कभी ग्रावश्यकता न पड़ती कि इन को नग्न शरीर देखने के लिए पानी से बाहर निकलने का कष्ट देता। यह झलकते-झलकते ऊंचे झरने! चाँदी की कमंद ग्रौर रस्से मालूम देते हैं कि जिनको पकड़कर परलोक (स्वर्ग) को चढ़ जायें, या यह हीरे के गात वाली कंचनियाँ (चादरें) हैं, जो शिर के बल नृत्य करती हुई सेवा में भूमि चूम रही हैं ग्रौर ग्रत्यन्त सुरीली ग्रावाज़ से राम की महिमा के गीत गाती जाती हैं।——

ग्राव ग्रज़ बराए दीदनम मी ग्रायद ग्रज़ फरसंग हा ।
बे-खुद शुदा ग्रज़ खुर्रमी ग़लताँ शवद वर संगहा ।।

ग्रर्थ : जल मेरे दर्शनार्थ पत्थरों से निकल रहा है, ग्रौर प्रसन्नता में मुग्ध हुग्रा पत्थरों पर पेच खा रहा है।

आज व्यायाम नहीं किया, आओ कुछ देर झरने के नीचे छाती रखते हैं, पर्याप्त व्यायाम हो जायेगा। अपनी छाती के क्षेत्र और जल की गति के वर्ग इत्यादि पर गणित शास्त्र की रीति से जल का दवाव मालूम करेंगे, किन्तु उफ़! यह ज़ोर का पानी, यह तो कुल गणित-सणित को बहाए ले जा रहा है, ईंटों से भी चढ़-बढ़ के है। इसके आगे छाती रखने से तो यही उत्तम होगा कि चार-पाँच पत्थर मारकर कलेजा चीर दिया जाय। ऐ पानी! तेरी नरमी, जो प्रसिद्ध उदाहरण है, आज क्या हुई? तुम्हारी शीतलता कहां वह गई कि इस गरमा-गरमी के साथ दौड़े जा रहे हो? यह आवेशोत्तेजन, यह तुंदी तेज़ी, यह गरमी क्यों?

जल का उत्तर---(अ) मैं तो सदा शीतल हूं। स्पर्श कर के देख लो। बदन ठर (ठिठुर) न जाय तो सही। यह गरमी-वरमी तमाशा करने वाले की समझ में है।

(आ) मैं तो प्रतिक्षण नरम ही हूं। आपकी ज़बरदस्ती कि उल्टा मुझ में कठोरता आरोपित या कल्पित हुई है।

प्यारे पाठकों! ज़रा विचार करना, संसार-समुद्र की तीक्ष्णता और कटुता कहाँ? तुम्हारी कृपा है कि जगत धुंधला और अंधकारपूर्ण दृष्टिगोचर होता है।

खंजर की क्या मजाल कि इक ज़ख्म कर सके।
तेरा ही है ख़याल कि घायल हुआ है तू॥
बादा अज़ मा मस्त शुद नैमाज़े मै।
हम ज़ेमा दाँ बूए-गुल आवाज़े-नै॥

अर्थ: मद्य हमसे मस्त होती है न कि हम मद्य से। (इसी प्रकार) हम ही से पुष्प-गंध और बांसुरी की ध्वनि तू समझ।

तुम ही जगत् बन रहे हो।

प्रश्न--यदि वास्तव में यही बात है, तो क्या कारण है कि सच्चाई स्पष्ट नहीं होती ? मैं ही जगत का मूल और फिर मैं ही भय करूं ? समझ में नहीं आता। आप की इन शांति-पूर्ण बातों से हमारे हृदय की तपन नहीं बुझती। माया बड़ी प्रबल है, क्या करें ?

ज़ हरफ़े-सरदे नासह गरमी-ए-इश्क़म न गर्दद कम ।
नियंदाज़द ज़ जोशे - ख़ेश्तन सैलावे - दरिया रा ।।

अर्थ : उपदेश करने वालों की ठंडी बातों से मेरे इश्क़ (प्रेम) की गरमी कम नहीं होती। अपने निजी जोश से नदी की बाढ़ का अंदाज़ा नहीं लग सकता। बाढ़ का वेग नदी को फेंक नहीं देता।

राम : सच है। जब तक अपने आपको स्वयं लेक्चर न दोगे, दिल की तपन क्यों बुझने की है ?

तू खुद हिजाबे-खुदी ऐ दिल ! अज़ मियां बरख़ेज़।

अर्थ : अपना आवरण तू आप बना हुआ है, अतएव ऐ दिल ! अपने भीतर से तू आप जाग।

हम बग़ल तुझसे रहता है, हर आन राम तो।
बन पर्दा अपनी वस्ल में, हायल हुआ है तू ।।
अपने हाथों से अपना मुंह कब तक ढाँपोगे ?

बर चेहरा - ए - तो नक़ाब ता कै ।

बर चश्मा - ए - ख़ुर सहाब ता कै ।।

अर्थ : तेरे चेहरे पर पर्दा कब तक रहेगा, सूर्य पर बादल कब तक रहेगा ।।

साहस से काम लो। माया कुछ वस्तु नहीं। ज़रा से पत्ते की ओट में पहाड़ को छिपा रहे हो। जब साहस का सागर प्रवाह (बाढ़ या ज्वार) पर आता है तो कौन सा हिमालय है जिसको कूड़ा-कर्कट की तरह बहाकर आगे नहीं ले जा सकता। वह कौन सा समुद्र है जिसे तुम नहीं सुखा सकते, वह कौन सा सूर्य है जिसे परमाणु नहीं बना सकते ?

वह कौन सा उक़दा है जो वा हो नहीं सकता ।
हिम्मत करे इंसान तो क्या हो नहीं सकता ।

प्रश्न : पर्दे और घूंघट का काम ही क्या, निरवयव और निराकार में हाथ पाँव की चर्चा ही क्या अर्थ रखती है ? एक ही पवित्रात्मा में ये कहाँ से आ गए ? वह कौन सी शक्ति थी जिसने सर्व-शक्तिमान पर अधिकार प्राप्त किया ? और यह किस प्रकार हो सकता है कि मेरा ही चेहरा अपने आप को ढांप ले ?

हिजाबे-जलवा हम यकसर हुजूमे-जलवा हस्त ईंजा ।
नक़ाबे-नेस्त दरिया रा मगर तूफ़ाने-उरयानी ।।

अर्थ :—उसके तेज का पुन्ज ही तेज का पर्दा बना हुआ है। जिस प्रकार कि नदी को और कोई पर्दा नहीं बल्कि नदी की बाढ़ ही नदी का पर्दा हो जाती है।

चादर से मौज की न छिपे चेहरा आब का ।
बुरक़ा हुबाब का न हो बुर्क़ा हुबाब का ।।

जब वह जमाले-दिल फ़रोज़ सूरते-मिहरे नीमरोज़ ।
आप ही हो नज़्ज़ारासोज़ पर्दे में मुंह छुपाए क्यों ।।

चेहरए-नूरानी पर से ज़ुलमते-काकुल (काली जुल्फ़) दूर करो और दीदा-ए-दिल में सुर्मा दो।

अर्थात् सुन्दर मुख पर से अंधकार का आचरण दूर करो और हृदय नेत्र में ज्ञान का काजल डालो।

हिजाबे-नौ उरुसानी ज़ शौहरे-ख़ुद नमी मानद ।
अगर मानद शबे मानद शबे-दीगर नमी मानद ।।

अर्थ :—नई दुलहिन की लज्जा अपने पति के साथ तो नहीं रहती, और यदि रहती भी है तो केवल एक रात रहती है, दूसरी रात नहीं रहती।

ऐ लो—मिक़राज़े-मौज दामने-दरिया कतर गई ।
बहदत का बुर्क़ा फट गया सारी सितर गई ।।
गला फाड़-फाड़कर आब (जल) पुकार रहा है—
मनम ख़ुदा ओ बबाँगे-बलंद मीगोयम ।
हर आँ कि नूर दिहद मिहरो-माह रा ओयम ।।

अर्थ :—मैं पुकार पुकार कर कहता हूँ कि मैं ख़ुदा हूँ जो चन्द्रमा और सूर्य को प्रकाश देता है, वही मैं हूँ।

प्रश्न—तुम तमाशा देखने आये हो कि सब वस्तुओं को खा जाने? सब की शोभा, सब की चमक दमक तुम ही हो? तुम इस कवि-वाक्य के अनुरूप हो क्या?

चाँदनी देखे अगर वह महजबीं तालाव पर ।
अक्से-रुख़ की ताब पानी फेर दे महताब पर ।।

राम––क्या आज इस कवि-वाक्य के अनुरूप हुआ हूँ ? मेरे विषय में वेद कहता चला आता है ।

न तत्र सूर्यो भांति न चन्द्र तारकं
नेमा विद्यतो भान्ति कुतोऽयमग्निः ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्व्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ।।
(मुण्डक उप० खं०२ मं० १०)

अर्थ : न वहाँ सूर्य चमकता है, न चन्द्र और तारे, न ही ये बिजलियाँ चमकती हैं, यह अग्नि तो कहाँ ? । उसी के चमकने पर यह सब कुछ चमकता है, उसी की ही चमक से यह सब चमक रहा है ।।१०।।

(राग पहाड़ी–ताल चलंत)

(१) पहाड़ों का यों लम्बी ताने यह सोना ।
वह गुंजां दरख़्तों का दोशाला होना ।।
वह दामन में सब्ज़ा की मख़मल बिछौना ।
नदी का बिछौना की झालर पिरोना ।।
यह राहत मुजस्सम यह आराम मैं हूं ।
कहाँ कोहो-दरिया, यहाँ मैं ही मैं हूँ ।।

नोट---झालरदार मख़मल के बिछौने पर दोशाला ओढ़े कुंभकर्ण की तरह लम्बे पर्वतीय शृंखला का विस्तारित होना ठीक मस्ती (धन सुषुप्ति-आनन्दमय कोश) का स्वरूप है। इस सुषुप्ति या आनन्दमय कोश में प्रकाश या आनन्द (कूटस्थ) मैं हूं। मुझे जानने पर यह सुषुप्ति रूप पहाड़ नदी आदि कहाँ रहने पाते हैं? सत्यता का पता लगते ही भ्रांति पलायित हो जाती है।

ऐ ज़ रूयत गुलिस्तंनिहा शर्मसार ।
दर गुलो-गुलज़ार चू नत याफ़्तम ।।

अर्थ :--जब मैंने तुझको बाग़ में देखा तो बाग़ को शर्मिदा पाया (तेरा सा सौंदर्य बाग़ में कहाँ)।

(२) सफ़ेद-सफ़ेद बादल कभी घोड़े के रूप में, कभी रेल के रूप में, कभी मनुष्य की आकृति में पहाड़ों पर हाथी की मस्त चाल से चलते हुए स्वप्नावस्था की चंचल दशा दिखा रहे है। प्रकृति इस अवस्था में भी स्त्रियों वाले हाव-भाव नहीं छोड़ती। अपने प्रियतम "राम" की आनन्द दृष्टि प्राप्त करने के लिए कभी रोती है, कभी हंसती है--

(२) यह पर्वत की छाती पै बादल का फिरना ।
वह दम भर में अबरों से पर्वत का घिरना ।।
गरजना, चमकना, कड़कना, निखरना ।
छमाछम छमाछम यह बूंदों का गिरना ।।
उरूसे-फ़लक का वह हँसना यह रोना ।
मेरे ही लिये है फ़क़त आन खोना ।।

(३) कोसों तक क़ुदरती गुलाज़र (प्राकृतिक वाटिका) का चले जाना, वर्ण-वर्ण के फूल चारों ओर खिले हुए--

(३) यह वादी का रंगीं गुलों से लहकना।
फ़िज़ा का यह बू से सरापा महकना।।
यह बुलबुल सा खंदालबों का चहकना।
वह आवाज़े-नै का बहर सू लपकना।।
गुलों की यह कसरत इरम (स्वर्ग) रूबरू है।
यह मेरी ही रंगत, यह मेरी ही बू है।।

(४) एक और मनोहर स्थान--

(४) जो जू और चश्मा है नग़मा सरा है।
किस अंदाज़ से आब बल खा रहा है।
यह तकियों पे तकियें हैं रेशम विछा है।
सुहाना समां मन लुभाना समां है।।
जिधर देखता हूँ, जहां देखता हूँ।
मैं अपनी ही ताब और शाँ देखता हूँ।।

(५) झरनों की बहार (फुहार

(५) नहीं चादरें नाचते सीम-तन हैं।
यह आवाज़? पाज़ेब हैं नाराज़न हैं।।
पहाड़ों के दानें ज़मुर्रूद फ़िगन हैं।
सफ़ाई अहा! रूए-मह पुर-शिकन हैं।।
सबा हूं में गुल चूमता, बोसा लेता।
मैं शमशाद हूँ झूमकर दाद देता।।

(६) बड़े-बड़े ऊँचे पहाड़ों को कश्मीर में "पीर" कहते हैं (जिसे पीर पंचाल, पीर भुंजाल, रतन पीर आदि) इसका कारण यह विदित होता है कि जैसे पीर (बुड्ढा) सफ़ेद सिर वाला होता है, इन पहाड़ों की चोटियाँ भी बर्फ़ के कारण प्रायः सफ़ेद ही रहती हैं।

किन्तु आनन्द यह है, क्या जाने इन पीरों ने धूप में बाल सफेद किए हैं, सिर तो बुड्ढे हो गए हैं, किन्तु युवापन की सब उमंगें जी में हैं। इनके हृदय हरे-भरे हैं, अर्थात् चोटियों को छोड़कर नीचे से अत्यन्त ही हरे-भरे हैं। बाहर का यह कथन इन पर घटित होता है---

पीरी में न किस तरह करूं ऐशे-जहा की ।
दिन ढलते ही होता है तमाशा गुज़री का ।।

देवदार के ऊंचे वृक्ष सुरा की सुराहियों की सूरत (आकृति) रखते हैं। इन में स्थान-स्थान पर कल-कल नाद करते हुए सोते (स्रोत) बह रहे हैं, मानों बोतलों में से कुल-कुल के साथ सुरा निकल रही है। यह मूर्तिमान मस्ती राम ही की एक मौज है।

(६) मेरे सामने एक महफ़िल सजी है।
हैं सब सीम सर पीर, पुरसब्ज़ जी है ।।
शजर क्या हैं ? मीना पै मीना धरी है।
न झरनों का झरना है, क़ुल क़ुल लगी है ।।
लुंढाये ये शीशे कि बह निकली नहरें।
है मस्ती मुजस्सिम यह या अपनी लहरें ?

(७) श्रीनगर से अनंत नाग को नौका (किश्ती) में जाना—

(७) रवां आबे-दरिया है कश्ती दवां है।
सबा नुज़हत आगीं सुवहदम व जाँ है॥
यह लहरों पै सूरज का जलवा अयाँ है।
बलन्दी पै बर्फ़ एक तजल्ली फ़िशां है॥
ज़हूर अपने ही नूर का तूर पर है।
पिदीद अपनी ही दीद कुल बहरो-बर है॥

(८) झील डल में इधर उधर सुर्जीत पहाड़ों का प्रतिबिंब पड़ रहा है और पानी को हवा हिला रही है; (इस रूप) में हल्की हवा के झोंको से इतने बड़े पहाड़ हिलते दृष्टिगोचर होते हैं। क्या आनन्द है, आश्चर्य है।

(८) डलकता है 'डल' दीदये महलक़ा सा।
धड़कता है दिल आईना पुर सफ़ा का॥
हिलाता है कोहों को सदमा हवा का।
खिले हैं कंवल फूल है इक बला का॥
यह सूरज की किरणों के चप्पें लगे हैं।
अजब! नाव भी हम हैं खुद खे रहे हैं॥

सूर्य नौका की भाँति डल में कंपित दिखाई देता है। और उसी सूर्य की किरणें चप्पों के समान नौका चलाने वाली हैं। मैं ही वह सूर्य हूं जो नौका बना है, मैं ही खेने के औज़ार हूं (हथियार हूं)।

(९) अमरनाथ की चढ़ाई, पूर्णमासी की रात--

(९) चढ़ाई मुसीबत, उतरना यह मुश्किल ।
फिसलनी बरफ़ तिस पै आफ़त यह बादल ।।
क़यामत यह सर्दी, कि बचना है बातिल ।
यह बू बूटियों की, कि घबरा गया दिल ।।
यह दिल लेना जाँ लेना किसकी अदा है ?
(शिवजी जो मेरा ही अन्तरात्मा है)
मेरी जाँ की जाँ जिसपै शोख़ी फ़िदा है । (पार्वतीजी)

(१०) पूर्णमासी की रात--

(१०) अजब लुत्फ़ है कोह पर चाँदनी का ।
यह नेचर ने ओढ़ा है जाली दुपट्टा ।।
दिखाता है आधा, छिपाता है आधा ।
दुपट्टे ने जोबन किया है दो-बाला ।।
नशे में जवानी के माशूक़ नेचर ।
है लिपटी हुई 'राम' से मस्त होकर ।।

(११) अमरनाथ का अत्यन्त विस्तृत ईश्वरीय हाल ।
(जिसे लोग गुफा कहते हैं)

(११) बरफ़ जिसमें सुस्ती है, जड़ता है, ला-शै ।
अमर लिंग अस्तादा चेतन की जा है ।।
मिले यार, हो वस्ल, सब फ़ासला तै ।
यही रूप दायम अमरनाथ का है ।।
वह आए उपासक, तअय्युन मिटा सब ।
रहा राम ही राम मैं तू मिटा सब ।।

हे राम

(राग जंगल-ताल धमार)

हरसू कि दवीदेम हमा सूये-तो दीदेम।
हरजा कि रसीदेम सरे-कूये-तो दीदेम ॥१॥
हर क़िबला कि बगुज़ीद दिल अज़ बहरे-इबादत।
आँ क़िबलए-दिल रा ख़मे-अबरुए-तो दीदेम ॥२॥
हर सरो रवां रा कि दरीं गुलशने-दहर अस्त।
बर रुस्तए-बुस्ताने - लबे - जूए - तो दीदेम ॥३॥
अज़ बादे - सबा बूए - ख़ुशत - दोश शमीदेम।
बा बादे-सबा क़ाफ़िला-ए-बूए-तो दीदेम ॥४॥
रूए-हमा ख़ूबाने - जहाँ रा ब तमाशा।
दीदेम वले अज़ आईना-ए-रूए-तो दीदेम ॥५॥
दर दीदए शुहलाए;-बुताने - हमा आलम।
कर देम नज़र नर्गिसे-जादू ए-तो दीदेम ॥६॥
ता मेहरे - रुख़त बर हमा ज़र्रात न ताबद।
ज़र्राते जहाँ रा ब तगो-पूए-तो दीदेम ॥७॥

अर्थ : (१) जिस ओर हम दौड़े, वह सब दिशाएं तेरी ही देखीं (अर्थात् सब ओर तू ही था)। और जिस स्थान पर हम पहुंचे वह सब तेरी ही गली का सिरा देखा (अर्थात् सर्वत्र तुझे ही पाया)।

(२) जिस उपासना के स्थान को हृदय ने प्रार्थना के लिए ग्रहण किया उस हृदय के पवित्र धाम को तेरी भ्रू का ख़म (झुकाव) देखा (अर्थात् उस स्थान पर तू ही झांकता दृष्टिगोचर हुआ)।

(३) हर सरो रवां (प्रिय वृक्ष अर्थात् प्रेम पात्र) को जो कि इस संसार वाटिका में है, उसको तेरी नदी-तट की वाटिका का उगा हुआ देखा (अर्थात् जो भी इस जगत में प्यारा दृष्टि गोचर हुआ, वह सब तेरे ही से प्रकटीकृत हुआ दिखाई दिया)।

(४) कल रात हमने प्राची-समीर से तेरी सुगंध सूंघी और उस प्राची-पवन के साथ तेरी सुगंध का समूह देखा (अर्थात् उसमें तेरी ही सुगंध बसी हुई थी)।

(५) संसार के समस्त सुन्दर पुरुषों के मुखमंडलों को कौतूहल (कौतुक) के लिए हमने देखा, किन्तु तेरे मुखड़े के दर्पण से उनको देखा (अर्थात् इन समस्त सुन्दरों में तेरा ही रूप पाया)।

(६) समस्त संसार के प्यारों की मस्त आँख में हमने जब देखा तो तेरी जादू भरी नरगिस (आँख) देखी।

(७) जब तक तेरे मुखमंडल का सूर्य समस्त परमाणुओं पर न चमके, तब तक संसार के परमाणुओं को तेरी ही ओर दौड़ते हुए देखा (अर्थात् जब तक तेरी किरण न पड़े तब तक सत्य का जिज्ञासु तेरा ही इच्छुक रहेगा)।

(राग भैरवी—ताल दादरा)

सेर नियम सेर नियम अज़ लबे-खंदाने-तो ।
ऐ कि हज़ार आफ़रीं बर लबे-दंदाने-तो ।।१।।
सोसने तेग़े कशीद ख़ूंने समन रा वरेख्त ।
तेग़ ब सोसन कि दाद ? नर्गिसे-ख़ूंख्वारे-तो ।।२।
आईनए जा शुदस्त चेहरए-ताबाने-तो ।

हर दो थके बूदा एम जाने-मन ब जाने-तो ।।३।।

अर्थ :–(१) तुझको हंसते हुए देखकर मैं तृप्त नहीं हुआ हूं, मैं तृप्त नहीं हुआ हूं, पर प्यारे ! तेरे अधर और दांतों पर बलिहार।

(२) सोसन (पुष्प विशेष) ने तलवार खींचकर मेरा खून बहाया, सोसन को तलवार किसने दी ? तेरी नरगिस (पुष्प विशेष जिससे तात्पर्य नेत्र हैं क्योंकि नेत्रों की आकृति की तुलना नरगिस के पुष्प से की जाती है) ने दी जो कि रक्त की प्यासी है।

(३) तेरा चमकता हुआ मुखड़ा प्राण का दर्पण है। मेरे प्राण और तेरे, दोनों एक हैं, क्योंकि तेरे मुखड़े में मेरे प्राण दिखाई देते हैं।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

—:०:—

सुमेरु दर्शन

जिस समय राम जमुनोत्तरी की कन्दरा में निवास कर रहे थे, उस समय वे २४ घंटे में एक बार मार्चा और आलू का भोजन करते थे। इससे उनको अपच हो गया। एक दिन में उन्हें सात बार दीर्घ-शंका निवारण करना पड़ता था। बीमारी के चौथे दिन वे बहुत सुवह उठे। उन्होंने गरम पानी के कुण्ड में स्नान किया और अपनी सुमेरु-यात्रा पर चल निकले। लंगोट के अलावा उनके शरीर पर अन्य कोई वस्त्र नहीं था। उनके पैरों में जूते नहीं थे, सिर पर पगड़ी नहीं थी, छाता भी नहीं था। उनके साथ पांच अन्य कठोर साहसी पर्वतारोही थे जो ऊनी गरम वस्त्र पहने हुए थे। श्री नारायण स्वामी और श्री तुलाराम को नीचे तलहटी की ओर वापस भेज दिया गया था।

आरम्भ में हमको जमुना के बाल-रूप को तीन या चार बार पार करना पड़ा। उसके बाद जमुना की घाटी एक विशाल गतिशील हिम खण्ड से अवरुद्ध हो गई थी। यह हिम खण्ड ४५ गज़ ऊंचा एवं $1\frac{1}{2}$ फ़र्लांग लम्बा था। हमारे दोनों ओर सीधी खड़ी हुई दीवारों की तरह ढालू पहाड़, गर्व से खड़े हुए थे। क्या उन्होंने राम बादशाह को आगे जाने से रोकने के लिए कोई साज़िश की थी? कोई परवाह नहीं, सभी अवरोधों को दृढ़, अपराजेय संकल्प शक्ति के सामने से हटना ही पड़ेगा। हम पश्चिमी पर्वत की दीवार पर चढ़ने लगे। जब हमको पैरों को जमाने के लिए कोई सहारा नहीं मिलता था, उस समय अपने शरीर को सम्हालने के लिए कुछ

तो सुगन्धित परन्तु कंटीली झाड़ियों की पतली टहनियों को हाथों से पकड़ना पड़ता था और कुछ अपने पैरों के अंगूठों को "चा" नामक पहाड़ी कोमल घास की मुलायम नुकीली पत्तियों से उलझाना पड़ता था। ऐसे भी अनेक क्षण आये जब मृत्यु बिल्कुल निकट ज्ञात होती थी। जमुना की घाटी हिम शीतल शय्या को लेकर एक अगाध अतल स्पर्शी गर्त से भरी पूरी थी। ऐसा लगता था कि जमुना की घाटी क़ब्र के रूप में अपना विशाल मुंह हमारे दल के उस प्राणी के मधुर स्वागत में खोले हुए है जिसका पैर थोड़ा सा भी हिल जाये या कांप जाये। नीचे की ओर से जमुना के बहने की धीमी मन्द मर्मर की आवाज़ हमारे कानों के पास अभी तक आ रही थी जो अनेक ढोलों की मिली-जुली आवाज़ों से पूर्ण मृत्यु गीत सुना रही थी। ऐसा अनुभव होता था कि एक घंटे के तीन चौथाई भाग तक मृत्यु के जबड़ों के बीच हिल-डुल कर आगे बढ़ रहे थे। पूर्ण परिवेश आश्चर्यजनक था। एक ओर मृत्यु हमारे चेहरों को टकटकी बांधकर देख रही थी और दूसरी ओर वह समीर बह रहा था जो मधुर गन्ध से पूर्ण होकर नया जीवन देकर स्फूर्ति और साहस भर रहा था। इस टेढ़े-मेढ़े खतरनाक और साहसी कार्य से हम भीषण हिम खण्ड के उस पार पहुंच गये। यहां पर जमुना नदी छूट गई। हमारा दल एक ढालू पहाड़ पर चढ़ने लगा जिस पर न कोई पगडंडी थी और न ही कोई रास्ता बना था। हमने एक ऐसे घने जंगल को पार किया जहां हमको वृक्षों की लकड़ी भी नहीं दिखाई दी। राम के शरीर पर बहुत ख़रोंचें लगी थीं। एक घंटे से कुछ ज़्यादा, विशाल भोजपत्र और बलूत के वनों के विरुद्ध संघर्ष करने के बाद हम खुले मैदान में पहुंच गये, जो छोटे आकार की वनस्पतियों से भरा हुआ था। पूरा पर्यावरण

(वातावरण) सुगन्ध की लहरों से पूर्ण ही नहीं वरन् आच्छादित था, लेकिन पर्वत की चढ़ाई ने सभी पर्वतारोहियों को एकदम निढाल सा कर दिया था। यहां तक राम को भी यह चढ़ाई एक कठिन व्यायाम जान पड़ी। ८०^{0} (८० डिग्री) अथवा उससे भी अधिक ढालू पहाड़ी को पार करना था। अधिकांश रूप में भूमि चिकनी और फिसलन से भरी हुई थी। परन्तु चारों ओर के भव्य दृश्य, आकर्षक फूलों के पुंज और लहलहाती पत्तियां इस कठिन यात्रा को नया साहस प्रदान कर रहे थे। यूरोप के माली आम तौर से इन्हीं प्रकार के स्थानों से फूलों के बीजों को भारतीय कम्पनी बग़ीचो को सजाने के लिए ले जाते हैं और अबोध अंग्रेज़ी भाषा बोलने वाले जवान लोग उनको अंग्रेज़ी कुसुम कहते हैं। इनमें अधिकांश पुष्पों की सबसे आश्चर्यजनक विशेषता यह है कि जब इनको अपने स्थान से हटाकर दूसरी जगह लागाया जाता है तो उनका रूप रंग तो वही रहता है, सिर्फ़ सुगन्ध लोप हो जाती है।

वे युवक, जो यूरोपीय शिक्षा का दम्भ लादे हुए हैं, जब यूरोप के प्रोफ़ेसरों के लेखन में वेदान्त दर्शन-शास्त्र की प्रतिध्वनियों को सुनते हैं तो अनजाने ही अपनी समझ के अनुसार पाश्चात्य विचारों के अंध प्रशंसक हो जाते हैं। वे यह नहीं जानते कि यह विचार जिनकी अंध प्रशंसा वे कर रहे हैं उनकी ही मातृभूमि के पौधे हैं, जिन का आरोपण दूसरी जगह पर किया गया है। केवल इस विशेष भेद को वे अपने साथ लिए होते हैं कि यूरोपीय शिक्षकों के हाथों में पड़कर यह आश्चर्यकारी सुमन अपनी वैराग्यरूपी मधुर सुगंध को खो देते हैं। यूरोप के विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किये गये वेदान्त दर्शन का रूप रंग तो वही रहता है लेकिन उसकी तात्विक साक्षात्कार रूपी सुगंध ग़ायब हो जाती है।

'अक्से गुल में रंग है गुल का, व लेकिन बू नहीं ।'

अब रोग ग्रसित राम के स्वास्थ्य पर एक नज़र—
उस दिन वे बिल्कुल स्वस्थ्य थे कोई व्याधि नहीं थी, कोई थकावट नहीं थी, किसी तरह की कोई शिकायत नहीं थी। कोई भी पर्वतारोही उनसे आगे नहीं चल सकता था। हम लोग पहाड़ पर तब तक ऊपर से और ऊपर चढ़ते जाते थे जब तक हमारे दल का प्रत्येक व्यक्ति भूख से व्याकुल नहीं हो जाता था। इस समय तक हम उस स्थान पर पहुंच चुके थे जहाँ वर्षा कभी नहीं होती है परन्तु बर्फ़ बड़ी मात्रा में गिरती है। इन सलवाट, सूनी और सूखी ऊंचाइयों पर किसी भी वनस्पति की हरियाली का कोई चिन्ह नहीं हमारे वहाँ पर पहुंचने से पहले नई ताज़ी हिम-वर्षा हो चुकी थी।

राम के लिए एक विशाल शिलाखण्ड के पृष्ठ भाग पर एक लाल कम्बल बैठने के लिए बिछा दिया गया। पिछली रात में जो आलू उबाले गये थे, उन्हीं को राम को खाने के लिए दिया गया और साथियों ने अपना साधारण रूखा-सूखा भोजन प्रसन्नता के साथ ग्रहण किया। हल्की जमी हुई बर्फ़ के ढेलों ने जल का काम देकर अत्यन्त सुख की अनुभूति कराई। भोजन के बाद हम तुरन्त पहाड़ पर चढ़ने लगे। धीरे-धीरे आगे उंचाई की ओर बढ़ने के लिए हम कठिन परिश्रम करते रहे। थकान से चूर होकर एक जवान गिर गया; उसके फेफड़ों और पेट के अंगों ने उसे आगे बढ़ाने से इन्कार कर दिया। उसने सिर चकराने की भी शिकायत की। उस समय उसको वहीं छोड़ दिया गया। थोड़ा और आगे बढ़ने पर एक दूसरा साथी बेहोश हो गया, उसने भी कहा—"मेरा सिर चक्कर खा रहा है।" कुछ समय के लिए उसको भी छोड़ दिया

गया। बाक़ी लोग आगे बढ़ते गये। थोड़ी देर बाद तीसरा साथी भी गिर गया, उसकी नाक से ख़ून निकलने लगा। दो व्यक्तियों के साथ राम आगे बढ़ते गये।

उसी समय तीन बारहसिंगों को बहुत सुन्दरता के साथ भागते हुए देखा। चौथा साथी भी पीछे छूट गया और बर्फ़ से ढकी हुई एक शिला पर लेट गया। चारों ओर कहीं भी बहता हुआ पानी नहीं दिखाई देता था परन्तु जहाँ वह साथी लेटा हुआ था, उसके पत्थरों के नीचे से पानी के बहने से कल-कल की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। अब भी एक व्यक्ति राम के साथ चल रहा था। इसके पास लाल कम्बल, एक टेलिस्कोप, हरे रंग के शीशे वाला एक चश्मा और एक कुल्हाड़ी थी। सांस लेने के लिए हवा बहुत सूक्ष्म थी। आश्चर्य यह था कि दो गरुड़ पक्षी हमारे सिरों के ऊपर से उड़कर चले गये। अब हमारे सामने पार करने के लिए एक खड़ा ढाल था जो बहुत पुरानी गाढ़े नीले रंग की बर्फ़ से ढका हुआ था। एक साथी व्यक्ति ने फिसलन वाली बर्फ़ को कुल्हाड़ी से काटना आरम्भ किया जिससे हम उन पर अपने पैरों को जमा सकें लेकिन पुराना हिमखण्ड इतना अधिक कठोर था कि उस बेचारे व्यक्ति की कुल्हाड़ी ही टूट गई। तभी उसी स्थान पर हमारे ऊपर हिम-वर्षा होने लगी। उस उदास व्यक्ति के मन को राम ने यह कह कर उल्लास और साहस से भर दिया कि ईश्वर इस हिमवर्षा से हानि कम और लाभ अधिक करना चाहता है। और यही सिद्ध भी हुआ। भीषण हिम वर्षा ने हमारे लिए मार्ग पर आगे बढ़ना और आसान बना दिया। पहाड़ी नुकीली छड़ियों के सहारे हम ढाल को पार कर गये।

और देखो! हमारी नज़रों के सामने आकर्षक समतल, विशाल चौंधियाने वाला बर्फ़ीला मैदान फैला हुआ था। उस मैदान की चौड़ाई मीलों तक चली गयी थी। हमारे चारों ओर चमकती हुई रुपहली बर्फ़ का जगमगाता हुआ फ़र्श था—आनन्द ही आनन्द था। क्या यह चमकते हुए दूध का भव्य, आश्चर्यकारी समुद्र नहीं था? राम के आनन्द की सीमा नहीं थी। इसी समय वह अपने कंधों पर लाल कम्बल रखे हुए और मोटे कैनवस के जूतों को पहनकर हिम शिखरों पर आनन्दावेश में आ कर पूरे वेग से दौड़ने लगे। इस समय इनके साथ कोई नहीं था।

'आखिर के तईं हँस अकेला ही सिधारा,।'

लगभग तीन मील तक राम बर्फ़ पर चलते रहे। कभी-कभी उनके पैर बर्फ़ में धँस जाते थे और बिना काफ़ी कोशिश के बाहर नहीं निकाले जा सकते थे। अन्त में एक बर्फ़ीले टीले पर लाल कम्बल बिछा दिया। राम उस पर बैठ गये, वे बिल्कुल अकेले थे। संसार की दौड़-धूप की कोलाहल से दूर और भीड़-भाड़ की खलबली से परे, पूर्ण रूप से शान्त वातावरण था। अमृतमय आनन्द के अलावा कोई दूसरी आवाज़ वहाँ नहीं थी। परमशांत सुखद, गम्भीर एकान्त था।

बादलों के आवरण कम घने हो गये। हल्के बादलों से छनकर सूर्य की किरणें जैसे ही इस विशाल दृश्य पर पड़ीं तुरन्त ही रुपहली बर्फ़ अग्नि में पड़े हुए सोने की तरह चमकने लगी। इस स्थान को बहुत सही रूप में **सुमेरु** अर्थात् सोने का पर्वत कहा गया है।

ऐ संसारी लोगों ! ध्यान दो, एक नवयौवना सुन्दरी के कपोलों की लाली, अनेकों हीरे-जवाहरातों की चमक-दमक अथवा विभिन्न आभूषण या ऊंचे-ऊंचे महल-अट्टालिकाओं में कण-मात्र भी वह दिव्य मोहकता और आकर्षण नहीं दृष्टिगोचर हो सकता है, जो सुमेरू दर्शन से प्राप्त होता है। जब तुम आत्मानुभूति के शाश्वत आनन्द के अधिकारी हो जाते हो, तो ऐसे अनगिनत सुमेरू तुम्हारे अंतर में विद्यमान हो जाते हैं---तब सम्पूर्ण प्रकृति तुम्हारा सम्मान करेगी। वायुमंडल के मेघपुंज नीले आकाश से हरित भूमि तक और उसमें पोषित समस्त प्राणी, बाज़ से लेकर क्षुद्र कीट पतंग तक तुम्हारी चाकरी के लिए उद्यत रहेंगे। किसी देवता में वह सामर्थ्य नहीं कि तुम्हारे आदेशों की अवहेलना करें।

हे आकाश ! निर्मल बनो। भारत के ऊपर छाये हुए अज्ञान के मेघो ! तितर-बितर हो जाओ। इस भूमि पर अब कभी मत मंडराना। हिमालय पर आच्छादित हिमखंडो ! तुम्हारा स्वामी तुमको यह आज्ञा देता है कि सत्य की ज्योति के प्रति शुद्ध और आस्थावान रहो। भारत के मैदानों को द्वैत की गंध से दूषित जल कभी मत भेजना।

मेघ खण्ड बिखर कर छितरा गये हैं। पर्वतों ने गेरुए रंग का वस्त्र धारण कर लिया है। क्या पर्वतों ने सन्यास ले लिया है ? अवश्य ही उन्होंने राम की पोशाक पहन ली है। कितनी आश्चर्य-जनक प्रतिक्रिया है ? पर्वतों की बर्फ़, राम की ओर उन की आज्ञा का पालन करने के लिये पूर्ण समर्पण की दृष्टि से देख रही है कि उनके संदेश का प्रसारण हो जाय---

ॐ

अहा हा ! अहा हा ! अहा हा !
गोलाकार जगत देखने में रमणीय है,
रहस्य के नौ पर्तों में वह लिपटी है।

भ्रमित साधुजन उसके परिभ्रमित हृदय की गतियों के भेद को नहीं कह सकते।

प्रकृति के धड़कते हुए हृदय की गति समय की धड़कन से मिला दो तो पूर्व से पश्चिम तक सारा वातावरण स्वच्छ और निर्मल हो जायेगा।

एक अमेरिकी मनीषी का कथन है,—"अरे ! प्रकृति का आविर्भाव तो संकल्प मात्र से हुआ है जो पुनः एक विचार में परिवर्तित हो जाता है, जैसे बर्फ पानी और गैस में बदल जाती है। यह दृश्य संसार मानसिक तत्व का स्थूल रूप है और चेतना की गतिशीलता स्वतंत्र विचार की ओर निरन्तर पलायन करती रहती है। इसीलिए सभी प्राकृतिक वस्तुओं के मानस पर, चाहे वे अंगहीन हों या अंगमय विचार-तत्व का यह प्रभाव बहुत उग्र और तीक्ष्ण रूप में पड़ता है। बंधन में पड़ा हुआ मनुष्य खनिज वर्ण का मनुष्य, वनस्पतियों के समान बढ़नेवाला मनुष्य, सभी विभिन्न रूप धारी, मनुष्य से ही वार्तालाप करते हैं।

प्रश्न : अगर जगत मेरे संकल्प या विचार मात्र से बना है तो बाह्य वस्तुयें मेरी इच्छा के अनुसार क्यों नहीं बदलतीं ?

उत्तर : आचार्य गौड़ पाद कहते हैं,—"स्वप्न लोक में स्थित विचार तत्व अपने को दो भागों में बाँट देता है—एक ओर बाहर की वस्तुए होती है और दूसरी ओर व्यक्ति की आंतरिक इच्छाए

या भावनाएं आदि। इसके अतिरिक्त इस दशा में ऐसा लगता

है कि अन्तर्वर्ती विचार अपने ही नियंत्रण में है, परिवर्तनशील तथा तुलनात्मक रूप में अवास्तविक, जबकि उस दशा में बहिर्भूत वस्तुएं (जैसे–स्वप्नों की भय उपजाने वाली वस्तुएं) अपनी एक ऐसी स्थायी वास्तविकता रखती हैं जिस पर अपेक्षाकृत रूप में अधिक नियंत्रण नहीं रखा जा सकता।

अब यथास्थिति यह है कि जागृतावस्था के व्यक्ति के दृष्टि-कोण से स्वप्न-दशा के दोनों पक्ष यथार्थ एवम् अयथार्थ बहिरंगी तथा अंतरंगी, शुद्ध और सरल मानसिक विचार मात्र हैं और वे अपने सृष्टि रूप विचारों से भिन्न तथा उनके अतिरिक्त हैं। जागरण की दशा में लोग कठोर, स्थायी बाहरी वस्तुओं एवं अय-थार्थ अंतरंगी विचारों में भेद करते ही हैं, परन्तु आत्म-साक्षात्कार करने वाले मनुष्य के दृष्टिकोण से बहिर्भूत ठोस वस्तुएं एवं परि-वर्तनशील सूक्ष्म विचार दोनों ही स्वप्न की भांति तत्व-शून्य हो जाते हैं और जब तक उनकी आकृतियों का अस्तित्व बना रहता है तब तक वे उस पर अपनी ही वस्तुओं की भांति प्रभाव डालती हैं। यद्यपि अपनी इच्छा के अनुसार उनको बदला नहीं जा सकता है फिर भी वे अपने ही विचार जैसे लगते हैं। तुम्हारी बुद्धि इस बात की व्याख्या या स्पष्टीकरण नहीं कर सकती कि तुम्हारी देह पर बाल कैसे उग कर बढ़ते हैं? और चेहरे पर दमक कहाँ से आती है? फिर भी तुम बालों और अपने चेहरे की दमक का अनुभव तो करते ही हो। इसी प्रकार से एक जीवन युक्त प्राणी को जो अपने को सबकी अन्तरात्मा मानता है, प्रत्येक वस्तु अपनी ही माननी चाहिए। वह अपने शुद्ध, सम्पूर्ण रूप में प्रेम स्वरूप होता है, उसके लिए यथार्थ तथा आदर्श दोनों के ही रूप क्रमशः शुद्ध अद्वैत चेतना में विलीन हो जाते है।

आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।३।।

माशूक़ क़द दरख़्तों पै बेलों का हार है ।
नै नै ग़लत है, ज़ुल्फ़ का पेचां यह मार है ।।
वाह वा, सजे सजाए हैं, कैसा शृंगार है ।
अशजार में चमकता है खुश आबशार है ।।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।४।।

अशजार सर हिलाते हैं, क्या मस्तवार हैं ।
हर रंग के गुलों से चमन लाला ज़ार हैं ।।
भौंरे जो गूंजते हैं पड़े ज़र-निगार हैं ।
आनन्द से भरी यह सदा ओंकार है ।।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।५।।

गंगा के रू-सफ़ा से फिसलती न गर नज़र ।
लहरों पै अक्स मेहर का क्यों बेक़रार है ।।
विष्णु के शिव के घर का असासा यह गंग है ।
यां मौसमे-खिज़ां में भी फ़सले-बहार है ।।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।६।।

साक़ी वह मै पिलाता है, तुर्शी को हार है ।
दिलदारे खुश अदा तो सदा हम-कनार है ।।
वाह क्या मज़े से खाने को ग़म का शिकार है ।
दर्शन शराबे-नाब सुखन दिल के पार है ।।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।७।।

बाहर निगाह कीजिए तो गुलज़ार है खिला ।
अंदर सरूर की तो भला हद कहाँ, दिला ।।
कालिज क़दीम का यह सरे-मू नहीं हिला ।
पढ़ाता मारफ़त का सबक़ मेरा "यार" है ।।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।८।।

ऐ जां ! बेया बेया कि ईं दुनियाए दीगरअस्त ।
आबे-दिगर हवाए-दिगर, जाए-दीगरमस्त ।।
ख़ूबाने ख्वेश दूरो-दर जेह्ल अफ़गनंद ।
ख़ूबअस्तो-जेह्ल दूर कुनद जाय दीगरअस्त ।।
साधू फ़कीर का तो इसी पर मदार है ।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।९।।

मस्ती मुदाम-कार यही रोज़गार है ।
गुलबीं निगाह पड़ते ही फिर किस का ख़ार है ।।
क्यों, ग़म से तू निज़ार है क्यो दिलफ़िगार है ।
जब **राम** क़ल्ब में तेरे ख़ुद यारे-ग़ार है ।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है ।।१०।।

—:०:—

ॐ

गंगोत्री का रास्ता

केवल कमर पर कपड़ा ओढ़े राम चला जा रहा है और गा रहा है! क्या?——"ओं"

एक स्थान पर तो दस मील तक अत्यन्त ऊंची दीवारों की तरह एक दूसरे के आमने सामने पहाड़ों का सिलसिला चला गया है। इनके बीच में एक ओर पहाड़ से टकराती झकोले खाती गंगा बही जाती है, दूसरी ओर ढालू पहाड़ में एक पतली पगडंडी खुदी हुई है। रात के दो या तीन बजे का समय होगा, सन्नाटा छाया हुआ है। बादल घिरा हुआ है। पक्षी पंख नहीं मारता। ऐ लो! बिजली चमकी, बादल कड़का, वर्षा पहाड़ों से बल प्रयोग करने लगी। मार्ग पर पत्थर और वृक्ष गिरने लगे-अरा, रा, धम; अरा, रा, धम। राम के सिर पर छाता नहीं। पांव बिल्कुल नंगे हैं। हाथ मे छड़ी भी नहीं। गरम कपड़े का सहारा नहीं।

बफ़सुरदनम हमा तन अलम बतरदद आबला दरक़दम ।
चो गुबारे-नाला फ़सुर्दनम-चो सरिष्के-नंगे-रवानियम ।।१।।
न नशेमने कि कुनम मकां न परे कि बर परम अज़ मियाँ ।
न कुबी ब इस्वए-इम्तहां, सितम आशियाने-रहाईयम ।।२।।

अर्थ: (१) मुरझाने में तो यह सारा शरीर शोक स्वरूप है। चलते चलते पांव में छाले पड़ गये हैं, रोने के गुबार की तरह मेरा मुरझाना है। और लज्जा के आँसू की तरह मेरा टपकना (चलना) है।

(२) न कोई घोंसला (घर) है कि जहाँ ठहर जाऊं, और न पर ही हैं कि जिससे मैं उड़ जाऊं। ओ हो आश्चर्य (दुःख) है कि तू परीक्षा के नख़रे में मेरी मुक्ति होने नहीं देता।

दश्ते-पैमाई से है अपने बियाबां नाज़ा।
अपने पाबोस से है खारे-मुग़ीलां नाज़ां।।

यह वह स्थान है जहां दिन दोपहर को भी मनुष्य की गति (गुज़र) कम होती है। यहां अंधेरी रात में कौन चल रहा है? उसके सिवा और कौन होगा जो सुषुप्ति की घोर निशा में भी जागता है। सदोदितोऽहं, सदोदितोऽहं।

इसी दशा में चलते चलते टूटी हुई सड़क सामने मिलती है। मार्ग बंद है, परन्तु वह कौन सी रुकावट है जो राम को रोक सकती है। कांटेदार झाड़ियों को पकड़-पकड़ कर, पत्थरों को टटोल-टटोल कर राम पहाड़ के ऊपर चढ़ रहा है, जहां बकरी (अजा) की गति कठिन है, राम मौजूद है।

व जहाने-जलवा रसीदाअम, व हज़ार पर्दा दरीदाअम।
समरे-निहाले हक़ीक़तम, चमने-बहारे-ख़ुदाइयम।।१।।
सरे-काबा गरमे-फ़सूने-मन, दिले-दैर जोशशे-ख़ूने मन।
मग़ुजर ज़ सैरे-जनूने-मन, कि क़यामते, हमा जाइयम।।२।।

अर्थ: (१) अनुभव के संसार में मैं पहुंच गया हूँ, हज़ारों पर्दे फाड़े हैं, तत्व के पेड़ का मैं फल हूं और ईश्वरीय वसंत की वाटिका हूं।

(२) मेरे जादू भरे मंत्र से काबे में धूम है, अर्थात् मेरा ध्यान करते ही काबा का सर जलने लगता है। मन्दिर का दिल मेरे ख़ून का जोश है, अर्थात् देवताओं के दिलों में मेरा रुधिर जोश मारता है। मेरे जनून की सैर न कर, मैं हर जगह (काबा और दैर) की क़यामत हूं। अर्थात् मेरे दर्शन से सब नानत्व नष्ट हो जाता है।

पहाड़ की चोटी पर किस ज़ोर से ॐ! ॐ!! ॐ!!! की ध्वनि सुनाई दे रही है। अरे पिछली रात के सोने वालो! क्या यह कूक तुम्हारे कानों तक नहीं पहुँची? तुम्हारी नींद अभी तक नहीं खुली? बादलों जाओ, संसार भर में ढिढोरा फेर दो, ॐ! बिजली! दौड़ो। प्रकाश के अक्षरों में लिखकर दिखा दो, "ॐ"।

उत्तर में बादल गरज-गरज कर पत्थरों को जगाते हैं। बिजली वृक्षों और जानवरों को प्रकाश से जगमगा देती है। राम की आज्ञा को प्रकाश ने आंखों पर स्वीकार किया। आकाश ने सिर पर स्वीकार किया--"भारत जागा, जागा, जागा"।

फ़लक गुफ़्त अहसन मलक गुफ़्त, ज़ेह।

अर्थ : आकाश से ध्वनि आई, बहुत ख़ूब। देवता से ध्वनि आई, शाबास।

ऐ गुलामी! अरे दासपन! अरी दुर्बलता! अब समय है। बाँधो बिस्तर, उठाओ लता-पता। भागो, छोड़ो मुक्त पुरुषों के देश को।

बादल तुम्हारे शोक में रो भी रहे हैं। वह जाओ गंगा में, डूब मरो समुद्र में, गल जाओ हिमालय में।

इस भयानक और शंकापूर्ण अवसर पर राम निश्शंक भाव से मृत्यु को डाँट रहा है। क्या उसे प्राणों का भय नहीं है? जिससे कोई स्थान ख़ाली ही नहीं है, उसको भय कहाँ? मृत्यु की है शक्ति राम की आज्ञा के बिना दम मारने (श्वास लेने) की! राम का यह शरीर नहीं गिरेगा जब तक भारत सुधर न जायेगा।

यह शरीर कट भी जायेगा, तो भी इसकी हड्डियाँ दधीचि की हड्डियों की तरह किसी न किसी इन्द्र का वज्र बनकर द्वैत के राक्षस को चकनाचूर कर ही देंगी। यह शरीर मर जायेगा, तो भी उसका ब्रह्मवाण चूकेगा नहीं।

अश्वत्थामा के "ब्रह्मशर" की तरह राम का "ब्रह्मबाण" द्वैतदृष्टि और द्वैतज्ञान के वंश का बीज शेष नहीं छोड़ेगा। गर्भ में जो भेद-रूपी बच्चे,-कच्चे हैं, उनको भी उड़ा देगा।

इस शुद्ध फुरना के आगे कौन ठहर सकता है? यह ज्ञान गोला (Star Shell) ख़ाली जाने वाला नहीं। गधे के शिरवाले अहंकार रूपी रावन का बंद बंद जुदा।

पड़ा नफ़स के रावन को है हमसे काम नहीं।
जला के ख़ाक न कर दूं तो "राम" नाम नहीं॥
बयो ए सब्ज़ ख़ंगे-मन बिनह बर आसमां हा सुम।
बखेज़ ऐ मुर्दा दुनिया! कुम बइज़नी कुम बइज़नी कुम॥

अर्थ: ऐ मेरे सब्ज़ घोड़े (मन)! आ, आकाश पर अपनी टाप रख (अर्थात् लोक परलोक से ऊपर उठ)। ऐ मुर्दा (मृतक) सृष्टि! उठ, मेरी आज्ञा से उठ, मेरी आज्ञा से उठ।

प्रभात की वेला है। खुद-मस्ती में झूमता हुआ "राम" जा रहा है। किसी समय मौज में नाचने लग पड़ता है।

चारों ओर पहाड़ियों को सफ़ेद (बर्फ़ की) साड़िया ओढ़े देखकर मारे क्रोध के मुख तमतमाने लगा।—

"तुमने विधवा का वेष क्यों धारण कर रक्खा है? देखती नहीं हो, कौन आ रहा है?"

पहाड़ियों से ठंडी "आह" (शीतल वायु) निकलती है—

"हाय। रंगरेज़ जल गया, आज अभी तक नहीं आया।"

राम के दृष्टि उठाते ही काँपता-काँपता लाल रंगरेज़ आता है। तत्काल पहाड़ियों के दुपट्टे भगवे हो गए।

रंग दे रे रंगरेज़! चुनरिया रंग दे।
माही की चदरिया हमरी चुनयरिा दोनों को जोगिया रंग दे।
रंग दे रे रंगरेज़! चुनरिया रंग दे॥
मैं पिया तोरे रंग में समाय रही।
और रंग मोहे काहे प्रिय होवे,
मैं पिया तोरे रंग में समाय रही।
रंग वही रंगरेज़ वही, मैं चटक चुनरिया रंगाय रही।
मैं पिया तोरे रंग में समाय रही॥
हमरे पिया हम पिया की री सजनी,
पिया पर जियोड़ा गंवाय रही।
मैं पिया तोरे रंग में समाय रही॥

हिमालय से (भेजे हुए) पत्र

हिमालय दृश्य पहिला

वसिष्ठ-आश्रम

आज सन्ध्या समय वर्षा रुक गई। मेघ, जो कि समस्त प्रकार के विचित्र-विचित्र रूप धारण कर रहे थे और भिन्न-भिन्न अंश की उंचाई के थे, भिन्न-भिन्न दिशाओं में कुछ बिखर से गये। वह प्रकाश जो बादलों में से फूटता और प्रतिबिम्बित होता था, सारे दृश्य को उसने तेज का एक प्रज्वलित मण्डल बना दिया था। तब आकाश मण्डल के खिलाड़ी बच्चों ने सब प्रकार के आकर्षक रंग धारण कर लिये। कौन सा चित्रकार ऐसे रंग दे सकता था? कौन सा प्रेक्षक इन सब चलती हुई छाया और रंगों का निरीक्षण कर सकता था? तुम जहां चाहो, देखो, नेत्र नारंगी, बैंगनी, लाल, गुलाबी रंगों और उन के अकथनीय प्रकार से मुग्ध हो जाते हैं। यद्यपि इनके बीच-बीच सदैव सुहावनी, काली, नीली भूमि कहीं-कहीं दीखती हैं। उज्जवल शोभा आनन्द उमड़ा लाती है, और राम के नेत्र में आनन्दाश्रु दिखाई देते हैं। बादल उड़ जाते हैं, किन्तु एक स्थिर संदेह पीछे छोड़ जाते हैं। वे ईश्वर से एक अमृत का प्याला लाए थे, और उसी के पास वापिस लौटा ले गए। सब आकर्षक पदार्थ वास्तव में ऐसे ही होते हैं। वे दिखाई देते हैं, एक क्षण भर राम का महत्व दर्शाते हैं, और फिर मिट जाते हैं। वह

निस्सदेह पागल है जो इन चलायमान मेघों के साथ प्रेम करता

है। और तब भी लोग इन देखने मात्र (माया रूपी) पदार्थों के अस्थिर बादलों को ज़ोर से पकड़े रखने का यत्न करते हैं, और उन्हें जाते हुए देख कर बच्चों की भांति रोते हैं। कितना मनोरंजक (दिलचस्प) है! ओह! मैं हंसी को दबा नहीं सकता।

अन्य लोग फिर इन बादलों (नाम रूपी पदार्थों) के नाशवान हेर फेर के लघुत्तम विस्तार को बहुत बारीकी से देखने और श्रद्धा-पूर्वक निरीक्षण (नोट) करने में अपना समय व्यय करते हैं। आह! यह कैसे जीव हैं। उनके चारों ओर तेज की बाढ़ है, और उस पर भी वे प्रकाशार्थ अपनी भीषण पिपासा को बुझाने का प्रयत्न नहीं करते। ये वही लोग हैं जिन्हें वैज्ञानिक और दार्शनिक कहते हैं। बाल की खाल ही निकालने में लगे रहने के कारण वे उस प्रियतम के तेजस्वी सिर को नहीं देखते कि जिस में बाल लगा हुआ है। ओह, मैं अपनी हँसी को दबा नहीं सकता। वही सुखी है जिस की दृष्टि को नाम रूप के बादल रोक नहीं सके, जो सदैव आकर्षक प्रकाश द्वारा उसके वास्तविक केन्द्र (आत्मा) की खोज में लग सका है, और जिसका प्रेम अन्तिम ध्येय (ईश्वर) तक पहुंच चुका है, अर्थात् वे रास्ते में ही उन स्रोतों की नाईं नष्ट नहीं हो जाते कि जो समुद्र तक पहुँचने के पूर्व ही सूख जाते हैं। इन सुन्दर रिश्तों-नातों (सम्बन्धियों) को दूर जाना होगा। वे केवल चिट्ठीरसा होते हैं। प्रभु का प्रेम-पत्र जो वे तुम्हारे हेतु लाए हैं, उसे खोना मत दियासलाई (जान) शीघ्र जल कर बुझ जाएगी, किन्तु सुखी वही है जिसने सदैव के लिए उससे अपना दिया जला लिया है। भोजन और भाप की सामग्री शीघ्र ही समाप्त हो जाएगी किन्तु वही जहाज़ भाग्यवान है जो उस भयानक हानि के पूर्व ही घर (बन्दर स्थान) पर पहुंच जाता है। वही

मनुष्य जीवित रहता है कि जो प्रत्येक पदार्थ चाहे वह कुछ भी हो, ईश्वर तक पहुँचने की एक सीढ़ी या ईश्वर को देखने का एक दर्पण बना सकता है। संसार अपने समस्त तारागण, पर्वतों, नदियों, राजाओं अथवा वैज्ञानिकों इत्यादि के सहित उसी (मनुष्य) के लिये बनाया गया था। निस्संदेह यह ऐसा ही है, मैं तुम से सत्य कहता हूँ।

खेत और दृश्य, जहाँ शहरों की धूम्र-पूर्ण, व्याधिमय सड़कों की अपेक्षा उनमें मस्तिष्क को ताज़ा करने वाली मनोहरता व सुन्दरता है, वे अपनी समालोचना या प्रशंसा से मनुष्य में संकुचित भाव नहीं उत्तेजित करते, और न वे उसे कोने (शरीर) में ही हांक देते है। मनुष्य उनकी उपस्थिति में भली-भांति एक साक्षी (प्रकाश) की स्थिति में रह सकता है। आन्तरिक दृष्टि द्वारा देखने से प्रतीत होता है कि वनस्पति वर्ग में उतनी ही या शायद अधिक समर, संग्राम और अशान्ति इत्यादि रहती है जितनी कि सभ्य समाजों में, परन्तु उनका संग्राम तो वहां तक सुखप्रद व मनोहर होता है जहाँ तक देवदार, शाहबलूत, सनोबर के मध्य मनुष्य अपने आप को उन्हीं में से एक नहीं समझता किन्तु सरलतापूर्वक अपने आप को एक साक्षी प्रकाश की भांति अलग रख सकता है। वह मनुष्य जो कि नगर की भरी हुई गलियों में भी वन में किसी एकाकी विचरने वाले व्यक्ति के समान रह सकता है, जो अपने को शरीर से अभेद न करके बल्कि उसे बूटों में से एक बूटा समझकर अपने आप (आत्मा) को उससे असंग साक्षी भान कर सकता है, उसके लिए "यह विश्व ईडन का उद्यान (Garden of Eden) है" इस से भला कौन इन्कार कर सकता है? ऐसे ईश्वरीय जीवन वाले पुरुष संसार की ज्योति हैं। वह ज्योति जो कि असंग

साक्षी की भांति दिखाई देती है वह उस सबकी जान (प्राण) है जिसको कि वह देखता है।

जीवन स्रोत बह रहा है। ईश्वर के अतिरिक्त और कोई अस्तित्व नहीं रखता। मैं किससे भयभीत और किस से लज्जित होऊँगा। समस्त जीवन मेरे ईश्वर का जीवन है, कोई दूसरा नहीं, वह और मैं 'वही' है। समस्त संसार मेरा अपना हिमालय का वन है। जब प्रकाश की प्रभात होती है, पुष्प हंसने (खिलने) लगते हैं, और स्रोत प्रसन्नतापूर्वक नाचने लगते हैं! आह, वह प्रकाशों का प्रकाश! प्रकाश का सागर बह रहा है। परम आनन्द की वायु के झकोरे ले रही है।

इस सुन्दर (विश्वरूपी) वन में मैं हंसता और गाता हूँ, मैं ताली बजाता और नाचता हूँ।

क्या वे ठट्ठा व बोली मारते हैं। वह तो यों ही पवन का बहना है। क्या वे उपहास उड़ाते है? वह तो पत्तियों का खड़-खड़ाना है। क्या मैं अपने ही जीवन से ढक लिया जाऊगा जो कि स्रोतों, देवदारों, पक्षियों और पवनों में धड़क रहा है?

I dance, I dance, I laugh and dance.
The stars I raise as dust in dance.
No Jealousy. no fear,
I'm the dearest of the dear.
No sin, no sorrow.
No past, no morrow.
No rival, no foe,

No injury, no woe.
No, nothing could harm me.
No. nothing alarm me,
The soul of all
The nectar fall
The sweetest self
Yea ! health itself,
The prattling streams
The happiest dreams,
All myrrh and balm,
Rawan and Ram
So pure and calm
Is Rama, is Rama.
The heavens and stars,
Worlds near and far,
Are hung and strung
On the tunes I sung.

अर्थ : मैं नाचता हूँ, मैं नाचता हूँ, मैं हंसता हूँ और नाचता हूँ।

तारे मेरे नाच की धूल से उठते हैं।
मुझे न कोई ईर्ष्या है, न भय,
मैं प्यारों का प्यारा हूँ।
मुझमें न पाप है, न शोक,

न भूत है, न भविष्य,

न रक़ीब (rival) है, न शत्रु,
न दुःख, न क्लेश।
नहीं, कोई वस्तु मुझे हानि नहीं पहुंचा सकती,
नहीं, मुझे कोई वस्तु भयभीत नहीं कर सकती।
यह सब की आत्मा,
यह अमृत वर्षा,
यह मृदुतम आत्मा
हाँ, यह स्वयं स्वस्थ रूप
ये कल-कल करती नदियाँ
ये अति आनन्द दायक स्वप्न,
यह समस्त रस गंध और मरहम,
वह रावण और राम,
अति पवित्र और शान्त
सब राम हैं, राम।
ये आकाश और तारे,
ये दूर, नेड़े जग सारे,
मेरे गायन की तानों पर
पिरोये और लटके हुए हैं।

बसून का शिखर—(वासिष्ट आश्रम)

चन्द्रमा चमक रहा है कि मानो रूपहली शान्ति को फैला रहा है। चन्द्रिका राम के कुशासन पर भली भाँति थिरक रही है। असाधारण रीति से लम्बे और श्वेत गुलाब के झाड़, जो कि इस पर्वत पर निर्भयता के साथ स्वतंत्रता पूर्वक जंगली ढंग पर उग रहे हैं, उन की छाया चाँदनी रूपी बिछौने का बाधक बन इस प्रकार

कलोल करती हुई फटफटा रही हैं, कि मानो वे छायायें उसे कोमल चन्द्रिका के सुन्दर तुच्छ स्वप्न हैं कि जो (चन्द्रिका) राम के सम्मुख इतनी शान्ति से सो रही है।

सो जा मम शिशु ! सो जा!
और सुन्दर स्वप्न से मुस्का !

यमनोत्री, गंगोत्री, सुमेरु, केदार और बद्री की बर्फ़ीली चट्टानें यहाँ इतनी समीप हैं कि मानो कोई उन तक हाथ बढ़ाकर पहुँच सकता है। वास्तव में यह प्रज्वलित मणि मुकुट शिखरों का वृत्तार्द्ध (Semi-circle) इस वासिष्ट आश्रम को एक जौहरी के मुकुट के सदृश सुसज्जित कर रहा है। उनके खेत बर्फ़ीले शिखर सब इस चन्द्रिका के दूध रूपी-सागर में नहा रहे हैं और शीतल पवन के रूप में उन की गहरी 'सोऽहम' रूपी श्वासें लगातार यहाँ पहुँच रही हैं।

इस पर्वत पर का सब बर्फ़ पिघल गया है और इस समय तक शिखर के पास चौड़े चौड़े खुले हुए खेत नीले, गुलाबी, और श्वेत रंग के पुष्पों से नितान्त ढके हुए हैं जिन में से कुछ तो बहुत सुगन्धित हैं। लोग यहाँ आने से डरते हैं क्योंकि उनका विश्वास है कि यह स्थान 'परियों का उद्यान' है। यह विचार देवताओं के इस आराम बाग़ को उन अधर्मी पुरुषों के आगमन से बचा देता है कि जो प्राकृतिक सौन्दर्य के बिगाड़ने वाले हैं। राम इस पुष्पबाटिका में बड़ी सावधानी से धीरे-धीरे चलता है कि कहीं कोई नाज़ुक हंसता हुआ फूल उसके कठोर चरण पात से नष्ट न हो जाय।

कोयल, फ़ाख्ता और अन्य बहुत से गाने वाले पक्षी प्रातःकाल राम का आदर सत्कार करते हैं, कभी-कभी प्रातः एक विशाल अजगर कन्दरा की छत के पास आता है और अपनी अजीब रहट (Persian wheel) सरीखी ध्वनि के गान से राम की दावत करता है। शाही गरुड़, ऊँचे उड़ते और दोपहर को काले मेघ को छूते हैं। क्या ये वही विष्णु को अपनी पीठ पर ले जाने वाले गरुड़ नहीं हैं ? एक रात्रि को एक शेर राम के पास से ही झपटता चला गया।

उस सामने वाले पर्वत-सरोवर के आस-पास इन जंगल के देवों (वृक्षों) की कैसी सुन्दर बस्ती है। कौन सा सम्बन्ध उन्हें मिलाता है? उनका आपस में कोई सम्बन्ध नहीं है, न कोई व्यक्तिगत रिश्ता है। उनका मानो एक सामाजिक संगठन है, परन्तु केवल इतना ही कि वे अपनी जड़ें उस एक ही आत्मा रूपी सरोवर में भेजते हैं (अथवा उनकी जड़ें उसी एक सरोवर से निकलती हैं) उसी एक ही जल का प्रेम उन्हें पास-पास रखता है। हमें भी उसी सत्य की भक्ति में, स्वर्ग में, हृदय में राम में मिलना चाहिए।

जग देवी का सब्ज़ मैदान

अथवा जगदेवी तृणभूमि (मृगराज)

वर्षा से बसून गिरि-शिखर के पास की सब गुफाओं के भर जाने के कारण राम को उस शिखर पर के परियों के बाग़ को छोड़ना पड़ा। वह नीचे एक बहुत ही प्रिय ऊंचे घासदार मैदान पर उतर आया, जहां सदैव वायु चलती रहती है।

श्वेत और पीत चमेली सहित अनेक अन्य सजाति पुष्पों की झाड़ियाँ यहां पर बहुत उगती हैं। झलेवर (straw-berries) तथा लाल गुलाबी बेर (rose berries) यहां पके हुए बहुत अधिकता से पाये जाते हैं। नई बनी हुई कुटी के एक ओर दो बहती हुई नदियों के बीच एक साफ़ सुथरा हरा मैदान बहुत दूर तक धीरे-धीरे चढ़ाई-दार ढाल में चला जाता है। सम्मुख एक मनोहर दृश्य (भू-प्रदेश, landscape) बहता पानी, हरी कोमल पत्तियों से ढकी पहाड़ियाँ, और आनन्दप्रद वन और मैदान हैं। साफ़ चिकने पाषाणखण्ड राम के लिए मैदान में शाही मेज़ों और बैठने के आसन का काम देते हैं। यदि छाया चाहिए, तो वृक्षों के विशाल कुन्ज बहुत सुखप्रद स्थान देते हैं।

(वर्षा)

वनवासी गड़रियों ने एक कुटी तीन घण्टे के अन्दर तैयार कर दी। उन्होंने अपनी शक्ति भर उसे वर्षा से सुरक्षित बना दिया था। रात में, भयानक वर्षा का तूफ़ान आया। तीन-तीन मिनट पीछे बिजली-चमकती और फिर बिजली गर्ज उठती थी, जिससे हर बार पर्वत हिल जाते और काँपने लगते थे। यह इन्द्र-वज्र लगातार तीन घण्टे तक अपनी चोट करता रहा। जल मूसलाधार गिरा। बेचारी कुटी टपकने लगी। वर्षा के तूफ़ान के लिए उसकी रुकावट इतनी निष्फल हुई कि सारा काल पुस्तकों को भीगने से बचाने के लिए ही एक छाता खोले रखना पड़ा। वस्त्र सब भीग गये। भूमि घास से ढकी होने के कारण कीचड़ वाली न हुई, किन्तु तब भी वह छत से लगातार टपकती हुई जल की बूंदों को सन्तोष पूर्वक पीती रही। राम के

लिये उस समय प्रायः बहुत कुछ 'मछली या कछुए' के जलमय जीवन का अनुभव अपना एक विशेष आनन्द रखता है।

"ज़ि उम्र यक शब कमग़ीरो ज़िन्हार मखुफ्त"

अनुवाद : तू अपने जीवन के पूरे अन्दाज़े (आयु) में से एक रात कम गिन और बिलकुल मत सो।

उस आंधी को धन्यवाद जिसने हमें ईश्वर की संगति में रक्खा।

"महे चन त्वाद्रिवः परा शुल्काय देयाम्।
न सहस्त्राय नायुताय बज्रिणो न शताय शतामघ।।

अनुवाद : हे पर्वतों के हिलाने वाले! हे गर्जन करने वाले! और हे अगणित कृपा वाले प्रभु! न हज़ार के लिए, न दस हज़ार के लिए, बल्कि उससे भी कई सौ गुणा अधिक के लिए, मैं तुझे किसी भी मूल्य पर नहीं त्याग सकता।

"यच्छ्कासि परावति ,यदर्वावति वत्रहनन्।
अतस्त्वा गोर्भिद्यु गदिन्द्र केशिभिः सुतावा अविवासति।।"

राम का अपना अर्थ : हे शक्र (सर्व शक्तिवान इन्द्र)! चाहे तू दूर हो (गरजते हुए मेघों में), या हे वत्र-घातक (शंका-नाशक) चाहे तू पास ही (चलती हुई वायु में) हो; यहां स्वर्ग तक छेद जाने वाले गीत (चुभने वाली प्रार्थनाए) तेरे लिए लम्बे अयाल के घोड़ों की भांति (सवार होने के लिए) भेजे जाते हैं। उसके पास शीघ्र आओ जिसने (अपने अस्तित्व का) रस तेरे लिए निचोड़ लिया है। आ, मेरे हृदय में बैठ, और मेरे जीवन की मदिरा (सोम) पान कर।

मनुष्य अपना सारा समय इन क्षुद्र भय और फ़िक्रों में ही नष्ट करने के लिए नहीं बना है, कि 'हाय मैं कैसे जीवित रहूंगा, और ओह ! मेरा क्या होगा, और ऐसी ही सब निरर्थक और मूर्खता पूण बातें।" उसे कम से कम इतना स्वाभिमानी तो अवश्य होना चाहिए जितना स्वाभिमान मछलियों, पक्षियों और वृक्षों तक को भी होता है। वे आंधी या धूप की शिकायत नहीं करते, वरन् प्रकृति से एक होकर जीवन व्यतीत करते हैं। मेरी आत्मा मैं स्वयं ही झड़ी लगाने वाली वर्षा है। मैं चमकता हूं। मैं गरजता हूं। मैं कैसा सुन्दर डरावना और बलवान हूं। शिवोऽहम के गीत हृदय सेवेग के साथ निकलते हैं।

"आमेखलं सन्चरतां घनानां छायामधः सानुगतां निषेव्य ।
उद्वेजिता वृष्टिभिराश्र यन्ते श्रंगाणि यस्यातपवन्ति सिद्धाः ।।
भागीरथी निर्झर शीकराणां वोढ़ा मुहुः कम्पित देवदारु : ।
यद्वापुरन्विष्ट मृगैः किरातैः आसेव्यते भिन्न शिखण्डि वर्है : ।।"

कोई भी दिन या रात्रि बिना जल की एक आध बौछार के नहीं व्यतीत होती। और जैसा कि ऊपर दिये हुए कालिदास के श्लोक में वर्णित है, राम प्रतिदिन जब पहाड़ी पर चढ़ता है तो बौछारों से पकड़ लिया जाता है। परन्तु अड़ोस-पड़ोस में गुफाओं के न होने के कारण उसे उन्हीं मेघों को अपना छाता बनाना पड़ता है, और बौछारों को अपनी ही समझ कर उनसे आनन्द लेना होता है।

दूसरे श्लोक में वर्णित सरोवर और देवदारु के वृक्ष धन्य हैं, जो कि यद्यपि थर्राते और कांपते हैं परन्तु गंगाजल की फुहार की

शीतल बौछार के लिए अपने शरीर को ढालवत् करते हैं।

हमारे लिए इस भयंकर शीत और तूफ़ानी सौन्दर्य के सम्मुख अपनी छाती खोलने का कैसा सुन्दर सौभाग्य है।

सहस्त्र तारू ताल की यात्रा

जुलाई १९०६

"सप्तर्षि हस्तावचितावशेषाण्यधो विवस्वान् परिवर्तमानः।
पद्मानि यस्याग्रसरोरुहाणि प्रबोधयत्यङ्घ मुखैर्मयूखैः॥"

So far aloft, amid Himalayan steeps,
Couched on the trauquil pool the lotus sleeps
That the bright Seven who star the northern sky
Cull the fair blossoms from their seats on high,
And when the sun pours forth his morning glow
In streams of glory from his path below,
They gain new beauty as his kisses break,
His darling's slumber on the mountain lake.

अर्थ : इतनी दूर हिमालय की ढालों के बीच-बीच
शान्त सरोवर की शय्या पर कमल शयन किए हुए हैं।

जिससे प्रकाशमान् सप्त ऋषि जो उत्तरी आकाश मंडल में चमक रहे हैं,

अपने ऊँचे स्थानों से सुन्दर कलियों को चुन रहे हैं।

और जब सूर्य अपनी प्रभात की प्रभा को
अपने मार्ग से नीचे की ओर तेज धाराओं द्वारा डालता है।

और यों ही उसका चुम्बन पर्वत की झील पर शयन किए हुए कमल की प्यारी निद्रा को तोड़ता है, तो उन कलियों में एक नवीन सुन्दरता आ जाती है।

2

Diverting the thoughts from objects of sense,
Like horses whipped when going astray;
Controlling the thoughts with Wisdom's reins.
The sages bring them home to Om;
That Home or Om art thou, no doubt the same.

3

The manifold changes—waking, sleep,
Boyhood manhood, health, disease,
Failure, succes, gain or loss,—
Are flowers simply strung on thread;
That changeless thread, the one in all,
Is Atman pure without a knot,
That Atman puve art thou, the same, the same.

4.

That Being shining in the Sun is no other than myself;
That Self in me is certainly the Being shining in the Sun;
By such texts the Vedas preach
The light of lights, the Self-Supreme;
That self art thou; yea ! same, the same.

5.

Anxieties, doubts and fears and all
Temptations, dangers, weakness are
Dispelled and driven out like the dark,
Of thous and years when Light appears.

The Light to drive out sorrow, sin,

Is eonsciousness of Self within
That Consciousness or self art thou,
Indeed the same, the same,

6.

The same that works thy eyes and hands
The same doth move what by thee stands,
The One within is all without,
That One does bring what eomes about.
No foreign force, no foe, no other
Exists by thee whatever
Is, art thou; verily the same, the same.

अर्थ :—पृथ्वी, आकाशों और पशुपक्षियों को रचकर कौन उनमें प्राग और आत्मा बन कर प्रवेश करता है ?

और शरीर तथा मन के कोश से भक्ति और ज्ञान द्वारा कौन प्रकट होता है ?

वही तत्व जो नाम रूप धारण किये हुए है ।

वही सत्य स्वरूप है, वही तू है, वही तू है ।

(२)

इन्द्रियों के विषयों से वृत्तियों को ऐसे हटा कर

जैसे कुमार्ग-गामी अश्व को कोड़ा लगाकर सनमार्ग में लगाया जाता है ।

और वृत्तियों को बुद्धि की लगामों से वश में करके ऋषि लोग उनको निज धाम रूपी ॐ में लाते हैं ।

वह धाम या ॐ निश्चय करके तू ही है, तू ही है ।

(३)

नाना प्रकार के परिवर्तन, अर्थात् जाग्रत, स्वप्न
बाल्यावस्था, युवावस्था, स्वास्थ्य, रोग, असफलता, सफलता,
लाभ या हानि,—
धागे पर पुरोये हुए पुष्प मात्र है।
वह निर्विकार धागा, जो सबमें एक ही है,
विना ग्रन्थि के पवित्रात्मा है।

(४)

वह शुद्धात्मा तू है, वही तू है, वही तू है।
वह **पुरुष** जो सूर्य में प्रकाशमान है, मेरे से भिन्न नहीं है।
मुझ में आत्मा निःसन्देह वही है जो सूर्य में प्रकाशमान पुरुष है;
ऐसे वाक्यों द्वारा वेद शिक्षा देते हैं,
हे ज्योतियों की ज्योति, परमात्मा !
वह आत्मा तू है, हाँ वही तू है, वही तू है।

(५)

जब आत्म-ज्योति उदय होती है, तो हजारों वर्षों के
अन्धकार के समान चिन्ता, संशय, भय और
समस्त लोभ, संकट, दुर्बलता एक दम हट कर दूर हो जाती है।
शोक और पाप को निवारण करने वाली ज्योति अन्तरात्मा का
ज्ञान है।
वह अन्तरात्मा या आत्मज्ञान तू है,

निःसंदेह वही तू है, वही तू है।

(६)

वह जो तेरे चक्षु और पाणि को चलाता है,
वही तेरे समीपस्थ वस्तुओं को हिलाता है।
वही एक भीतर और बाहर है।
और जो कुछ होता है, वही एक करता है।
न कोई अन्य शक्ति है, न शत्रु है।
जो कुछ भी स्थित हैं तेरे से भिन्न नहीं ।
वही तू है, ठीक वही तू है, वही तू है।

जब संसार को परमात्म स्वरूप की दृष्टि से देखा जाये तो समस्त जगत सौन्दर्य का बहाव (उत्सर्ग), प्रसन्नता का प्रकटीकरण तथा परम-आनन्द की वर्षा सा प्रतीत होता है। जब परिच्छन्न दृष्टि बन्द हो जाती है, तो कोई पदार्थ कुरूप नहीं रहता। जब प्रत्येक वस्तु मेरा अपना ही आत्मा है, तो कोई वस्तु माधुर्य स्वरूप के अतिरिक्त दूसरी हो कैसे सकती है ? आत्म ही आनन्द स्वरूप है, अतः आत्मानुभव ऐसा है जैसा कि समस्त आनन्द घन विश्वका अनुभव अथवा प्रकृति की शक्तियों का अपने ही हाथ पैर समझना और विश्व को अपना ही प्यारा आत्मस्वरूप अनुभव करना है।

ओ आनन्द! तुझ से इतर कुछ नहीं।

"No warder at the gate
Can keep the *Jnani* in;
But like the sun over all
He will the castle win
And shine along the wall".
He waits as waits the sky

Until the clouds go by,
Yet shines serenely on
With an eternal day
Alike when they stay.

अर्थ :–"कोई द्वारपाल ज्ञानी को भीतर नहीं रोक सकता। वह सर्वोपरि सूर्य के समान दुर्ग पर विजय पा लेगा, और उसकी भीतों पर प्रकाश डालेगा।

वह ऐसे बाट देखता है जैसे कि आकाश
मेघों की निवृत्ति तक देखता रहता है,
तथापि शान्तिपूर्वक
वह अक्षय दिवस के साथ
उन (मेघों) की उपस्थिति
और निवृत्ति में समान चमकता है।"

हे भगवान! विश्व का शासन कौन करता है? ईश्वर के अतिरिक्त और कोई नहीं। क्या कोई बात ईश्वरीय नियमों के विरुद्ध हो सकती है? कभी नहीं। सब ठीक है। उन्हें चाल-बाज़ियों, उपायों और साधनों की शरण लेने दो जिनके लिए संसार वास्तविक है। ईश्वर है, और ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ नहीं है! यही उनकी महिमा है।

यदि मन में एक पल मात्र भी शरीर रक्षा का भाव आ जाता है, तो इस देह और मन दोनों को क्षीण (भस्म) कर दो। मेरे शरीर करोड़ों हैं, मेरा आत्मा ईश्वर है, उसे रक्षा की आवश्यकता नहीं।

वाहरी चट्टानें कोई ऐसी नहीं जो टूटें। केवल मैं ही एक चट्टान हूँ, विश्व की चट्टान हूं।

अल्प दृष्टि वाले अदूरदर्शी लोगों के झिलमिलाते हुए तारों को हमारा ध्यान तनिक भी विचलित न करने देना चाहिए।

One person saw a dream, a nightmare
His neighbours'gan to scream ! Look there !
He weeps at no disaster,
I can't suppress a laughter.

अर्थ : किसी मनुष्य ने एक भयानक स्वप्न देखा उसके पड़ोसी चिल्लाने लगे, देखो! देखो!!

वह व्यर्थ रो रहा है,
मैं हंसी नहीं रोक सकता।

यदि कभी कोई ऐसा व्यक्ति हुआ है कि जो सब जीवों को अपने अन्तः हृदय से अपने ही आत्मा की नाईं प्यार करता है तो वह **राम** है। सम्भव है कि मेरे बच्चे मुझे न समझें किन्तु मैं तब भी उनका अपना शान्त, प्यारा और पवित्र आत्मा रूप **'राम'** हूं।

—:o:—

पत्र-मंजूषा

कैसिल स्प्रिंग्स, कलीफोर्निया
११, जून १६०३

श्री मती वेलमैन (सूर्यानन्द) के नाम

मरे प्रियतम प्यारे, आप ।

क्या कुछ लिखने और कहने की ज़रूरत है ? राम सब कुछ जानता है, अर्थात् तुम सब कुछ जानते हो । किन्तु फिर भी राम तुम्हें उन बातों के बारे में कुछ बतावेगा, जो यहाँ हाल ही में घटी हैं, और राम को अति सुखदायक हुई । राम को हर बात से आनन्द मिलता है ।

१६ मई को जब राम नदी तट पर एक चट्टान पर पड़ा हुआ था, सियाटल (नगर) से एक मित्र द्वारा अचानक भेजा हुआ एक बड़ा ही सुन्दर झूला लाकर डा० हिलर के स्थानीय मैनेजर ने राम को दिया । वह तुरन्त सिन्दूर (बलूत) के एक हरे और देवदारु के एक लाख वृक्षों के बीच में ऊंचे पर डाल दिया गया । बुलबुलाती ख़ुशी और उमंगती हँसी के साथ राम पालने में लोटने लगा । सुगन्धित, मन्द झकोरे राम को झुलाने लगे । नदी अपनी मधुर ध्वनि से बह रही थी । राम ने ख़ूब क़हक़हे लगाये । तुम ने उसका हंसना सुना था ? राम जिस समय झूल रहा था एक चहकती हुई 'रोबिन' चिड़िया ऊपर से ताक रही थी । वह शायद राम से डाह कर रही थी । यही बात है ? नहीं ऐसा नहीं हो सकता ।

प्रत्येक ,रोबिन, गौरैया, या बुलबुल राम को अपना ही जानती है। कुछ भी हो, अतिशय भीतरी प्रसन्नता को इधर-उधर नाच कूद और किलोल करके निकाल देने के निमित्त कुछ देर के लिए झूले से राम के उतर आने के अवसर में मनोहर 'रोबिन' ने दो एक पेंग झूल लेने का सुख लूटा। कहो ! राम की छोटी चिड़िया और फूल खेलंदड़े, मौंजी और स्वाधीन नही है ?

२० मई दोपहर—संयुक्त राज्यों के राष्ट्रपति उत्तर जाते हुए कुछ देर के लिए मार्ग में 'स्प्रिंग्स' में ठहरे। 'स्प्रिंग्स कम्पनी' की मुख्य कार्यकर्ता महिला ने एक टोकरी सुन्दर फूल उन्हें भेंट किये। इसके बाद ही उन्होंने सादर, प्रेमपूर्वक और प्रसन्नता से **'भारत की ओर से निवेदन'*** राम का उपहार स्वीकार किया। उन्होंने बराबर इस पुस्तिका को अपने दाहिने हाथ में रक्खा। जनता के सलामों के उत्तर देने में पुस्तिका स्वभावत: तथा अनायास कम से कम सौ बार उनके माथे में लगी। गाड़ी चलने पर वे अपने दर्जे में ध्यान से पुस्तिका पढ़ते देखे गये, और छूटती हुई गाड़ी से एक बार फिर उन्होंने राम के प्रति धन्यवाद का संकेत किया।

किन्तु देखो ! राम ने राष्ट्रपति से काव्यमय झूले के एक दो पेंगों का सुख लूटने को नहीं कहा। अनुमान कर सकते हो, क्यों नहीं ? कृपया अनुमान करो। अच्छा, तुम कुछ बताते नहीं हो, इसीलिए राम तुम्हें बताये देता है। कारण बहुत ही साफ़ है। स्वतंत्र कहलाने वाले अमेरिकनों का राष्ट्रपति राम की चिड़ियों और पवन की तुलना में रुपये में कौड़ी भर भी स्वतंत्र नहीं है।

---

* स्वामी राम का एक व्याख्यान जो अमेरिका में एक पुस्तिका के आकार में छपा था।

राष्ट्रपति को जाने दीजिये। तुम स्वतंत्र हो सकते हो, उतने ही स्वतंत्र जितना राम है, और पवन तथा प्रकाश को अपना भक्त, सेवक बना सकते हो। राम हो जाओ, और राम तुमको सर्वस्व दे डालेगा—सूर्य, तारागण, समुद्र, मेघ, पहाड़, वन और क्या नहीं ! हर एक चीज़ तुम्हारी हो जायेगी। क्या यह लाभ का सौदा नहीं है ? प्यारे, क्या बात ऐसी नहीं है ? कृपा करके हर एक चीज के अधिकारी बनो।

ऊषा के चुम्बनों का जगाया, मन्द-सुगन्ध पश्चिमी झकोरों की गुदगुदी का हँसाया, गाती चिड़ियों के मधुर गीतों का दुलराया राम सबेरे चार बजे पहाड़ों की चोटियों और नदी तट पर टहलने जाता है।

आओ हम साथ हँसें, हँसें, बार बार हँसें। मेरे बच्चे, सूर्य ! आ ! राम के निडर मुस्कराते हुए नयनों से नयन मिला और राम तथा प्रकृति के निकट वास कर। मैं स्वयं समाधि हूँ।

तुम्हारा आत्मा,
राम।

टेहरी ई० १९०२

श्री स्वामी शिवगणाचार्य जी,

किशनगढ़ ।

नारायण,

वैद्यों का कहना है कि जब तक भीतर से भूख न लगे हमें कोई वस्तु न खानी चाहिए, वह चाहे जितनी स्वादिष्ट और उपकारी हो और हमारे मित्र तथा सम्बन्धी उसे खाने को हमसे कितना आग्रह क्यों न करें। यदि मैं तुरन्त चल पड़ूं तो आपकी और किशनगढ़ के सुयोग्य प्रधान मंत्री दोनों की संगति का सुख लूटने और आपकी गंभीर सलाहों से लाभ उठाने का बहुत ही अच्छा अवसर है। किन्तु मेरी भीतरी वाणी मुझे रुकने की आज्ञा देती है, साथ ही पूर्व सूचना भी मिल रही है कि जब मैं पूरी तरह से तैयार हो जाऊँगा, अधिकतर अच्छे अवसर हाथ लगेगें। अपनी पहले की असफलताओं से—यदि उन्हें असफलतायें कह सकते हैं—मैं ज़रा सा भी निराश नहीं हुआ हूं। मुझे पूरी आशा है कि मेरा भावी जीवन-क्रम पूरा सफल होगा। मैं ठीक यहाँ वही कर रहा हूं, जो किशनगढ़ में हम लोगों की मित्र-भावपूर्ण सलाह का नतीजा होता। निस्संदेह, अनुकूल अवसरों से लाभ उठाने की ताक में हमें हमेशा रहना चाहिए। किन्तु हमें अधीर भी न होना चाहिए। आवश्यकता है एक मात्र काम की। अपने देशवासियों में काम करने की शक्ति या उत्साह फूंकने के लिए मुझे खुद संचित उद्योग-शक्ति के बहुत बड़े भण्डार के साथ कार्य शुरू करना चाहिए। समय आने दो, आप हमारे साथ अवश्य होंगे।

यदि तुच्छ बातों के लिए मुझे इधर-उधर जाकर गुल-गपाड़ा नहीं मचाना है, किन्तु मातृभूमि की कुछ वास्तविक और चिरस्थायी सेवा करनी है, और यदि देश के लिए मुझे अपने को सचमुच उपयोगी, सिद्ध करना है, तो मैं समझता हूँ कि अपने को इस महत्तम कार्य के योग्य बनाने के लिए मुझे थोड़ी सी और तैयारी की ज़रूरत है।

मैं यहाँ शास्त्रों और उच्चतम् पाश्चात्य विचार का पूरा अध्ययन कर रहा हूँ और साथ ही अपनी स्वतन्त्र गवेषणा में भी लगा हुआ हूँ। इस काम में मुझे अपना सारा जीवन नहीं लगा देना है। लगातार परिश्रम के मूल्य पर जो कुछ प्राप्त करता आया हूँ, वह मैं शीघ्र ही मानवजाति को देता बल्कि उसके हृदय और व्यवहार में भरता दिखाई दूंगा। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि मैं चाहता तो देश में अब तक न जाने कब बेढब हलचल मचा दी होती। किन्तु मेरा अन्तःकरण कहता है कि किसी प्रकार निजी गौरव, लाभ, धमकियों, नगीच आई हुई जोखिम, या मृत्यु के भय से भी उस बात का प्रचार न करूंगा जिसको साक्षात्कार से मैनें सत्यु अनुभव नहीं किया है।

यदि सत्य में कोई बल है, और निस्संदेह वह अनन्त बल है, तो राजा और साधु को, जनता और अमीर-उमरा को रामतीर्थ स्वामी के गाड़े हुए सत्यता के झंडे को अन्त में झुकना और पूजना होगा। मुझे इस काम में रुचि है, और शीघ्रता या अधीरता के वश किसी छोटे दर्जे के काम में मेरा जुत जाना अपनी शक्तियों को गंवा देना होगा।

मुझे उपदेश तो करना ही है, नहीं तो अपने बचपन से ही इस इच्छा को बड़े चाव से क्यों पालता ? मुझे धर्म प्रचार तो करना

ही है, नहीं तो माता-पिता, स्त्री, बच्चों, पद और उज्जवल भविष्य को क्यों त्याग देता ? यहाँ के अपने अनुभवों का मुझे साहसपूर्वक, निर्भय होकर, सब प्रकार के कष्टों और विरोध के सामने दैवी तेज से पूरित होकर प्रचार करना है।

भावी उपयोग के लिए रुपया रखने की आपकी सलाह मैं धन्यवाद सहित स्वीकार करता हूँ।

नियमपूर्वक कसरत की जाती है ! स्वास्थ्य अच्छा है। जलवायु अति उत्तम है। आपको और बाबू साहब को प्राप्त हो।

शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

आप का अपना आत्मन

रामतीर्थ स्वामी।

—:०:—

ॐ

नमो नारायणाय ! ई० १९०२

"मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्टा
युद्धयस्त जेतासि रणे सपत्नान्"

काम तो भगवान ने पहले ही किया हुआ है, यह हम तुम व्यक्ति तो बहाना है ।

भगवन्,

नेपाल को भेजा हुआ आपका प्रेमपत्र मिला । प्रभो, आपका आरम्भ किया हुआ कार्य तो अवश्यमेव फले फूलेगा और खूब फैलेगा । राम आपके साथ है । शनैः शनैः सारे भारत की सहायता आप के साथ हो जानी है ।

राम का यहाँ वनों में कुछ काल व्यतीत करना बड़ा आवश्यक था ।

जैसे भूखे को रोटी न मिले तो मरता है वैसे यह राम एकान्त सेवन, प्रेम में रुदन, मस्ती में भ्रमण, यदि न पाय तो जी नहीं सकता । जिनकी मौज हो इस बात पर हंस पड़े ।

"तं त्वा भग प्रविशानि स्वाहा ।
स मा भग प्रविश स्वाहा ।
तस्मिन् सहस्त्र शाखे,
निभगाहं त्वयि मृजे स्वाहा,
व्यशेम देवहितं यदायुः ।"

आपका अपना आप,
रामतीर्थ ॐ ।।

पत्र-मंजूषा

(१)

१५ सितम्बर १९०३

परम प्रिय बालिके,

या मधुर कुमारी कमले !

तुम शुद्ध, निर्दोष और पवित्रों की पवित्र हो ! तुम में कोई दोष नहीं है, कोई कलंक नहीं है, सांसारिकता का कोई धब्बा नहीं है, किसी प्रकार का भय नहीं है और कोई पाप नहीं है। क्या तुम ऐसी नहीं हो, प्रिय बालिके !

यदि तुम्हें कोई एतराज़ नहीं है तो निम्नलिखित विचारों को कविता के रूप में ग्रंथित करो। इन विचारों को छन्दोबद्ध करने का प्रयत्न तुम्हें काव्यानन्द के उच्च शिखर पर रक्खेगा। यह एक फ़ारसी कविता का अनुवाद किया गया है, जिसे राम ने आज प्रातःकाल ही लिखा है। तुम पोर्टलैण्ड अथवा डेनवर में इनकी कविता बनाओ। अपने को तुम अब उनके योग्य बना लो। विचारों को कविता में लिखने के योग्य अनुकूल परिवर्तन करने का तुम्हें पूर्ण अधिकार है।

(१) ए आनन्द सागर ! तुम अत्यन्त क्रोध रूपी तरंग और आँधी से पृथ्वी और आकाश को समतल कर दो। सब विचार और चिन्ता खूब गहरे डुबा दो, और उन्हें टुकड़े टुकड़े करके छितर बितर कर दो। अहा ! मुझे इन से क्या करना है।

(२) आओ, हम खूब दिव्य आनन्दामृत का आकंठ पान करके मस्त हो जायें। हम इतना पान करें कि देह का नितान्त विस्मरण हो जाये। भेदभाव के विचारों को हम निकाल देते हैं, संकुचित अस्तित्व की दीवारों को गिरा देते हैं और स्वयं प्रकाश आत्मसूर्य की अन्तःकरण में संस्थापना करते हैं।

(३) ऐ दिव्य उन्माद! ऐ निजानन्द! आओ, शीघ्रता करो, सत्वर आओ, विलम्ब मत करो। मेरा चित्त अब इस अस्थि के पिंजरे से थक गया है, अब इस मन को तुझमें-तुझमें ही ग़ोता लगाने दे। कृपया इसकी अब जलती हुई (संसार की) भट्ठी से रक्षा करो।

(४) "मेरा और तेरा" की कल्पना पर अब आग लगा दो। सब प्रकार के भय और आशा को वायु के तूफानों में बह जाने दो। भेद भाव को तोड़ दो और सिर और पैर में भेद मत समझो।

(५) मुझे रोटी की परवाह नहीं, जल की ज़रूरत नहीं। मुझे विश्राम मत करने दो। हे प्रेम की अमूल्य उत्कट प्यास! अहा तू अकेली ही इस प्रकार के करोड़ों ढाँचों (शरीरों) के पतन का प्रायश्चित करने के लिए समर्थ है।

पश्चिम का आकाश चमकता दीख रहा है,
तेज मनोहर सुन्दर कितना दीख रहा है।
उसको क्या आदित्य बनाता सुखमय ऐसा?
है यह निस्संदेह प्रकाश तुम्हारा ऐसा।

तुम्हारा प्रत्यक्ष आत्मा,

राम।

(राय साहब ला० बैजनाथ को भेजे हुए एक पत्र की नक़ल)

वशिष्ठाश्रम ।
२७ मार्च १९०६

धन्यतम परमात्ममूर्ते,

पूर्ण शान्ति मम पास नदी सम बहती आती,
शान्ति समीरण लहरि के सम आ लहराती ।
गंगा के निर्मल जल के सम शान्ति बहती,
नख शिख से सब रोम रोम से बह निकलती ।
जल तरंग शान्ति सागर के ये जो उछले,
हृदय, हस्त और चरण सभी को ये है त्यागे ।
ॐ आनन्द ! ॐ परमानन्द ! ! ॐ शान्ति ! ! !

यह आश्रम (वसिष्ठाश्रम) हिम रेखा के ऊपर है । राम की गुफा के नीचे से वसिष्ठ गंगा नाम की एक रमणीय (जल) धारा वहती है । इस धारा में पांच या छः झरने हैं । नदी की घाटी में पत्थरों पर शिवजी के हाथों से प्राकृतिक कुंड खोदे गये हैं जिनसे छोटे छोटे सुहावने बीस ताल बन गये हैं । शिखरें उन सत्य प्रकाश प्रिय गंगाजल के दृढ़ राक्षसों से ढकी हुई हैं, जिनकी हरियाली उस समय भी नहीं मुरझाती जब कि उनके आसपास ६ फ़ीट बर्फ़ जम जाती है । यह धन्य तरुवर महान् वनमाली के प्रेम और कृपा के सर्वथा पात्र हैं, इसमें कोई शंका नहीं ।

अर्थं पुरः पश्यसि देवदारुम् ।
पुत्रो कृतोऽसौ वृषभध्वजेन ।

(रघुवंश २-३६)

भावार्थ : पास के देवदारु वृक्ष तू देखता है ? वृषभध्वज श्री शिवजी ने उसका पुत्रवत् संवर्द्धन किया है ।

महादेव जी के ये उरिद्‌बाहू और वज्रहृदय दो बालक ही केवल राम के साथी हैं। नारायण स्वामी भी राम से कम से कम दो वर्ष तक न मिलने के लिए फिर मैदान में (नीचे) भेज दिए गये हैं। यहां एक नवयुवक नित्य आकर भोजन बना जाता है और रात्रि व्यतीत करने के लिए पास ही एक ग्राम में---जो ग्राम सबसे निकट है और तीन मील से अधिक अन्तर पर होगा---चला जाता है।

यहां से आधा मील चढ़ने से राम वसिष्ठ पर्वत के शिखर पर पहुंचता है। वहां से केदार, बद्री, सुमेरू, गंगोत्री, यमुनोत्री, और कैलाश के हिसश्रृंग देख पड़ते हैं।

केदार खण्ड (पुस्तक) में वसिष्ठाश्रम का विस्तार से वर्णन किया गया है। योगवासिष्ठ के रचयिता ने आश्रमपद के लिए यही स्थान पसन्द किया था। सुख की बात है कि यहां अभी तक कोई शहर या मार्ग निकट नहीं है। राम के आनन्द के विषय में मत पूछो। राम यहां एक अति महत्व का ग्रन्थ लिख रहा है। राम के उस ग्रन्थ से हर्षोन्मत्त शान्ति उस समय प्रकट होगी, जब वह कुछ वर्ष के पश्चात् नीचे मैदान में प्रकाशन के लिए भेजी जायेगी उस समय तक कृपया कोई न मिले।

परमात्मा ही केवल सत्य है।

देखा न शब जो यार को नूरे जिया से कार क्या ?

मुर्दे की क़ब्रे-तार को आबो गिया से कार क्या ?

चाहे कोई भला कहे ख्वाह पड़ा बुरा कहे,
पल्ला छुटा जो जिस्म से बीमो-रज़ा से कार क्या ?
नेकी बदी ख़ुशी ग़मी ज़ीना थीं बामे-यार का,
ज़ीना जला दो अब यहां पायीं बिया से कार क्या ?
अहमक़े कोर ही को है उल्फ़ते-मा सिवाये-हक़,
काबा-ए-दिल में यह ज़िना बूए-वफ़ा से कार क्या ?
इतना लिहाज़ कर लिया दुनिया तेरा, परे भी हट ।
नाचूं हूं साथ राम के शर्मो-हया से कार क्या ?

× × × ×

अज़दहा आज़ादी है मारे आस्तीं चश्मे दोबीं,
ग़ैर हक़ को जब नज़र आये, जहां हो मार तोप ।
खाक झूठी ज़िन्दगी पर, क़ब्र का कीड़ा न बन
गोरे तन वहमे ख़ुदी पर दे चला फिर मार तोप ।
मालो-दौलत गीरो-दार, रक्तो रख्तो नक़दो जिन्स,
इज्ज़तो, माश्रो मनी का काम कर दे मार तोप ।

भावार्थ : रात्रि को ही प्रियतम के दर्शन नहीं हुए तो दिन के सूर्य प्रकाश से क्या काम ? मुर्दे की अंधेरी क़ब्र को पानी और घास से क्या काम है ? चाहे कोई भला कहे या बुरा किन्तु देहाध्यास के नाश होने पर भय और आशा से क्या काम ? नेकी, बदी, हर्ष, शोक, प्रियतम की प्राप्ति की सीढ़ी थी, इस सीढ़ी को जला दो अब नीचे उतरने से क्या काम ? अन्धे मूर्ख को ही ईश्वर से अतिरिक्त किसी अन्य से प्रीति होती है, अन्तःकरण में ऐसा व्यभिचार (अव्यभिचारिणी भक्ति ही उपयोगी मानी जाती है) हो तब वफ़ादारी की गंध से क्या काम ? हे दुनिया तेरा इतना लिहाज़

कर लिया, अब दूर हट, मैं जब राम के साथ नाचता हूं तो मुझ शर्म और लज्जा से क्या काम ?

यह द्वैत दृष्टि अजगर का दन्त या आस्तीन का सांप है। ईश्वर से अतिरिक्त जहां कहीं द्वैतभाव दीख पड़े उसको तोप से मार। इस झूठी ज़िन्दगी पर ख़ाक डाल, क़ब्र का कीड़ा मत बन। क़ब्र रूपी शरीर के अहंकार के भ्रम पर तोप-चला कर मार। धन-दौलत, द्रव्य संग्रह, ऐहिक वस्तु, भाग्य, नक़द और अन्य पदार्थ, मानापमान, तथा ममत्व को तोप मार कर काम कर दे।

आपका प्रयाग कुम्भ का व्याख्यान विद्वतापूर्ण और चातुर्य-युक्त था। इसकी एक प्रति टिहरी के महाराजा को उपहार स्वरूप दिया था। परन्तु प्यारे सुनो, वेदान्त कोई ढोंग (वाग्वेदान्त) या (धर्मका) दंभ नहीं है, ऐसे ही यह जगत् परमार्थतः सत्य नहीं। जो उसको सत्य समझता है, अवश्य नष्ट होता है।

हाँ, हाँ, हाँ, हाँ, ॐ !

राम।

—:०:—

बनवास

(राग बरवा-ताल धमार)

रहिए अब ऐसी जगह चलकर जहाँ कोई न हो
दुश्मने-जाँ हो न कोई मिहरबाँ कोई न हो ।।१।।
पड़िए गर बीमार तो आकर कोई पूछे न बात ।
और गर मर जाइए तो नौहा-ख़्वाँ कोई न हो ।।२।।
रुखसत ऐ जिंदां ! जुनूं ज़ंजीरे दर खड़काए है ।
मुज़्द: खारे-दश्त ! फिर तलवा मेरा खुजलाय है ।।३।।
फिर बहार आई चमन में ज़ख़्मे गुल आले हुए ।
फिर मिरे दाग़े-जुनूं आतश के परकाले हुए ।।४।।

जीते राम की हड्डियां गंगा में पड़े दो वर्ष बीत गए । कश्मीर-यात्रा को लगभग एक वर्ष हो चुका है ।

किसी व्यक्ति को मालूम हो जाय कि यह मृगतृष्णा है फिर वहां पानी भरने क्यों जायेगा ? यदि किसी के मारे-बाँधे चला भी जाये, तो उसका पग उत्साह से नहीं उठेगा ।

संसार के विषयों की असलियत खुल गई, संसार की वस्तुओं की क़लई उतर गई तो उन में जी कैसे लगे ? जो कुम्हार अपने चक्कर को चलाते चलाते छोड़कर अलग अपनी गद्दी पर जा बैठा हो, वह चक्कर पिछले धक्के (Inertia) के कारण कुछ देर तक अवश्य चलता रहता है । किन्तु कब तक ? उसकी गति मंद पड़ती जायेगी और धीरे-धीरे मालिक के हाथों बिना, वह चक्कर शीघ्र थम जायगा ।

जिस शरीर का कर्ता भोक्ता जीव अपनी सच्ची गद्दी पर आसन ग्रहण कर चुका हो, वह शरीर कब तक कुम्हार के चक्कर की भाँति घूमेगा ? सांसारिक संबंध ढीले पड़ते जायेंगे और धीरे-धीरे विदेह ।

कब मुश्तुकदोश रहे क़ैदिए-ज़िदाने-वतन ।
बूए-गुल फांदती है बाग़ की दीवारों को ।।

अकबर का बाप हुमायूं बादशाह मर गया, लेकिन कई दिन तक लोग मुल्लाशिकेबी कवि को (जिसकी आकृति हुमायूं से बहुत मिलती थी) राज सिंहासन पर बैठा हुआ पाकर यही समझते रहे कि हुमायूं जीवित है और राज कर रहा है। पर बात कहाँ तक छिपे ? ज्ञात हो ही गया। ज्ञान होते ही ज्ञानी तो शरीर छोड़ बैठा, मर गया, किन्तु संसारी लोगों की दृष्टि में काम-काज करता मालूम होता है। निभेगी कहाँ तक ?

कई तारे आकाश पर टूट पड़ने के बाद भी इस भूमि के निवासियों को दूरी के कारण सैकड़ों वरन् सहस्त्रों वर्षों तक दृष्ट पड़े आते हैं, पर एक दिन टूटते दृष्ट आ ही जाते हैं। जो रोटी एक बार खाई जाय फिर हाथ में कैसे रह सकती है ? अहंकार को जब शिवोऽहम् ने खा लिया तो फिर क्या काम देगा।

मन अज़ आं हुस्ने-रोज़ अफ़ज़ूं कि यूसुफ़ दाश्त दानिस्तम ।
कि इश्क़ अज़ पर्दए असमत बुरूँ आरद ज़ुलेखा रा ।

अर्थ : मैं यूसुफ़ के प्रतिदिन बढ़ने वाले सौंदर्य से जान गया था कि सच्चा प्रेम ज़ुलेखा को भी परदे से बाहर निकालेगा ।

मैं जो शौक़ से क़दम बढ़ा के चला ।
लगी रस्ते में कहने यह बादे-सबा ।।
तुझे जिंदा न छोड़ेगी नाज़ो-ग्रदा ।
मुझे उस गुले-होशरुबा की क़सम ।।
ग्रंततः ग्राया वह दिन कि काम काज छूट गए ।
दिल बरा चूं रुख़ नमूदी शुद नमाज़े-मन क़ज़ा ।
ग्राफ़तावे चूं बरायद, सिजदा कै बाशद रवा ।

ग्रर्थ : ऐ प्यारे ! जब तूने मुखड़ा दिखाया, मैंने नमाज़ क़ज़ा की (नहीं पढ़ी) । जब सूर्य निकल ग्राता है तो नमाज़ ठीक नहीं होती (तेरा मुखड़ा सूर्य के समान है) ।

इश्क़ के मकतब में मेरी ग्राज बिस्मिल्लाह है ।
मुंह से कहता हूँ ग्रलिफ़, दिल से निकलती ग्राह है ।।
बेख़ुदी फ़ारग़ ग्रज़ मसीहम कर्द ।
दर्द मा बूद-खुद दवाये मा ।।

ग्रर्थ : : मेरी बेख़ुदी ने मुझको मसीहा (ग्रच्छा करने वाले) से बेपर्दा कर दिया । मेरा दर्द (बेख़ुदी) स्वयं मेरी दवा हो गया ।

जिस प्रकार मृतक को इस संसार से प्रेत जानकर लोग कीर्तन करते हुए घर से बाहर छोड़ ग्राते हैं, सब प्रिय जन ग्रौर परिजन मारू राग गाते हुए राम को गंगा की ग्रोर रवाना कर ग्राये ।

(राग माल । कौस–ताल झप)

मना ! तैंने राम न जान्या रे ! राम न जान्या रे ।
मना ! तैंने राम न जान्या रे ।।
जैसे मोती ग्रोस का रे, तैसे यह संसार ।
देखत ही को झिलमिला रे, जात न लागी बार ।।
मना ! तैंने राम न जान्या रे ।

सोने का गढ़ लंक बनायो, सोने का दरबार ।
रत्ती इक सोना न मिला रे, रावन मरती बार ।।
मना ! तैने राम न जान्या रे ।
दिन गंवाया खेल में रे, रैन गंवाई सोय ।
सूरदास भजो भगवंता, होनी होय सो होय ।।
मना तैने राम न जान्या रे ।।

राम न जान्या रे ! मना ! तैने राम न जान्या रे ।।

रेलवेस्टेशन के प्लेटफ़ार्म पर प्रेम भरे इष्ट मित्र रो रहे हैं और गा रहे हैं ।

(राग भैरों–ताल शूल)

अलविदा ऐ मेरी रियाज़ी ! अलविदा ।
अलविदा ऐ प्यारी रावी ! अलविदा ।। १ ।।
अलविदा ऐ अहले-ख़ाना ! अलविदा ।
अलविदा मासूमे-नादां ! अलविदा ।। २ ।।
अलविदा ऐ दोस्तो-दुश्मन ! अलविदा ।
अलविदा ऐ शीतो-उष्ण ! अलविदा ।। ३ ।।
अलविदा ऐ कुत्बो-तदरीस ! अलविदा ।
अलविदा ऐ ख़ुबसो-तक़दीस ! अलविदा ।। ४ ।।
अलविदा ऐ दिल ! ख़ुदा ! ले अलविदा ।
अलविदा राम ! अलविदा, ऐ अलविदा ! ।। ५ ।।

कैसा चालाकी में तू यकता है ऐ दस्ते-जुनूं ।
दस तो क्या इक तार भी बाक़ी नहीं दस्तार में ।।
दीवानगी से दोश पै जुन्नार भी नहीं ।

यानी हमारी जेब में इक तार भी नहीं ।।

जब जेब ही नहीं तो तार कैसा ?

यारो ! वतन से हम गये, हम से वतन गया ।
नक़्शा हमारे रहने का जंगल में बन गया ।।
पैरहन मी बदरम दम बदम अज़ ग़ायते-शौक़ ।
कि वजूदम हमा ओ गश्त व मन ई पैरहनम ।।

अर्थ : ईश्वरी लगन की अधिकता से मैं अपने वस्त्र को दिन प्रति दिन फाड़ डालता हूं क्योंकि मेरा वजूद (हस्ती) समग्र वही हो गया और (व्यक्तिगत) मैं यह वस्त्र हूं ।

मुझे इस दर्द में लज़्ज़त है ऐ जोशे-जुनूं अच्छा ।
मेरे ज़ख्मे-जिगर के हर घड़ी टांके उधेड़े जा ।।
रहा है होश कुछ बाक़ी उसे भी अब निबेड़े जा ।
यही आहंग ऐ मुतरब-पिसर ! टुक और छेढ़े जा ।।
दर दिलम इश्क़ ज़ि लैला काफ़ीस्त ।
ख्वाहिशे-वस्ल ज़मा ना इन्साफ़ीस्त ।।

अर्थ : मेरे दिल में लैली का प्रेम काफ़ी (पर्याप्त) है, इसलिए दूसरों से मिलने की इच्छा रखना अन्याय है ।

पेश आमदम शहे बंदा रा गुफ्तम शहा कम कुन बला ।
गुफ़्ता बरो गर आशिक़ी, हर दम बला अफ़ज़ूं कुनम ।।

अर्थ : सम्मुख उपस्थित होकर मैंने कहा कि ऐ सौंदर्य के बादशाह ! बला को कम करो । जवाब दिया कि यदि तू आशिक है तो हर वक्त बला को मैं अधिक करूंगा ।

(राग जोग-ताल धमार)

जीने का न अंदोह न मरने का ज़रा ग़म ।
यकसां है उन्हें जिंदगी और मौत का आलम ।।
वाक़िफ़ न बरस से न महीने से वह इकदम ।
शब की न मुसीबत न कहीं रोज़ का मातम ।।
दिन रात, घड़ी-पहर महो-साल में ख़ुश हैं ।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हाल में ख़ुश हैं ।।१।।
कुछ उनको तलब घर की न बाहर से उन्हें काम ।
तकिया की न ख़्वाहिश है न बिस्तर से उन्हें काम ।।
अस्थल की हवस दिल में न मंदिर से उन्हें काम ।
मुफ़लिस से न मतलब न तवंगर से उन्हें काम ।।
मैदान में बाज़ार में चौपाल में ख़ुश हैं ।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हाल में ख़ुश हैं ।।२।।

उनके लिए तो--

(राग पीलू-ताल चलंत)

गर न्यामतें खाता रहा दौलत के दस्तरख़्वान पर ।
मेवे मिठाई दूध-घी हलवा-ओ-तुर्शी और शकर ।।
या बाँध झोली भीख की टुकड़े के ऊपर धर नज़र ।
होकर गदा फिरने लगा कूचा बकूचा दर बदर ।।
गर यों हुआ तो क्या हुआ और वों हुआ तो क्या हुआ ।।१।।

था एक दिन वह धूम का निकले था जब असवार हो ।
हर दम पुकारे था नकीब "आगे चलो, पीछे हटो" ।।

या एक दिन देखा उसे तनहा पड़ा फिरता है वह ।

पस क्या ख़ुशी क्या न ख़ुशी, यकसां है सब ऐ दोस्तो ।।
गर यों हुआ तो क्या हुआ और वों हुआ तो क्या हुआ ।।२।।
या इशरतों के ठाठ थे, या ऐश के असबाब थे ।
साक़ी सुराही गुलबदन जामो-शराबे नाब थे ।।
या बेकसी की दर्द से बेहाल थे बेताब थे ।
कुछ रह नहीं जाता यहां आख़िर को नक़्शे-आब थे ।
गर यों हुआ तो क्या हुआ और वों हुआ तो क्या हुआ ।।३।।

एक वह दिन था जब ठंडे लंबे सांस खींचता, पीली रंगत के साथ छुप-छुप कर तार-तार रोता-धोता, गंगा में डूबने की कामना से "राम" यहां आया था—

वजहे-ज़र अज़ रूए दारद चश्मे-लू लू बारे मन ।
क़ल्बे मन नक्दे-खां ज़ां रूए-दर बाज़ारे-मन ।।१।।
पेश ज़ाँ कि बैज़ए-ज़र्री फ़ितद बर तश्ते-ज़र ।
दर ख़रोश आयद ख़ुरूस अज़ नालाहाए-ज़ोर-मन ।।२।।

अर्थ : (१) इश्क़ की वजह से मेरी आंख जो मोती बरसाती है, सोने का मूल्य रखती है और मेरा हृदय भी इश्क़ (प्रेम) के कारण मेरे बाज़ार में सिक्के की तरह जारी है।

(२) पहले इसके कि श्वेत रजतवर्ण प्रभात आकाश पर प्रकट हो, मुर्ग़ मेरे आर्तनाद से शोर मचाने लग जाता है (अर्थात् मेरे आर्तनाद से मुर्ग़ जागता है और बांग देता है कि प्रभात हो गया) ।

"गंगा ! तेंथों सद बलिहारे जाऊं,
गंगा ! तेंथों सद बलिहारे जाऊं ।

आज वह समय है कि उसी गोली गंगे (अर्थात् श्री गंगा जी) में कपड़ा-लत्ता, वरन् शरीर का प्रत्येक रोम डाल परम आनन्द के साथ मौज में लहरा-लहरा कर गा रहा है।

"सद बलिहारे जा गंगें ! मेथों सद बलिहारे जा।" इत्यादि

हाजी बसूए-काबा बाद अज़ बराय हज ।
अल्हमद गो कि काबा बियायद बसूए-मा ।।

अर्थ : यात्री यात्रा के लिए काबा की ओर जाता है, परमात्मा का धन्यवाद दे कि काबा मेरी ओर आता है।

(राग सोरठ-ताल मुग़लई)

बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता वक्त रा मेमूं कुनम ।
बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता दर्दे-दिल अफ़जूं कुनम ।।१।।
बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता बहरे-बीमाराने-दिल ।
अज़ अश्के-चश्मो-आहे-शब वज़ खूं जिगर माजूं कुनम ।।२।।
बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता दिलबर आँ दिलवर नहम ।
अज़ हरचे जुज़ दिलवर बुवद अज़ शहरे-दिल बेरुं कुनम ।।३।।
बाज़ आमदम बाज़ आमदम चीज़े नदारम जुज़ अलिफ़ ।
कद्दे-अलिफ़ पैदा शवद चूं रास्त पुश्ते नूं कुनम ।।४।।
बाज़ आमदम बाज़ आमदम दिल दादए-शोरीदए ।
खुद रा मगर लैला कुनां आं यार रा मजनूं कुनम ।।५।।
गुफ़्तम शहा दर हिजरे-तो बस क़तरा हा बारीदा अम ।
गुफ़्ता चि ग़म हर क़तरा रा मन लू लूए मकनूं कुनम ।।६।।
गुफ़्तम शहा चूं हाज़री फ़र्दा चि हाजत वादा रा ।
गुफ़्ता बरू, खुद रा बबीं, ता वादा रा अकनूं कुनम ।।७।।

गुफ़्तम शहा दर पर्दा हा ख़ुदरा चिरा दारी निहां ।
गुफ्ता कि गर बेरूं शवम सीसद चू तो मजनूं कुनम ।।८।।

अर्थ : (१) मैं फिर लौट आया हूँ, मैं फिर लौट आया हूँ, जिससे समय को धन्य बनाऊँ। मैं फिर लौट आया हूँ, मैं लौट आया हूँ, जिससे हृदय की पीड़ा बढ़ाऊँ।

(२) मैं फिर लौट आया हूँ, मैं लौट आया हूँ जिससे हृदय के बीमार के लिए अपनी आँख के आँसू रात की आह और रोदन और यकृत के रक्त से माजून बनाऊँ।

(३) मैं बार-बार लौट आया हूँ जिसमें चित्त को उस दिलवर (प्यारे) से लगाऊँ और कुछ दिलवर के अतिरिक्त हो, उसको हृदय के नगर से बाहर निकाल दूं।

(४) मैं बार-बार लौट आया हूँ जिसमें सिवाय अलिफ़ (अद्वैत) के और कोई वस्तु न रक्खूं और जब मैं नून (अहंकार) की पीठ को सीधा करूं तो अलिफ़ जैसा (i) सीधा आकार उत्पन्न हो जाय।

(५) मैं बार-बार वापस आया हूं क्योंकि मैं आशिक़ (प्रेमी) और पागल हूँ किन्तु अपने आपको लैला बनाए हुए हूँ, जिसमें उस प्यारे को मजनूं बनाऊँ।

(६) मैंने कहा, ऐ बादशाह ! तेरी जुदाई में मैंने बहुत से आंसू गिराए हैं, उसने उत्तर दिया कि कुछ चिन्ता न कर, मैं तेरे (आँसू के) प्रत्येक बूंद को मोती (दुर्रे नासुफ़्ता) बना दूंगा।

(७) मैंने कहा, ऐ बादशाह ! जब कि तू उपस्थित है तो कल पर वादा पूरा करने की क्या आवश्यकता है? उसने उत्तर

दिया कि जा, अपने आपको देख, जिससे कि मैं अभी का वादा (दर्शन का इक़रार) तत्काल पूरा करूँ।

(८) मैंने कहा, ऐ बादशाह! तू अपने आपको पर्दे में क्यों छिपाए रखता है? उसने उत्तर दिया कि यदि मैं बाहर प्रकट हो जाऊँ तो तुझ जैसे तीन हज़ार (कई लोगों) को मजनूं बना दूं।

बादलों की गरज के उत्तर में गूंजने वाले पहाड़, सदैव प्रसन्नता में सिर के बल, नाचने वाले झरने और आनन्द दायिनी गंगा की आवाज़ यह गीत गा रहे हैं--

(राग आसा-ताल दादरा)

गंगा का है किनार, अजब सवज़ा ज़ार है।
बादल की है बहार हवा ख़ुशगवार है॥
क्या ख़ुशनुमा पहाड़ पै वह चश्मा-सार है।
गंगाध्वनि सुरीली है क्या लुत्फ़दार है॥
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है॥१॥
वक्ते-सबाहे-ईद तमाशा तयार है।
गुलगूना मूंह पै मल के खड़ा गुल इज़ार है॥
शाहे-फ़लक से या जो हुई आँख चार है।
मारे शरम के चेहरा बना सुर्ख नार है॥
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है॥२॥
क़तरे हैं ओस के कि दुरों की क़तार है।
किरणों की उन में वल बे नज़ाकत यह तार है॥
मुर्ग़ानि-ख़ुश नवा! तुम्हें काहे की आर है।
गाओ बजाओ शब का मिला दिल से यार है॥

समुद्र की सैर

समुद्र के किनारे राम खड़ा है। पेंच खाती हुई तरंगें चरणों में लहरा रही है। तेज़ हवा कपड़े उड़ा रही है। समुद्र का गंभीर गर्जन जगत के ख़याल को लीन कर रहा है।

शरीर में गति नहीं। क्या दशा है। राम कहां है·

जिस तरफ़ अब निगाह जावे है।
आब (जल) ही आब नज़र आवे है।।

विशाल, विशाल सागर ; सब जल ही जल, जल ही जल, शुष्क धरती के ख़याल को चित्त-पटल से धो रहा है। बड़े-बड़े नगर और बाज़ार, सड़कें, एवं नागरिकों के परस्पर लड़ाई-झगड़े, कोलाहल आदि यहाँ पर स्वप्न से प्रतीत हो रहे हैं। समुद्र के सामने संसार कोई वस्तु नहीं जान पड़ता।

लेकिन जब दृष्टि तनिक ऊपर उठा कर देखते हैं, तो चारों ओर तना हुआ नील वर्ण महाकाश का तटहीन सागर ऐसा विशाल, विशाल, विशाल दिखाई देता है कि उसमें धरती वाला बड़ा सागर बिल्कुल डूब जाता है, नाम और चिन्ह सब खो बैठता है।

आनन्द यह है कि अनंत महाकाश स्वयं आनन्द स्वरूप राम में तुच्छ और अदृश्य हो जाता है, जैसे सूर्य की किरणों में मृगतृष्णा दिखाई देती है, वैसे ही इतना बड़ा महाकाश **राम** के प्रकाश में भान होता है

आफ़ताबम् आफ़ताबम् आफ़ताब ।
जर्रा हा दारंद अज़ मन रंगो ताब ।।

अर्थ : मैं सूर्य हूँ, मैं सूर्य हूँ, मैं सूर्य हूँ, और सब पदार्थ मेरे से ही चमक दमक पाते हैं।

राग कोंसिया–ताल तीन

शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म हूँ अजर अमर अज अविनाशी ।
जासु ज्ञान से मोक्ष हो जावे कट जावे यम की फाँसी ।।
अनादि ब्रह्म अद्वैत द्वैत का जामें नाम निशान नहीं ।
अखंड सदा सुख जाका कोई आदि मध्य अवसान नहीं ।।
निर्गुण, निर्विकल्प, निरूपमा जाकी कोई शान नहीं ।
निर्विकार निरवयव माया का जामें रंचक भान नहीं ।।
यही ब्रह्म हूँ मनन निरन्तर करें मोक्ष-हित सन्यासी ।
शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म हूँ अजर अमर अज अविनाशी।।
सर्वदेशी हूँ ब्रह्म, हमारा एक जगह स्थान नहीं ।।
रमा हूँ सबमें मुझसे कोई भिन्न वस्तु इन्सान नहीं ।
देख विचारो सिवाय ब्रह्म के हुआ कभी कुछ आन नहीं,
कभी न छूटे पीड़ दु:ख से जिसे ब्रह्म का ज्ञान नहीं ।
ब्रह्म ज्ञान हो जिसे उसे नहीं पड़े भोगनी चौरासी,
शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म हूँ, अजर अमर अज अविनाशी ।।२।।
अदृष्ट अगोचर सदा दृष्ट में जा का कोई आकार नहीं ,
नेति नेति कह निगम ऋषीश्वर पाते जिसका पार नहीं ।
अलख ब्रह्म लियो जान, जगत नहीं कार, नहीं कोई यार नहीं,
आँख खोल दिलकी टुक प्यारे-कौन तरफ़ गुलज़ार नहीं ।
सत्यरूप आनन्द राशि हूं कहें जिसे घट घट वासी,
शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म हूँ अजर अमर अज अविनाशी ।।३।।

राम मैदानों में

एक जगह से शिकायत भरा ख़त आया कि राम ने विसार क्यों दिया है, उसका "उत्तर"--

मन आँ ताक़त कुजा दारम कि पैमाँ रा निगह दारम ;
बिया ऐ साक़ी वो बशकन बयक पैमाना पैमानम ।

अर्थ : मेरे में वह शक्ति कहाँ कि जिस से इक़रार पूरा करने का ख़याल रक्खूं । ऐ प्रेम मद पिलाने वाले (साक़ी-गुरु) ! आ, मेरे इस पैमां (इक़रार) को तू एक पैमाने (प्रेम प्याले) से तोड़ दे ।

कोई कार्ड लिफ़ाफ़ा पास न था और न कोई पैसा-वैसा ही पल्ले था--

दिरमो दाम अपने पास कहाँ ;
चील के घोंसले में माँस कहाँ ।

इस समय संयोग से एक किताब में से दो टिकट मिल गए और उधर आपका अवश्य उत्तर चाहने वाला पत्र मिला । उत्तर लिखा गया है । इसी ढंग पर अन्य काम-धंधे तय होते हैं ।

आज लैम्प में तेल नहीं है और तेल मंगाने को दाम भी नहीं । पर ऐसी बातों से यह परिणाम न निकाल लेना कि हाय हाय ! राम तंगदस्त और दुखिया है ।

तवंगरों को मुबारक हो शमए-काफ़ूरी ।
क़दम से यार के रोशन ग़रीब ख़ाना हुआ ।।

प्रकृति राम की सहस्त्र प्राण से दासी है। प्रतिक्षण राम की सेवा करने की धुन में रहती है। आज लैम्प इस लिए नहीं जलाया कि कदाचित् राम सैर को जाने से न रुक जाय ? दिन भर पढ़ता रहा, अब फिर पढ़ने-लिखने लग गया, तो स्वास्थ्य में बाधा पड़ जायेगी।

इश्क़ के बीमार को अल्ला शिफ़ा करे ।
आज रात नदी पर चाँदनी का आनन्द दिखाया चाहती है।

राम चरम सीमा (परले दर्जे) की अमीरी और बादशाही करता है। जब मुद्रा सम्मुख आती हैं, झट पट उसको मुक्त कर देता है और फिर इस आनन्द और बेफ़िक्री से काटता है कि महाराजधिराजों (शहंशाहों) के तेज और प्रताप को हंसी के योग्य (ridiculous) बना देता है।

भला भला जानियां ! मौजां लुट्टियां ज्ञानियां ।
ख़ुशी रहना कार है, सोग सोगिया द्वार है ।।

पहले तो बड़ी चिंता के साथ आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयत्न हुआ करता था, अब आवश्यकताएं बेचारी अपने आप पूरी होकर सामने आ जायं, तो उन पर आँख पड़ जाती है, अन्यथा उनके भाग्य में "राम" की तवज्जेह कहाँ ? वह आवश्यकताएं जो अभी पूरी नहीं हुई (अधूरी हैं) उनसे पूरे **राम** को क्या प्रयोजन ?

भेस बदले महफ़िले-अहबाब में बैठे थे हम ;
वह समझते थे यह कोई आपरा सा और है।

यह शिक्षा विद्यार्थियों को क्यों नहीं दी जाती कि जब किसी आवश्यकता को दूर करने के सामान मौजूद न हों तो वह आवश्यकता ही अनुभव न होने पाए। खूब याद रक्खो कि सामानों के मौजूद न होने में जो आवश्यकता अनुभव होती है, वह केवल झूठी होती है।

जज साहब जब कचेहरी में बिराजमान होते हैं, तो उनको कमरे के झारने बुहारने या मेज़-कुर्सी सजाने, दावात क़लम लाने और मुक़दमाबाज़ों को बुलाने का कुछ ख़याल नहीं होना चाहिए। उनको तो केवल विवेक और न्याय के लिए अपने मन और मस्तिष्क को शान्त और प्रफुल्ल रखना ही काम है। अन्य कार्य जज साहब के कष्ट उठाये बिना अपने आप निभ जाएंगे, मुक़दमे-बाज़ अपने आप ही नियत तारीख़ पर उपस्थित हो जाएंगे। वकील लोग भी अपने आप पधारेंगे। मेज़-कुर्सी, क़लम-दावात भी चपरासी लोग समय पर अपने आप तैयार रक्खेंगे।

ऐ सत्य के जिज्ञासुओं! राम तुमको विश्वास दिलाता है कि यदि तुम आत्मिक परिश्रम में रात-दिन लगे रहोगे, तो तुम्हारी शारीरिक आवश्यकताएं अपने आप निवृत्त पड़ी होंगी। तुम्हें कुछ आवश्यकता नहीं कि तुम अपने असली आसन को छोड़कर चपरासी और दास लोगों के काम को अपना धर्म मान बैठो।

संसार में नियम है कि ज्यों-ज्यों मनुष्य का पद ऊंचा होता है शारीरिकश्रम और स्थूल काम से उपरामता मिलती जाती है। जैसे जज इस तरह का कोई काम नहीं, करता, वरन् जज की उपस्थिति ही से सब काम पूरे होते हैं। जज का साक्षी होना ही

चपरासियों को, मुक़दमे-बाज़ों को अरज़ी नवीसों इत्यादि को

हलचल में डाल देता है। वैसे ही कर्त्ता भोक्ता की पूंछ को उतार-कर सच्चाई के उन्माद (नशे) में मग्न और मस्त की साक्षी रूप स्थिति का होना ही काम-धंदे को पड़ा चलाता है। जिस साक्षी के भय से चन्द्र सूर्य प्रकाश करते हैं, जिसके भय से नदियाँ बहती हैं, जिसकी आशंका से वायु चलती है, ऐसे साक्षी को कामना और चिंता से क्या प्रयोजन ?

राग भैरवी (ताल शूल)

यह डर से मिहर आ चमका, अहाहाहा ! अहाहाहा !!
उधर मह बीम से लपका, अहाहाहा ! अहाहाहा !!
हवा अठखेलियाँ करती है मेरे इक इशारे से।
है कोड़ा मौत पर मेरा, अहाहाहा ! अहाहाहा !!
इकाई ज़ात में मेरी असंखों रंग हैं पैदा।
मज़े करता हूं मैं क्या क्या, अहाहाहा ! अहाहाहा !!
कहूं क्या हाल इस दिल का कि शादी मौज मारे है।
है इक उमड़ा हुआ दरिया, अहाहाहा ! अहाहाहा !!
यह जिस्मे "राम" ऐ बदगो ! तसव्वर महज़ है तेरा।
हमारा बिगड़ता है क्या, अहाहाहा ! अहाहाहा !!

राग जोग-ताल धमार

गुल को शमीम आब गुहर और ज़र को मैं
देता हूं जबकि देखूं उठाकर नज़र को मैं।
शाहों को रोब और हसीनों को हुस्नो-नाज़
देता बहादुरी हूँ बला शेरे-नर को मैं।

सूरज को सोना चाँद को चाँदी तो दे चुके

फिर भी तवाफ़ करते हैं देखूं जिधर को मैं
अबरूए-कहकशां भी अनोखी कमंद हैं
बेक़ैद हो असीर जो देखू उधर को मैं।
तारे झमक-झमक के बुलाते हैं "राम" को
आँखों में उनकी रहता हूँ जाऊं किधर को मैं।

राग बरवा-ताल मुगलई

आप ही डाल साया को उसको पकड़ने जाय क्यों?
साया जो दौड़ता चले कीजिए वाय वाय क्यों?
दीदये-दिल हुआ जो वा खुब गया हुस्ने-दिलरुबा।
यार खड़ा हो सामने आँख न फिर लड़ाये क्यों?
गंजे-निहां के कुफ़्ल पर सिर ही तो मुहरे शाह है।
तोड़ के कुफ़्लो मुहर को कंज को खुद न पाए क्यों?
अहलो अयालो मालो-जर सबका है बार **राम** पर।
अस्प पै साथ बोझ धर सर पै उसे उठाए क्यों?
जब वह जमाले-दिलफ़रोज़ सूरते मिहरे नीमरोज़,
आप ही हो नज़ारासोज़ परदे में मुंह छुपाए क्यों?
दशनए ग़मज़ा जांस्तां नाविके नाज़े-बेपनाह।
तेरा ही अक्से-रुख़ सही सामने तेरे आए क्यों?

राग पीलू-ताल झप

आप में यार देखकर आईना पुर सफ़ा कि यूं।
मारे ख़ुशी के क्या कहे शशदर सा रह गया कि यूं।
रोके जो इल्तिमास की दिल से न भूलियो कभी।

परदा हटा दुई मिटा मह ने भुला दिया कि यूं।

मैने कहा कि रंजो ग़म मिटते हैं किस तरह कहो,
सीना लगा के सीने से उस ने बता दिया कि यूं।
गरमी हो इस बला की हाय भुनते हों जिससे मर्दो-ज़न
अपनी ही आबो-ताब है, ख़ुद ही हूँ देखता कि यूं।
दुनिया व आक़बत बना वाह वा जो जेह्ल ने किया
तारों सां मिहरे 'राम' ने पल में उड़ा दिया कि यूं।

शरीर कठिन रोग से पीड़ित होता है। ज्वर, ख़ाँसी, पीड़ा और पेचिश अपने अपने बल की परीक्षा करते हैं। उस अवसर पर राम का गाना।

वाह वा ऐ तप व रेंजिश वाह वा।
हब्बाज़ा ऐ दर्दो-पेचिश वाह वा॥
ऐ बलाए नागहानी वाह वा।
वेलकम ! ऐ मर्गे-जवानी, वाह वा॥
यह भँवर, यह क़ह्र बर्पा वाह वा।
बहरे-मेहरे-राम में क्या वाह वा॥
खाँड का कुत्ता, गधा, चूहा, बिला।
मुंह में डालो ज़ायक़ा है खाँड का॥
पगड़ी पाजामा दुपट्टा अँगरखा।
ग़ौर से देखा तो सब कुछ सूत था॥
दामनी तोड़ी व माला को घड़ा।
पर निगाहे-हक़ में है वही तिला॥
मोतियाबिंद दिल की आखों से हटा।
मर्ज़ो-सिहत ऐने राहते-राम था॥

सोने को क्या परवाह, आभूषण रहे चाहे न रहे। सोने की दृष्टि से तो ज़ेवर कभी हुआ ही नहीं। सोने के ज़ेवर के ऊपर भी सोना, नीचे भी सोना, चारों ओर भी सोना, और बीच में भी सोना, हर ओर सोना ही सोना है। आभूषण तो केवल नाम मात्र है। सोना सब दशाओं में एकरस है। मुझ में नाम और रूप ही कभी स्थित नहीं हुए, तो नाम रूप के परिवर्तन और रूपान्तर, रोग और नीरोग का क्या स्थान है ? यह मेरी एक विचित्र आश्चर्य महिमा का चमत्कार है कि मैं सब में भिन्न-भिन्न "अहं" कल्पित कर देता हूं जिससे यह सब लीला व्यक्तियों में विभक्त होकर मेरा तेरा का आखेट हो जाती है। एक-दूसरे को अफ़सर-मातहत, गुरु-शिष्य, शासक-शासित, दुःखी सुखी स्वीकार करके मदारी की पुतलियों की तरह खेल दिखाने लगते हैं।

यह मेरी काल्पनिक बनावट मेरे पर तो (प्रतिबिम्ब या आभास) के कारण अपने आपको कुछ मान बैठी है। इसके कारण मुझ में कदापि भिन्नता नहीं आती, क्योंकि समस्त अस्तित्व और सृष्टि जो इन्द्रिय गोचर है, मुझसे है। पिंजरे में चिड़िया उछलती हैं, कूदती हैं, प्रसन्न होती हैं, शोक भी मनाती हैं, किन्तु व्याध जानता है कि इसमें क्या बल है, चुप तमाशा देखा करता है। आनन्दस्वरूप मैं सदा एकांत हूं। आप ही आप मेरे में नानत्व (द्वैत) का बाधक होना क्या अर्थ रखता है।

अंदर बाहर ऊपर नीचे आगे पीछे हम ही हम।
उर में सिर में नर में सुर में पुर में गिर में हम ही हम ।।

—:०:—

स्वामी रामतीर्थ ग्रन्थावली (हिन्दी)

(जून १९८६)

		रु० पै०
१—अन्तरात्मा	..	६.२५
२—सफलता का रहस्य	..	६.२५
३—आत्मानुभव	..	१०.००
४—विश्वानुभूति	..	५.००
५—धर्मतत्व	..	१०.५०
६—वेदान्त शिखर से	.	११.००
७—भारतमाता	..	१०.५०
८—अरण्य-संवाद	..	१०.५०
*९—सुलह की जंग : (प्रेस में)	..	—
१०—भक्तियोग-रहस्य	..	६.२५
११—व्यावहारिक वेदान्त	..	१०.५०
*१२—गंगा तरंग (प्रेस में)	..	—
१३—शांति का उपाय	..	१६.२५

अन्य पुस्तकें (स्वामी राम से सम्बंधित)

१—रामहृदय	..	३.००
२—राम-पत्र	..	४.००
३—राम वर्षा भाग (१) [भजनावली]	..	६.२५
४— ,, भाग (२) ,,	..	६.२५
५—राम जीवन कथा	..	१५.००
*६—राम के चुने हुये पद तथा वचन		०.५०
७—स्वामी राम—सांक्षिप्त परिचय		०.६०

स्वामी राम के एक-एक व्याख्यान क संस्करण

१—नक़द धर्म	..	१.५०
२—उपासना	..	२.५०

३—सुधार .. ०.५०
४—पुरुषार्थ और प्रारब्ध .. १.५०
५—हिन्दू समाज और समाजवाद .. १.२५
६—आनन्द अपने अन्तर में .. १.००
७—उन्नति का मार्ग .. ०.६०
८—कर्म .. १.००
९—विश्वव्यापी एकता .. २.५०
१०—यज्ञ का भावार्थ .. १.००
११—आत्मानुभव की सहायता .. १.५०
१२—घर आनन्दमय कैसे बना सकते हैं .. १.५०
१३—मनुष्य का भ्रातृत्व .. १.७५
१४—शान्ति का उपाय .. ३.५०

*अनुपलब्ध

श्री नारायण स्वामी कृत भगवद्गीता, तीन खंडों में

१—श्रीमद्भगवद्गीता (खण्ड–१–पुराना संस्क०) .. १५.००
१—श्रीमद्भगवद्गीता (खण्ड–१–नवीन संस्क०) .. २५.००
२—श्रीमद्भगवद्गीता (खण्ड–२) (नवीन संस्क०) .. ४०.००
३—श्रीमद्भगवद्गीता (खंड–३) (नवीन संस्क०) .. ४५.००

अन्य पुस्तकें

१—आदि भगवद्गीता .. ७.००
२—साधारण धर्म (हिन्दी) .. १६.००

वेदान्त के चार अपूर्व ग्रन्थ

आत्मदर्शी बाबा नगीनासिंह वेदी कृत

		रु० पै०
१—वेदानुवचन	..	१२.५०
२—आत्मसाक्षात्कार की कसौटी	..	६.२५
३—भगवद्ज्ञान के विचित्र रहस्य	..	६.२५
४—जगजीत प्रज्ञा	..	४.००

उर्दू

१—नारायण चरित्र	..	२.५०
२—साधारण धर्म (पुराना संस्क०)	..	१.००

शुद्धि पत्र

पृष्ठ सं०	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	ऊपर से १२	न	हटा दिया जाय
,,	,, १३	—	'और' तथा ध्यान' की बीच 'ही' लिखें
१२	ऊपर से ५	दीवाने 'वती'	दीवाने 'वली'
३३	,, ८	सदाचारी	सदाचार
३६	नीचे से ८	पारमार्थिक	परमार्थिक
४४	ऊपर से ७	बनाऊगा	बनाऊंगा
४८	,, ३	मलोत्सर्ग	हतोत्साह
५६	नीचे से ११	लौडी	लौंडी
५६	नीचे से ५	करेंगे।	करेंगे"।

—:o:—